

शाहजहाँ

—द्विजेन्द्रलाल राय

न्थ-रत्नाकरका ३२ वाँ ग्रन्थ

शाहज

लिखनेमें बड़ी भारी कठिनाई यह है कि औ.

१८६७४९

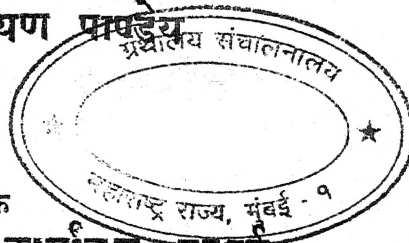
सुप्रसि नाटककार

स्वर्गीय द्विजेन्द्रलाल रायके

बंग का अनुवाद

अनुवाद-कर्त्ता

पण्डित रूपनारायण पाण्डेय



प्रकाशक

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय, बम्बई

प्रकाशक,
नाथूराम प्रेमी
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, गिरगाँव, बम्बई

नवाँ संशोधित संस्करण
फरवरी, १९४८
मूल्य डेढ़ रुपया

मुद्रक,
कन्हैयालाल शाह
ओरियण्ट प्रिंटिंग हाउस,
दादीशेट अग्यारी लेन, बम्बई

समालोचना

('साहित्य' में प्रकाशित श्री नवकृष्ण घोषके बंगला लेखका अनुवाद)

ऐतिहासिक नाटकोंके लिखनेमें बड़ी भारी कठिनाई यह है कि यदि इतिहासकी रक्षा की जाती है तो कल्पनाको दबाना पड़ता है और यदि कल्पनाकी गतिमें रुकावट डाली जाती है तो नाटक अच्छा नहीं बनता। इसलिए किसी सुपरिचित ऐतिहासिक चरित्रका अवलम्बन करके श्रेष्ठ श्रेणीके नाटककी रचना करना बहुत ही कठिन कार्य है। एक बात और भी है और वह यह कि नाटकका प्रधान पात्र पवित्र और उन्नत होना चाहिए। इसके बिना उच्च श्रेणीका नाटक नहीं बन सकता; क्योंकि, कवि अपने हृदयकी बात,—अन्तर्जीवनका गंभीर तत्त्व,—नाटकके प्रधान पात्रके ही कंठसे कहलवाता है। यदि प्रधान पात्र अपवित्र या अवनत हो, तो कविको ऐसा करनेका अवसर नहीं मिलता। अपात्रके द्वारा यदि वह अपने हृदयकी बात कहलवाता है, तो वह अस्वाभाविक जान पड़ती है। कविवर शेक्सपियरने अपने मनोराज्यकी उच्च श्रेणीकी बातों और मानव-हृदयके गंभीर तत्त्वोंको भावुक हेम्लेट और पागल लियरके मुँहसे प्रकट किया है; परन्तु, कृतघ्न और घातक मेकबेथके मुँहसे वे ऐसी बातें नहीं कहला सके। जीवनकी जिस नीची और पापपूर्ण सीढ़ीपर मेकबेथ खड़ा था, उसपरसे मनकी पवित्र और उन्नत सीढ़ीपर उठाकर रखनेकी शक्ति उनमें भी नहीं थी। नाटक-भरमें केवल तीन ही बार मेकबेथके शोकसंतप्त मस्तिष्कमेंसे कविने उसके बिना जाने अपने मनकी बातें कहला पाई हैं। इसी कारण, जब मेकबेथ नाटककी लियर और हेम्लेटके साथ तुलना की जाती है, तब वह उच्च श्रेणीके नाटककी दृष्टिसे निकृष्ट जान पड़ता है। यह बात दूसरी है कि स्टेजपर खेले जानेकी दृष्टिसे वह श्रेष्ठ नाटक है।

शाहजहाँ प्रसिद्ध ऐतिहासिक पुरुष है। उसकी जीवनी महत्, पवित्र या आदर्श चरित्रके अनुकूल नहीं है, इस बातको द्विजेन्द्र बाबू जानते थे और इसीलिए उन्होंने शाहजहाँ नाटकको उच्च श्रेणीके श्रव्य काव्यके रूपमें नहीं,

किन्तु, दृश्य नाटकके रूपमें स्टेजपर खेले जानेके लिए लिखा है। सबसे पहले यह देखना चाहिए कि इस नाटकके पात्रोंको स्टेजपर अभिनय करनेके योग्य बनानेमें कवि इतिहासकी रुकावटोंको कहाँ तक हटा सका है।

नाट्यकारने शाहजहाँको वृद्ध, सन्तानस्नेह-प्रवण, कोमलप्राण, शांतिप्रयासी और क्षमाशीलके रूपमें चित्रित किया है। प्रत्येक दृश्यमें शाहजहाँके चरित्र-का विकास होता गया है। उसकी छवि सर्वत्र ही उज्ज्वल और सुन्दर है। उससे जब अपने विद्रोही पुत्रोंका शासन करनेके लिए अनुरोध किया जाता तब वह कहता है, "मेरे बेटी-बेटे बे-माँके हैं। उन्हें किस जीसे सजा दूँ, जहानारा! वह देख, उस संगमरमरके बने हुए (लंबी साँस लेना) उस ताज-महलकी तरफ़ देख और फिर उन्हें सजा देनेके लिए कह।" यहाँ उसके संतान-स्नेहकी गंभीरता देखकर मुग्ध हो जाना पड़ता है। उसकी प्यारी बेगम मुम-ताजके प्रति जो उसकी जीवन-व्यापिनी ममता थी, उसका स्मरण हो आता है, ताजमहलके मंत्रपूत उच्चारणसे उसके अक्षय और अपूर्व स्थापत्य कीर्ति-कलाप-की याद आ जाती है। और आगरेके क़िलेके अतुल शोभामय द्वारपरसे यमुनातटपरके ताजमहलका दृश्य देखते देखते उसके सदाके लिए सो जानेकी कवित्वमय मृत्यु-कहानी भी हृदयपटपर लिख जाती है। जब औरंगज़ेबकी आज्ञासे अपने क़ैद हो जानेकी बात सुनकर शाहजहाँ निष्फल क्रोधसे गरज उठता है, कहता है कि "तुमने सोचा है, यह शेर बूढ़ा है इसलिए तुम्हारी लातें सह लेगा! मैं बूढ़ा शाहजहाँ हूँ सही, लेकिन मैं शाहजहाँ हूँ! ऐ कौन है? ले आओ मेरा ज़िरहबख़्तर और तलवार!" तब उसके अहमदनगरादिके विजय करनेकी वीर कहानियाँ स्मरण हो आती हैं और उस पंजरबद्ध, जराजर्जर केसरीकी व्यर्थ गर्जनासे हृदय चंचल हो उठता है। जिस समय दाराके परा-जयकी और औरंगज़ेबके दिल्लीमें मयूरसिंहासनपर आसीन होनेकी खबर सुन-कर शाहजहाँ एक बार क़िलेके बाहर जाकर प्रजाके सामने पहुँचनेके लिए व्यग्र हो उठता है, उस समय उसके सुशासनकी, प्रजावात्सल्यकी, न्याय-विचारकी और राज्यमें चोरों-डकैतोंसे रहित अभूतपूर्व शांति-स्थापन करनेकी बातें याद आ जाती हैं और उसकी दुरवस्थासे मन करुणार्द्र हो जाता है। दाराकी हत्या रोकनेके लिए जब वह आगरेके क़िलेके ऊपरसे कूद पड़नेके लिए तैयार होता है और फिर दाराकी हत्याके समाचारसे उन्मत्तवत् होकर क्षमावती धरतीपर शापकी वर्षा करता है, उस समय उसके दुर्बल शोकका अनुमान करके हृदय

व्याकुल हो उठता है। और अन्तमें जब अपने सारे दुःखोंके कारणभूत औरंगजेबको उदास, मलीन और दुर्बल-देह देखकर वह उसके सारे अक्षम्य अपराधोंको क्षमा कर देता है, तब उसके हृदयमें संतान-स्नेहकी प्रबलता कितनी अधिक है, यह देखकर मन विस्मयाभिभूत हो जाता है।

पर जब इतिहासकी बात सोची जाती है, तब शाहजहाँकी यह सुन्दर छवि मलिन हो जाती है। पितासे द्रोह करना और सिंहासन प्राप्त करनेके लिए भाइयोंसे युद्ध करना, यह मुगल बादशाहोंकी परम्परागत रीति थी। इसमें नूतनता कुछ भी नहीं थी। स्वयं शाहजहाँने ही अपने पिताके विरुद्ध दो बार शस्त्र धारण किया था और उसके पिता जहाँगीरने तो मौतकी सेजपर सोये हुए बादशाह अकबरके विरुद्ध विद्रोहका झंडा खड़ा किया था। मेरी मृत्युके बाद सिंहासनके लिए पुत्रोंमें झगड़ा अवश्य होगा, यह जानकर ही तो शाहजहाँने दाराको अपने पास रख लिया और शेष तीन पुत्रोंको सूबेदार या राजप्रतिनिधि बनाकर अन्य प्रांतोंमें भेज दिया था। इन सब बातोंपर जब विचार किया जाता है, तब पुत्रोंकी बगावतका हाल सुनकर शाहजहाँके मुँहसे "देखूँ, सोचता हूँ,—मगर ऐसा कभी सोचनेकी आदत नहीं है।" आदि वाक्य असंगत और बनावटी जान पड़ते हैं। विद्रोही पुत्रोंको दमन करनेका अनुरोध किये जानेपर जब वह कहता है—"खुदा, बापोंको यह मोहब्बतसे भरा हुआ दिल क्यों दिया था? उनके दिलों और जिगरोंको लोहेका क्यों नहीं बनाया?" तब यह सोचकर उसपर दया हो आती है कि उसे यह ज्ञान जवानीमें क्यों नहीं हुआ। जब इतिहास कहता है कि उसने अपने बड़े भाईके पुत्रको चतुराईसे प्रतारित करके और दूसरे भाइयों तथा भतीजोंमेंसे जो जो उसके सिंहासनके प्रतिद्वन्द्वी हो सकते थे, उन सबको ही बिना सोचे-विचारे मारकर अपने कुटुम्बियोंके रक्तसे रँगे हुए हाथोंमें दिल्लीका राजदंड धारण किया था, तब उसके मुँहसे "या खुदा, मैंने ऐसा कौन-सा गुनाह किया है," यह उक्ति जगदीश्वरके सामने सर्वथा निर्लज्जतापूर्ण जान पड़ती है। मेनुसी (Signor Manouici) की बात यदि सत्य हो, तो शाहजहाँकी निष्ठुरताको बहुत ही आश्चर्यजनक कहना होगा। मेनुसी लिखता है कि शाहजहाँने अपने भाई शहरयार और उसके दो निरीह पुत्रोंको एक कोठरीमें कैद करके उसका द्वार बंद करा दिया जिससे कि वे तीनों कई दिनोंमें भूखसे छटपटाकर मर गये। मेनुसी शाहजहाँके व्यभिचारकी, गुप्त हत्याओंकी और इंद्रिय-सेवाकी जो सब बातें लिख गया है, यदि उनका थोड़ा-सा अंश भी सच हो तो यह स्वीकार करना पड़ेगा कि उसे

बुढ़ापेमें जो पुत्र-शोक सहन करना पड़ा, कैदका दुख भोगना पड़ा, सो सब उसके पापोंका उचित प्रतिकार था।

शाहजहाँके इतिहासके साथ लियरकी कहानीका कुछ सादृश्य है। दोनों ही राजा हैं, जराग्रस्त हैं, राजभ्रष्ट हैं और संतानोंके निष्ठुर व्यवहारसे दुखी हैं। द्विजेन्द्र बाबूने शाहजहाँको लियरकी ही दशामें लाकर खड़ा किया है और शाहजहाँका हृदय भी लियरके समान कोमल और सहज ही विक्षुब्ध होनेवाला बनाया है। परन्तु लियरके आदर्शपर शाहजहाँ नहीं पहुँच पाया। इसका कारण नाट्यकारकी चतुराईकी कमी या असामर्थ्य नहीं; किन्तु, इतिहास है। यह सच है कि पुत्रोंके, विशेषतः औरंगज़ेबके दुर्व्यवहारसे और दाराकी हत्यासे शाहजहाँके हृदयपर गहरी चोट लगी थी; परन्तु, धीरे धीरे समय बीत जानेपर उसके हृदयका वह घाव सूख गया था और वह प्रकृतिस्थ हो गया था। उसकी हालत ज्योंकी त्यों हो गई थी। किन्तु कृतघ्न कन्याओंके पैशाचिक आचरणसे लियरका हृदय जो टूट गया, सो उसमें फिर जोड़ नहीं लगा और कार्डेलियाकी मृत्युकी अंतिम चोटसे तो वह सर्वथा चूर-चूर हो गया। लियर नाटकके पहले तीन अंकोंके बड़े बड़े दृश्य क्षोभ, रोष, विस्मय, अनुताप, करुणा आदिकी हलचलसे मनको उथल-पुथल कर डालते हैं; परंतु शाहजहाँ नाटकमें इस प्रकारके किसी दृश्यका समावेश नहीं हो सका है। मुहम्मदको छोड़कर विद्रोही पुत्रोंके पक्षके अन्य किसी पात्रके साथ शाहजहाँका साक्षात् नहीं हुआ और मुहम्मदने भी सिवा यह कहनेके कि 'अब्बाके हुक्मसे आप क़ैद हैं' शाहजहाँसे न तो कोई बुरा शब्द कहा है और न निष्ठुर व्यवहार ही किया। अंतिम दृश्यमें नाट्यकारने शाहजहाँके साथ औरंगज़ेबका जो काल्पनिक साक्षात् कराया है, वह विद्रोह, हत्या आदिकी घटनाओंके बहुत वर्ष पीछेका है। उस समय शाहजहाँके नामका ताप शीतल हो गया था। लियरने कार्डेलियाको वंचित करके अपनी दोनों अत्याचारिणी कन्याओंको सर्वस्व दान कर दिया था, किन्तु शाहजहाँने दाराको वंचित करके औरंगज़ेबको सर्वस्वदान नहीं किया था। अतएव औरंगज़ेबके ऊपर आदान-प्रदान संबंधी कृतघ्नताका दोष नहीं आया। औरंगज़ेबने रिगन और गनेरियलके समान अपने पिताके ऊपर न तो मर्मभेदी वाग्बाणोंकी वर्षा की और न उसे कोई कष्ट दिया। इसके सिवा शेक्सपियरने गनेरियल और रिगनके काल्पनिक चरित्रकी कालिमा बहुत ही गहरी करके दिखलाई है परन्तु द्विजेन्द्रलालने औरंगज़ेबके ऐतिहा-

सिक चरित्रके ऊपर इच्छानुसार उस प्रकारकी स्याही नहीं पोती है। यदि वे ऐसा करते तो इतिहासका अपलाप होता और औरंगजेबके वास्तविक चरित्रके प्रति अविचार भी किया जाता। किन्तु स्याही न पोतनेका फल हुआ है यह कि उत्पीड़ितके प्रति उदासीनता उत्पन्न न होकर सहानुभूतिका उद्रेक हुआ है और उत्पीडित शाहजहाँके कष्टकी तीव्रता घट गई है। शाहजहाँको भी नाट्यकारने लियरके समान बाह्य जगत्की आँधीके साथ अन्तरकी झंझा-वायुके प्रकोपको मिलानेका अवसर दिया है। किन्तु, दोनोंमें अन्तर यह है कि रातके गहरे अँधेरेमें आश्रयहीन और पथभ्रष्ट हुए लियरके मस्तकपरसे तो आँधी भर निकल गई थी पर शाहजहाँने तो आगरेके महलकी संगमरमरकी जालियोंमेंसे यमुनाके ऊपर जो आँधी-पानीका खेल हो रहा था उसे देखा था। दोनोंके वंशगत और शिक्षागत चरित्रमें भी एक-सा अन्तर है। ऐसी दशामें नाट्यकारके हाथमें कोई उपाय नहीं था। इतिहासने उनकी काव्य-कल्पनाको सैकड़ों रस्सियोंसे बाँध रक्खा था, अतः उसे ऊर्ध्वगामी नहीं होने दिया,—लियरके आदर्शपर शाहजहाँ नहीं पहुँच पाया।

लियर नाटकमें अकेले लियरने ही प्रधानतः कष्ट पाया है; परन्तु शाहजहाँ नाटकका उत्पीडन कई भागोंमें विभक्त हो गया है। जान पड़ता है, दारा-ने ही उसका सबसे अधिक क्लेश भोगा है और उसीके भाग्यविपर्ययपर सबसे अधिक चित्तवृत्ति और सहानुभूति आकर्षित होती है। दारा धर्ममतमें उदार, अकपट और वीर था; किन्तु कूटबुद्धि और कर्मपटुतामें औरंगज़ेबके साथ उसकी कोई तुलना नहीं हो सकती थी। इतिहासके इस चित्रने नाटकमें भी स्थान पाया है। दाराके भाग्यके उलट-फेरकी छवि नाट्यकारने बहुत ही निपुणताके साथ उज्ज्वल-रूपमें अंकित की है। दाराको भी नाटककारने पत्नीगत प्राण और सन्तान-स्नेह-विगलित-हृदय बनाया है। मरुभूमिमें स्त्री-पुत्रोंके असह्य कष्ट देखकर जब वह उन्मत्तप्राय हो जाता है और अपनी प्यारी स्त्रीकी हत्या करनेको तैयार होता है, उस समयका चित्र भीषण होनेपर भी उसके चरित्रसे ठीक मेल खाता है। इतिहास कहता है कि वह अधीर और असहिष्णु था। नादिराकी मृत्यु जिस कमरेमें हुई थी, उस कमरेमें नीच जिहनखाँके सामने सिपरको रोते देखकर दारा जब रूखे स्वरसे 'सिपर!' कहकर उस बालककी दुर्बलता स्मरण करा देता है, तब दाराके आत्मसम्मान-ज्ञानका बहुत ही सुन्दर चित्र खिंच जाता है।

दारा उत्पीडित और औरंगज़ेब उत्पीडक है। दाराके दुःखसे सहानु-भूतिके उद्रेकके साथ साथ औरंगज़ेबपर घृणा होना स्वाभाविक है। किन्तु नाटकमें औरंगजेबका चरित्र जिस रूपमें चित्रित किया गया है, उससे उक्त घृणा जितनी चाहिए उतनी नहीं बढ़ती। दाराको मृत्युदण्ड देते समय इत-स्ततः करना; दाराकी मृत्युपर दुःख प्रकट करना और जिहनखाँके मरनेकी बात सुनकर संतोष प्रकाशित करना, ये सब घटनायें इतिहाससंगत हैं, या नहीं यह दूसरी बात है; परन्तु, नाटकमें वे औरंगजेबकी आंतरिक अनु-भूतिके रूपमें वर्णित हुई हैं और इसके फलसे नाटकीय सौन्दर्यकी अवश्य ही कुछ क्षति हुई है। उधर, नाट्यकारने दाराके चरित्रके दोषोंको प्रच्छन्न रखकर उसे दर्शकों और पाठकोंकी सहानुभूति प्राप्त करा दी है। दारा दा-म्भिक था, वह बादशाहका प्रतिनिधि बन गया था, इस कारण उसकी उद्ध-तता बढ़ गई थी। वह प्रतिवादको जरा भी सहन नहीं कर सकता था और अमीर उमराका बिना कारण अपमान किया करता था। मेनुसी लिखता है दारा अपने एक खरीदे हुए गुलाम 'अरब खाँ' के साथ उन लोगोंकी तुलना किया करता था और उनका मजाक उड़ाया करता था। संगीत-कलानुरागी अम्बरनरेश जयसिंहका वह 'उस्तादजी' कह कहकर उपहास किया करता था। वह क्रिश्चियन उपपत्नियोंपर बहुत ही अनुरक्त था और इस विषयमें बदनाम हो गया था कि उसने शाहजहाँके वर्द्धित-प्रताप मन्त्री सादुल्लाखाँ-को विष देकर मार डाला। इन्हीं सब कारणोंसे वह विपत्तिके समय अमीर उमराकी सहायता नहीं प्राप्त कर सका।

नाट्यकारने औरंगजेबका जो चित्र खींचा है; वह एक बड़े भारी पुरुषार्थ-का चित्र है। नाट्यकारने बहुत ही सावधानी और आंतरिक सहानुभूतिसे इस चरित्रको परिस्फुट किया है और यह बात प्रत्येक रसज्ञको स्वीकार करनी होगी कि उनका यह प्रयत्न सर्वतोभावसे सफल हुआ है। तीक्ष्णबुद्धि, दूर-दर्शिता, कार्यतत्परता, विपत्तिमें धैर्य, आत्म-दमनका सामर्थ्य आदि औरं-गज़ेबके गुण उसके प्रति स्वयं ही श्रद्धाको आकर्षित कर लेते हैं। औरंगजेब-के महान् चरित्रके साथ तुलना करनेसे उसके भाइयोंका चरित्र बिल्कुल ही तुच्छ जान पड़ता है। उसकी राजनीतिक बुद्धिके साथ प्रतिद्वन्द्विता करनेमें वे बच्चों के सामान सर्वथा असमर्थ थे, यह बात नाटकमें स्पष्टतासे दिखलाई देती है। अन्यान्य पात्रोंके समान औरंगजेबके चरित्रके दोषोंको भी नाट्यकारने, जहाँ

तक बना है, अन्तरालमें ही रक्खा है। किन्तु, दोष इतने गुरुतर हैं कि सैकड़ों चेष्टाओंसे भी उनकी कालिमा नहीं धुल सकती। यह बात नहीं है कि औरंगज़ेब केवल शठके प्रति शाठ्य करता था। नहीं, वह अपनी कार्य-सिद्धिके लिए आवश्यकता पड़नेपर जो शठ नहीं है उसके भी साथ शठता या धूर्तता करता था। यह बात नाटकमें भी प्रकाशित हुई है। जहानाराके उकसानेसे मुरादने जिस समय उसे बंदी बनानेका षड्यन्त्र रचा था, उससे बहुत पहले उसने मुरादको 'सम्राट्' कहकर और अपने आपको 'मक्का जानेवाला फ़क़ीर' बतलाकर उसको प्रतारित किया था। वह निष्ठुर था, उसका आभास भी नाटकमें मौजूद है। उसने दारा और सिपरको एक बहुत दुबले पतले हड्डियाँ निकले हुए हाथीकी पीठपर मैले कपड़ोंकी पोशाक पहनवाकर दिल्लीके चारों तरफ घुमाया था। वह बड़ी भीषण निष्ठुरता थी। बर्नियर लिखता है कि दाराको मृत्युका दंड देनेके समय औरंगज़ेबने जो दुःख प्रकाशित किया था, वह उसकी कूटबुद्धिका केवल एक अभिनय था। मेनुसी लिखता है कि जब उसे दाराका कटा हुआ सिर मिला, तब वह हर्षसे फूल गया, तलवारकी नोकसे उसने उसकी एक आँख निकाल डाली, दाराकी एक आँखमें काले रंगका जो एक दाग था उसकी परीक्षा की, और फिर शाहजहाँके भोजनके समय उसने उस सिरको एक बक्समें रखकर और वस्त्रसे ढककर भेंट-स्वरूप भेज दिया। औरंगज़ेबके चरित्रके काले हिस्सेको प्रकट न करके नाटककारने अच्छा ही किया है। और और चरित्रोंमें भी उन्होंने गुणोंपर ही प्रकाश डाला है। इस विषयमें औरंगज़ेबके चरित्रके प्रति सहानुभूति होनेके कारण कोई खास पक्षपात नहीं किया गया है। उन्होंने औरंगज़ेबके जटिल चरित्रके परस्पर-विरुद्ध भावोंका स्वभावोचित रूपमें सुन्दर समन्वय कर दिया है। औरंगज़ेबने जिस राजनीतिक प्रतिभाके बलसे भारतका साम्राज्य हस्तगत किया था वह अच्छी तरह स्पष्टतासे, और मनकी जिस संकीर्णताके दोषोंसे मुगल-साम्राज्यवादके नष्ट होनेकी व्यवस्था की थी, वह एक दूरवर्ती तारेकी भाँति कुछ अस्पष्टतासे, नाटकमें झलकती है।

मुरादको नाट्यकारने साहसी, वीर, सुराप्रिय और वेश्यासक्तके रूपमें चित्रित किया है। इतिहासकार भी यही कहता है। मुराद पेटू और शिकारी प्रसिद्ध था और यदि वह सम्राट् होता तो मुसलमान धर्मकी कोई हानि न होती; क्योंकि वह मुसलमान धर्ममें अन्धश्रद्धा रखता था, यह बात भी इति-

हासमें लिखी है। वह औरंगज़ेबसे ठगा गया था, अतएव यह निश्चित है कि उसकी बुद्धि औरंगज़ेबके समान तो नहीं थी। नाट्यकारने अपने चित्रमें मुराद की निर्बुद्धिताका रंग कुछ गहरा भरा है, पर इससे नाटकके सौन्दर्यमें कोई क्षति-वृद्धि नहीं हुई।

शुजा साहसी और युद्धप्रेमी था और युद्धक्षेत्रकी विभीषिकाके भीतर भी वह नृत्य-गीतमें मस्त रहता था। यह बात इतिहाससे मिलती है। ऐतिहासिकोंका मत है कि वह घोर विलासी और अतिशय व्यसनासक्त था; परन्तु नाट्यकारने उसे पत्नीगतप्राण, सरलचित्त, उन्नतमना और भावुकके रूपमें चित्रित किया है।

मुहम्मद पहले पिताका आज्ञानुवर्ती था, पीछे वंश-परम्पराकी प्रथाके अनुसार वह भी विद्रोही हो गया। शाहजहाँने जब उसे बादशाह बना देनेका लोभ दिखलाया तब उसने साफ शब्दोंमें कह दिया कि मुझे राज्य नहीं चाहिए। यह ऐतिहासिक घटना है। किन्तु, उसके इस स्वार्थ-त्यागका कारण पिताकी भक्ति थी अथवा पिताके क्रोधकी भीति, इसे कोई नहीं जानता। उसमें यह समझनेकी शक्ति अवश्य ही थी कि जरा-जर्जर और मति-भ्रान्त शाहजहाँ औरंगज़ेबकी विजयिनी तलवारसे उसकी रक्षा करनेमें सर्वथा असमर्थ है। क्योंकि वह औरंगज़ेबका पुत्र था। नाट्यकारने मुहम्मदके चरित्रके इस स्वार्थत्यागका और पीछे पिताके परित्यागकर देनेका जो सुन्दर चित्र अंकित किया है, उस से मुहम्मदके चरित्रका उत्कर्ष तो हुआ ही है, साथ ही नाटकके साधारण सौन्दर्यकी भी वृद्धि बहुत हुई है।

सुलेमान वीर और सुबुद्धि था। मेनुसीने लिखा है कि शाहजहाँ दाराकी अपेक्षा सुलेमानकी बुद्धि और शक्तिपर अधिक श्रद्धा रखता था। उसके चरित्रको आदर्श चरित्रमें परिणत करके नाट्यकारने इतिहासकी अमर्यादा नहीं की है।

शाहजहाँ नाटकके स्त्रीपात्र उच्च श्रेणीके हैं। नादिराकी कोमलता, सहिष्णुता और पतिभक्ति हिन्दू-कुल-लक्ष्मियोंके लिए भी आदर्शरूप है। महामायाकी बातें उस राजपूत कुलके सर्वथा उपयुक्त हैं जिसकी कि स्त्रियाँ पति और पुत्रको जन्मभूमिकी रक्षाके लिए भेजकर हँसती हुई जौहर व्रतका पालन करती थीं। पितामें भक्ति रखनेवाली तेजस्विनी जोहरतको बदला

लेनेवाली और शाप देनेवाली बनाकर, नाट्यकारने इतिहासके साथ चरित्रके सामंजस्यकी रक्षा की है। औरंगजेबने जब अपने एक पुत्रके साथ जोहरतके विवाहका प्रस्ताव किया, तब जोहरत अपने साथ एक छुरी दिन-रात रखने लगी। वह कहती थी कि पितृघातीके पुत्रके साथ मेरा विवाह हो, इसके पहले ही मैं यह छुरी अपनी छातीमें घुसेड़ लूँगी! जहानारा विदुषी, तीक्ष्णबुद्धि-शालिनी और अलौकिक रूपवती स्त्री थी। शाहजहाँके शेष जीवनका राज-कार्य उसीके इशारेसे संपादित होता था। उसने अपनी इच्छासे अपने बूढ़े पिताकी शुश्रूषाके लिए उसके साथ कारागृहमें रहना स्वीकार किया था। उसकी इच्छानुसार उसकी समाधि खुले मैदानमें बनाई गई थी और वह पाषाण-सौध-से नहीं, किन्तु हरित दूर्वादलोंसे आच्छादित की गई थी। इस इतिहास-विश्रुत स्त्रीके चरित्रका नाट्यकारने जैसा चाहिए वैसा ही चित्र अंकित किया है। जहानारा मानो शाहजहाँको विरक्तिमें बुद्धि और दुःखमें सान्त्वना देनेके लिए, दारा और नादिराको कर्त्तव्यका स्मरण करा देनेके लिए, औरंग-जेबको उसके पापोंकी गम्भीरता और आत्मवंचनाको अच्छी तरह साफ-साफ दिखलानेके लिए बादशाहके अन्तःपुरमें आविर्भूत हुई थी। जहानाराके चरित्रके इस शुभ्र सौन्दर्यको बचाये रख कर द्विजेन्द्रलाल रायने नाट्यकारके महत्वकी रक्षा की है।

पियाराका चरित्र काल्पनिक है। शुजाके दूसरी पत्नी भी रही होगी; पर वह कोई इतिहासप्रसिद्ध व्यक्ति नहीं है और शुजाकी जो पत्नी ईरानके राजाकी कन्या थी वही यह पियारा है,इसका नाटकमें कोई उल्लेख नहीं है। अतएव पियाराके चरित्रको इच्छानुरूप चित्रित करनेमें कोई बाधा नहीं है। कविने उसे अपने मनके अनुसार ही गढ़ा है। पियारा परिहासरसिका और पतिप्राणा स्त्रीका एक अपूर्व चित्र है। वह हँसी मजाकका फव्वारा और विमलानन्दकी स्फटिक-धारा है। वह पतिकी विरहमें सहायक, उलझनमें मन्त्री और वीरतामें बल बन जाती है। बड़े भारी दुर्दिनोंमें भी वह छाया-के समान पतिके साथ रहनेवाली और युद्धमें भी,—यमराजके निमन्त्रणमें भी पतिके साथ जानेवाली है। पियाराकी हास्यप्रियता एक प्रकारकी करुण-कथा है। 'उसके मुँहमें हँसी और आँखोंमें आँसू' हैं। स्वामीकी आसन्न-विपत्तिकी चिन्तामें उसका हृदय रुधिराक्त हो जाता है; परन्तु, वह चाहती है मनके

दुःखको मनहीमें दबा कर हँसीकी स्निग्ध धारामें पतिकी दुश्चिन्ताग्निको बुझा देना, कौतुककी तरंगमें युद्धकी इच्छाको बहा देना और हंसीसे चमकते हुए नेत्रोंकी बिजलीके प्रकाशमें पतिका अँधेरेसे घिरा हुआ मार्ग प्रकाशित कर देना। बुद्धिमती पियाराके हास्यप्रकाशमें शुजाकी सरलता विकसित हो उठी है।

पियाराकी परिहासरसिकतामें एक त्रुटि भी है। उस दुःसमय-में जब कि भाई-भाईमें युद्ध हो रहा था, समदुःखभागिनी स्त्रीका स्वामीके साथ परिहास करना कलाविरुद्ध और सम्पर्क-विरुद्ध मालूम होता है और वह पियाराके सुन्दर चरित्रमें मानों एक हृदयहीनताकी छाया डाल देता है। तीक्ष्णदृष्टि नाट्यकारने स्वयं ही इस त्रुटिको देख लिया है और इसीलिए उन्होंने पियाराकी स्वगतोक्तिमें उसकी पतिके साथ की सहज बातचीतमें और शुजाके 'जो मेरे लिए जीने मरनेका सवाल है उसीको लेकर तुम दिल्लगी करती हो' इस अनुचित व्यवहारको एक कफ़ियत दी है। वह परिहास मौखिक था, अन्तरंगसे निकला हुआ नहीं।

परंतु, दिलदारके परिहासमें इस प्रकारका कोई दोष नहीं आने पाया है। क्योंकि उसका बादशाहके वंशसे कोई सम्बन्ध नहीं था और उसका व्यवसाय ही दिल्लगी करनेका था। दिलदार एक छद्मवेशी दार्शनिक या दानिशमन्द बताया गया है; परन्तु वह कोई ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं है, स्वयं नाट्यकारकी सृष्टि है। लियरके जैसा फूल (**Fooll**) था वैसे ही मुरादके साथ दिलदार था। फूलने जिस तरह उसकी दुष्ट कन्याओंका कपट समझा देनेका प्रयत्न किया था, दिलदारने भी उसी तरह पितृद्रोहके महापापसे और औरंगजबके भयंकर छलसे बचानेकी चेष्टा की थी। परन्तु सुनता कौन है? लियरकी अक्ल ठिकाने नहीं थी और मुराद मूर्ख था। मुगल बादशाहोंके दरबार में विदूषकोंका रहना इतिहासप्रसिद्ध बात है। अतएव दिलदारका चरित्र इतिहाससंगत है और शाहजहाँ नाटकमें उस चरित्रकी सार्थकता स्पष्ट है। दिलदारकी व्यंगोक्तियाँ, पितृद्रोह, और भ्रातृहत्याके षड्यन्त्रोंसे कलु-षित हुई घटनाओंमेंसे मनको खींच कर उसे बीच-बीचमें विश्राम लेनेका अवकाश देती हैं और मुरादके चरित्रकी त्रुटियोंको अतिशय

स्पष्ट करके उसकी बोधहीन सरलतापर करुणाका उद्रेक कर देती है।

द्विजेन्द्रलाल हास्यरसके प्रवीण लेखक हैं। उनकी निर्मल परिहास-रसिकता एक हँसीकी लहर या आमोदका बुलबुला बनकर ही लीन नहीं हो जाती। उनकी हँसीमें एक तीव्र श्लेष है जो हृदय-पटपर एक गहरा चिह्न छोड़ जाता है। पियारा जब 'शेरकी ताकत दाँतोंमें, हाथीकी ताकत सूँड़में' आदि उपमाएँ देनेके पश्चात् कहती है कि 'हिन्दुस्तानियोंकी ताकत पीठमें' और जयसिंह जब कहते हैं कि 'मैं औरंगजेबकी अधीनता स्वीकार कर सकता हूँ मगर राजसिंहका प्रभुत्व नहीं मान सकता' और इसके उत्तरमें जब जसवन्तसिंह पूछते हैं कि 'क्यों राजासाहब, वे अपनी जातिके हैं, इसीलिए?' और पियारा जब कहती है कि 'मैं रिहाई नहीं चाहती। मुझे यह गुलामी ही पसन्द है।' तथा शुजा इसका उत्तर देता है 'छिः पियारा, तुम हिन्दुस्तानियोंसे भी नीच हो, * तब कौतुककी हँसी ओठोंमें ही मिल जाती है और प्राण मानो एक तेज कोड़ेकी मारसे काँप उठते हैं।

इतिहासकी बात छोड़ देनेपर हम देखते हैं कि शाहजहाँ नाटकके सभी प्रधान-अप्रधान चरित्र सुपरिस्फुटित हैं। परस्पर-विपरीत प्रकृतिके पात्रोंके चित्रोंको पास रखकर नाट्यकारने एककी सहायतासे दूसरेकी उज्ज्वलताको बढ़ाया है। जयसिंहकी विश्वासघातकताके सामने दिलेरखाँका धर्मज्ञान, जिहनखाँकी नीचताके सामने शाहनवाजकी उदारता और जसवन्तसिंहकी संकीर्णताके सामने महामायाके मनका महत्त्व, ये सब बातें काले परदेपर सफेद रंगके चित्रोंके समान उज्ज्वल हो उठी हैं।

मरुभूमिमें प्याससे व्याकुल स्त्री-पुत्रोंकी आसन्नमृत्युकी आशंकासे दाराका भगवानके निकट प्रार्थना करना, उसके थोड़ी ही देर पीछे गऊ चरानेवालोंका आना और जल पिलाना, जयसिंहसे सैन्य न पाकर दुखी हुए सुलेमानका दिलेरखाँसे सहायताकी भिक्षा माँगना और दिलेरखाँसे, जिसकी आशा नहीं थी, ऐसा तेजस्वी उत्तर मिलना कि 'उठिए शाहजादा साहब, राजा साहब न दें, मैं हुक्म देता हूँ। मैंने दाराका नमक खाया है। मुसलमानोंकी कौम

---

* हमारे पास षष्ठ संस्करणकी मूल पुस्तक है। उसमें यह वाक्य नहीं है। जान पड़ता है, यह पहलेके संस्करणोंमें रहा होगा, पीछे किसी कारणसे निकाल दिया गया है।

नमकहराम नहीं होती।' मुहम्मदका शाहजहाँका दिया हुआ मुकुट न लेकर चला जाना, युद्धमें पराजित होकर शुजा और जसवन्तके राज्यमें लौटनेपर महामायाका फाटक बंद करवा देना, पियाराका युद्धक्षेत्रमें जाकर मरनेका संकल्प प्रकट करना और अंतिम दृश्यमें शाहजहाँके पैरोंके नीचे राजमुकुट रखकर औरंगजेबका क्षमा-प्रार्थना करना, आदि ऐतिहासिक और काल्पनिक घटनाओंको नाट्य-कारने बड़ी चतुराईसे चित्रित किया है। जिस समय दारा सिपरसे बिदा लेता है, उस समयका चित्र बड़ा ही करुण और मर्मस्पर्शी है और जिस दृश्यमें औरंगजेब स्वपक्ष और विपक्ष सभीको वक्तृता और अभिनयके मोह-से मुग्ध करके उनके मुखोंसे 'जय औरंगज़ेबकी जय' ध्वनि उच्चारित करा देता है, वह दृश्य सचमुच जहानाराके शब्दोंमें 'खूब' है। उस वक्तृताको पढ़नेसे तीसरे रिचर्डका वाक्-चातुर्य याद आ जाता है जिसमें उसने लेडी एन और विधवा रानीको भुलानेका प्रयत्न किया था। बुढ़ापेमें शाहजहाँकी अधिक धन-रत्न-संग्रह करनेकी लालसा और उससे औरंगज़ेबकी शाही जवा-हिरात माँगनेकी ऐतिहासिक घटना शाहजहाँ और औरंगज़ेबके काल्पनिक साक्षात् होनेके पहले संभाषणमें अच्छी तरह स्फुटित हुई हैं। औरंगज़ेबने पुकारा, "अब्बा!" शाहजहाँने उत्तर दिया, "मेरे हीरे-मोती लेने आया है? न दूँगा। अभी सबको लोहेकी मुगरियोंसे चूर चूर कर डालूँगा।"

शाहजहाँ नाटकका एक प्रधान गुण यह है कि इसके प्रत्येक दृश्यमें प्रारम्भसे अन्ततक एक-सा कुतूहल बना रहता है। वक्तृतायें लम्बी होनेपर भी उनसे अरुचि नहीं होती। यह साधारण लेखन-शक्तिका काम नहीं है। द्विजेन्द्रबाबूने दाराकी हत्या रंगमंचपर दर्शकोंके सामने दीर्घकालव्यापी आडम्ब-रके साथ न कराके परदेके भीतर ही कर दी है, इसके लिए वे प्रत्येक नाट्य-रसिकके धन्यवाद-भाजन हैं।

इस नाटक-रचनामें कविने जो रचना-कौशल और कवित्व दिखलाया है, विस्तारभयसे उसका पूरा परिचय नहीं दिया जा सका। अब यहाँ मुझे थोड़ी बहुत त्रुटियाँ भी दिखलानी चाहिए, नहीं तो समालोचना एकांगी रह जायगी।

दाराकी मृत्यु ही 'शाहजहाँ' नाटककी सबसे बड़ी घटना है। दारा के जीवनके अन्तके साथ ही नाटककी अंतिम यवनिका गिरना उचित था।

विद्रोहके पहले शाहजहाँ जिस अवस्थामें था, उसी अवस्थामें आगरेके क़िले-के महलमें भी था, उसकी स्थितिमें कुछ विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। केवल दाराने ही सिंहासन और जीवन दोनोंको खोया। वास्तवमें उसके भाग्यके पलटनेपर ही नाटककी भित्ति स्थापित है, और उसकी मृत्यु-घटनासे मन इस प्रकार अवसादग्रस्त हो जाता है कि आगे एकसे एक उत्तम दृश्य आते हैं, तो भी उनके देखनेका धैर्य नहीं रह जाता।

नाटक-पात्रोंकी बात-चीतके ढंगमें यदि व्यक्तिगत विषमता होती, एककी बातोंके ढंगका दूसरेकी बातोंके ढंगसे अन्तर होता, तो नाटकका सौन्दर्य और भी बढ़ जाता। प्रायः सभी प्रधान पात्रोंके मुखोंसे कविने अपने हृदय-की बातें कहलाई हैं। शाहजहाँ, जहानारा, शुजा, पियारा, नादिरा, सुलेमान, दिलदार, ये सभी एक एक कवि हैं। यहाँतक कि तरुणी जोहरतके वाक्यमें भी कविजन-सुलभ भावुकता टपक रही है। पात्रोंकी बातोंमें यह जो वैचित्र्यहीनता है, उसकी ओर सबकी दृष्टि आकर्षित होती है।

अनुवादक
नाथूराम प्रेमी

नाटकके पात्र

पुरुष

शाहजहाँ	भारत-सम्राट्
दारा, शुजा, औरंगज़ेब, मुराद	शाहजहाँके लड़के
सुलेमान, सिपर	दाराके लड़के
मुहम्मद सुलतान	औरंगज़ेबका लड़का
जयसिंह	जयपुरके राजा
जसवन्तसिंह	जोधपुरके राजा
दिलदार	छद्मवेशी ज्ञानी दानिशमंद

स्त्री

जहानारा	शाहजहाँकी लड़की
नादिरा	दाराकी स्त्री
पियारा	शुजाकी स्त्री
जोहरतउन्निसा	दाराकी लड़की
महामाया	जसवन्तसिंहकी रानी

शाहजहाँ

पहला अङ्क

पहला दृश्य

स्थान—आगरेके किलेका शाही महल। **समय**—तीसरा पहर।

[शाहजहाँ पलंगपर आधे लेटे हुए, हथेलीपर गाल रक्खे, सिर झुकाए सोच रहे हैं और 'सटक' मुँहसे लगाये बीच बीचमें धुआँ छोड़ते जाते हैं। सामने शाहजादा दारा खड़े हैं।]

शाह०—दारा, हक़ीक़तमें यह बहुत बुरी खबर है।

दारा—शुजाने बंगालमें बगावतका झंडा ज़रूर खड़ा किया है, मगर अभी तक उसने अपने आपको बादशाह नहीं मशहूर किया। लेकिन, मुराद गुजरातमें बादशाह बन बैठा है और दक्खिनसे औरंगज़ेब भी उधर मिल गया है।

शाह०—औरंगज़ेब भी उससे मिल गया है!—देखूँ, सोचता हूँ,—मगर ऐसा कभी सोचा नहीं था। ऐसा सोचनेकी आदत ही नहीं है। इसीसे कुछ तै नहीं कर सकता। (तमाखू पीना)

दारा—मेरी समझमें नहीं आता कि क्या किया जाय।

शाह०—मेरी भी समझमें नहीं आता। (तमाखू पीना)

दारा—मैं इलाहाबादमें अपने लड़के सुलेमानको शुजाका मुकाबिला करनेके लिए हुक्म भेजता हूँ और उसे मदद देनेके लिए महाराज जयसिंह

और सिपहसालार दिलेरखाँको भेजता हूँ।

[शाहजहाँ नीचेको नज़र किये हुए तमाखू पीने लगते हैं।]

दारा—और मुरादका मुक़ाबिला करनेके लिए महाराजा जसवन्तसिंहको भेजता हूँ।

शाह०—भेजते हो!—अच्छी बात है। (फिर पहलेकी तरह तमाखू पीने लगते हैं।)

दारा—जहाँपनाह, आप कुछ फ़िक्र न करें। बाग़ियोंका सिर कुचलना मैं खूब जानता हूँ।

शाह०—नहीं दारा, मुझे इस बातकी फ़िक्र नहीं है। मुझे फ़िक्र सिर्फ़ इस बातकी है कि यह भाई-भाईकी लड़ाई है। (तमाखू पीना। थोड़ी देरमें एकाएक) नहीं दारा, कुछ ज़रूरत नहीं। मैं सबको समझा दूँगा। लड़ाई-भिड़ाईका कुछ काम नहीं। उन्हें बे-रोक-टोक शहरके भीतर आने दो।

[तेज़ीसे जहानाराका प्रवेश]

जहा०—कभी नहीं। अब्बा, यह नहीं हो सकता। रिआयाने बादशाहके सिरपर जो तलवार उठाई है, वह उसी रिआयाके सिरपर पड़नी चाहिए।

शाह०—जहानारा, यह क्या कहती हो? वे मेरे बेटे हैं।

जहा०—बेटे हों। इससे क्या? बेटा क्या बापकी मुहब्बतका ही हक़दार है? बेटेको बापकी ताबेदारी भी करनी चाहिए। अगर बेटा ठीक राहपर न चले, तो उसे सज़ा देना भी बापका फ़र्ज़ है।

शाह०—मेरा दिल तो एक ही हुकूमत जानता है, और वह सिर्फ़ मुहब्बतकी हुकूमत। मेरे बेटी-बेटे बे-माके हैं। उन्हें किस दिलसे सज़ा दूँ जहानारा! देख, उस संगमर्मरके बने हुए (लम्बी साँस लेकर) उस ताजमहलकी तरफ़ देख, फिर उन्हें सज़ा देनेके लिए कह।

जहा०—अब्बाजान, क्या आपको यह ज़ेबा देता है? क्या हिन्दुस्तानके बादशाह शाहजहाँको इसी कमज़ोरीपर फ़ख्र है? क्या बादशाहत भी कोई ज़नानखाना है! लड़कोंका खेल है!—एक बड़ी भारी सल्तनतका काम

आपके हाथमें है। रिआया अगर बागी हो, तो उसे क्या बेटा समझकर बादशाह मुआफ़ कर देंगे? मुहब्बत क्या फ़र्ज़का खयाल मिटा देगी?

शाह०—जहानारा, बहस न करो। इस बहसके लिए मेरे पास कोई जवाब नहीं। सिर्फ़ एक जवाब है, वही मुहब्बत। दारा, मैं सिर्फ़ यह सोच रहा हूँ कि इस झगड़ेमें चाहे जो हारे, मुझे दुख ही होगा। इस लड़ाईमें अगर तुम हारे तो तुम्हारा उदास और मुरझाया हुआ चेहरा देखना पड़ेगा; और अगर उन लोगोंने शिकस्त खाई तो मुझे उनके उदास और उतरे हुए चेहरेका खयाल होगा। दारा, लड़ाईकी ज़रूरत नहीं है। वे यहाँ आवें; मैं उन्हें समझा दूँगा।

दारा—अब्बाजान, अच्छी बात है।

जहा०—दारा, तुम क्या इसी तरह अपने बूढ़े बापकी जगह काम करोगे? अब्बा अगर सल्तनतका काम कर सकते, तो तुम्हारे हाथमें उसकी बागडोर न छोड़ देते। बेअदब शुजा, अपने आप बना हुआ बादशाह मुराद, और उसका मददगार औरंगज़ेब—ये सब बगावतका झंडा हाथमें लिये डंका बजाते आगरेमें घुसेंगे और तुम अपने बापके क़ायम-मुक़ाम होकर इस बातको खड़े खड़े हँसते हुए देखा करोगे?—खूब!

दारा—सच है अब्बा, ऐसा कहीं हो सकता है? मुझे जंगके लिए हुक्म दीजिए।

शाह०—या खुदा! बापको मुहब्बतसे भरा दिल क्यों दिया था? उसका दिल और जिगर लोहेका क्यों नहीं बनाया?—ओफ़!

दारा—अब्बाजान, यह न समझिएगा कि मैं तख्त चाहता हूँ। यह जंग इसके लिए नहीं है। मैं यह तख्त और ताज नहीं चाहता। मैंने दर्शन-शास्त्र और उपनिषदोंमें इससे कहीं बढ़कर सल्तनत पाई है। मैं सिर्फ़ आपके तख्त और ताजकी हिफ़ाजतके लिए यह जंग करना चाहता हूँ।

जहा०—तुम जाते हो इन्साफ़के तख्तको बचाने, बुरे कामकी सज़ा देने, इस मुल्ककी करोड़ों बेगुनाह भोली-भाली रिआयाको ज़ुल्मके पंजेसे छुड़ाने। अगर यह बगावतकी बुरी नीयत दबाई न गई, तो मुगलोंकी यह सल्तनत

कितने दिन तक ठहर सकती है ?

दारा—मैं वादा करता हूँ कि मैं उनमेंसे किसीकी जान न लूँगा और किसीको सताऊँगा भी नहीं। सिर्फ़ उन्हें क़ैद करके अब्बाजानकी खिदमतमें हाज़िर कर दूँगा। अगर आपका जी चाहे, तो उस वक़्त तक उन्हें मुआफ़ कर दीजिएगा। मैं चाहता हूँ, वे जान लें कि बादशाह सलामतके दिलमें मुहब्बत है, मगर वे कमज़ोर नहीं हैं।

शाह०—(खड़े होकर) अच्छा तो यही सही। उन्हें मालूम हो जाय कि शाहजहाँ सिर्फ़ बाप नहीं है, वह बादशाह भी है। जाओ दारा, लो यह पंजा। मैंने अपने अख्तियारात तुमको दे दिये। बाग़ियोंको सजा दो। (पंजा देना)

दारा—जो हुक्म अब्बाजान।

शाह०—लेकिन, यह सज़ा अकेले उन्हींके लिए नहीं है। यह सज़ा मेरे लिए भी है। बाप जब लड़केको सज़ा देता है, तब बेटा सोचता है कि बाप बड़ा बेदर्द है। वह यह नहीं जानता कि बाप जो बेत उठाता है, उसका आधा हिस्सा उसी बापकी पीठपर पड़ता है। (प्रस्थान)

जहा०—दारा, उन लोगोंके यों एकाएक बग़ावत करनेका सबब भी तुमने कुछ सोचा है ?

दारा—वे कहते हैं कि अब्बाके बीमार होनेकी खबर ग़लत है। बादशाह सलामत अब इस दुनियामें नहीं हैं और मैं उनके नामपर अपना ही हुक्म चला रहा हूँ।

जहा०—यही सही। इसमें ग़ैरमुनासिब क्या है ? तुम बादशाहके बड़े बेटे और होनहार वालिए-मुल्क हो।

दारा—वे हमारी बादशाहत कुबूल नहीं करना चाहते।

[सिपरके साथ नादिराका प्रवेश]

सिपर—अब्बा, क्या वे आपका हुक्म नहीं मानना चाहते ?

जहा०—भला देखो तो, उनकी इतनी हिम्मत हो गई ! (हास्य)

दारा—क्यों नादिरा, तुम सिर क्यों लटकाये हो ? कहो, तुम क्या कहना चाहती हो ?

नादिरा—सुनोगे ? मेरी एक बात मानोगे ?

दारा—नादिरा, मैंने कब तुम्हारा कहना नहीं माना ?

नादिरा—यह मैं जानती हूँ। इसीसे कुछ कहनेकी हिम्मत करती हूँ। कहती हूँ कि तुम यह जंग न ठानो, भाई-भाईकी लड़ाई न छेड़ो।

जहा०—यह कैसे हो सकता है ?

नादिरा—सुनो—

दारा—क्यों ? कहते कहते चुप क्यों हो गई ? तुम ऐसा करनेके लिए क्यों दे रही हो ?

नादिरा—कल रातको मैंने एक बहुत बुरा ख्वाब देखा है।

दारा—वह क्या ?

नादिरा—इस वक़्त मैं उसे बयान न कर सकूँगी। वह बड़ा ही खौफ़-है ! नहीं जी, इस लड़ाईकी ज़रूरत नहीं—

दारा—नादिरा, यह क्या ?

जहा०—नादिरा, तुम परवेज़की लड़की हो। एक मामूली जंगसे डर-आँसू बहा रही हो ? इस तरह घबराई हुई बातें कर रही हो ? ऐसी डरी हुई से देख रही हो ? ये बातें तुम्हें नहीं सोहतीं।

नादिरा—तुम नहीं जानतीं कि वह कैसा दिलको दहला देनेवाला ा था ! वह बड़ा ही खौफ़नाक था, बड़ा ही खौफ़नाक था !

जहा०—दारा, यह क्या ! तुम क्या सोचते हो ! इतने कमज़ोर हो ! क इतने बसमें हो ! बापका हुक्म लेकर अब क्या तुम्हें औरतका हुक्म पड़ेगा ? याद रक्खो दारा, चाहे कितनी ही मुश्किलात दरपेश हों, : सामने तुम्हारा फर्ज़ है। अब सोचनेके लिए वक्त नहीं है।

दारा—सच है नादिरा, इस लड़ाईका रुकना गैरमुमकिन है। मैं जाता सचमुच हुक्म देने जाता हूँ। (प्रस्थान)

नादिरा—हाय बहन, तुम इतनी संगदिल हो ! आओ सिपर।

(सिपरके साथ नादिराका प्रस्थान)

जहा०—इतना डर और इतनी घबराहट ! कुछ सबब नहीं जान पड़ता।

[शाहजहाँका फिर प्रवेश]

शाह०——जहानारा, दारा गया ?

जहा०——जी हाँ अब्बाजान !

शाह०——(थोड़ी देर चुप रहकर) जहानारा——

जहा०——अब्बाजान !

शाह०——क्या तू भी इस झगड़ेमें है ?

जहा०——किस झगड़ेमें ?

शाह०——इसी भाइयोंके झगड़ेमें ?

जहा०——नहीं अब्बा,——

शाह०——सुन जहानारा, यह बड़ा ही बेरहमी और बेमुरव्वतीका काम है। क्या करूँ, आज इसकी ज़रूरत ही आ पड़ी। कोई चारा नहीं। लेकिन तू इस झगड़ेमें न पड़। तेरा काम है——प्यार, रहम, अदब। इस गन्दे काममें तू न पड़। कमसे कम तू तो इस झगड़ेसे पाक रह।

दूसरा दृश्य

स्थान—नर्मदाके किनारे मुरादका पड़ाव

समय—रात

[दिलदार अकेला खड़ा है।]

दिल०——मुराद मुझे मसखरा मुसाहब समझता है। मेरी बातोंमें जो मज़ाक रहता है, उसे वह बेवक़ूफ़ नहीं समझ सकता। वह मेरी बातोंको बेतुकी समझकर हँसता है। मुरादको एक तरफ लड़ाईका खब्त है और दूसरी जानिब वह ऐयाशीमें डूबा हुआ है। समझ और तबीयत उसके लिए एक ऐसी जगह है जहाँ उसकी पहुँच ही नहीं।——वह देखो, इधर ही आ रहा है।

[मुरादका प्रवेश]

मुराद——दिलदार, जंगमें हमारी फतह हुई। खुशी मनाओ, ऐश करो।

बहुत जल्द अब्बाको तख्तसे उतारकर मैं खुद उसपर बैठूँगा। दिलदार, क्या सोचते हो?—तुम तो सिर हिला रहे हो?

दिल०—जहाँपनाह, मुझे आज एक नई बातका पता लगा है।

मुराद—क्या?—सुनें।

दिल०—मैंने सुना है कि खूनी जानवरोंमें यह दस्तूर है कि माँ-बाप अपने बच्चोंको खा डालते हैं।—है या नहीं?

मुराद—हाँ है तो। पर इससे मतलब?

दिल०—लेकिन यह दस्तूर शायद उनमें भी नहीं है कि बच्चे माँ-बापको खा जायँ?

मुराद—नहीं।

दिल०—इस दस्तूरको शायद खुदाने इन्सानमें ही जारी किया है। दोनों ही ढंग होने चाहिए न! यह उसकी अक्लकी खूबी है!

मुराद—अक्लकी खूबी है! हाः हाः हाः, बड़े मज़ेकी बात कही दिलदार।

दिल०—लेकिन, इन्सानकी अक्लके आगे खुदाकी अक्ल कोई चीज़ नहीं। इन्साननें खुदासे भी चाल चली है।

मुराद—वह कैसे!

दिल०—जहाँपनाह, उस रहीमने इन्सानको दाँत किसलिए दिये थे? ज़रूर चबानेके लिए दिये थे, बाहर निकालनेके लिए नहीं। लेकिन, इन्सान उन दाँतोंसे चबाता तो है ही, उनसे हँसता भी है। तब यही कहना पड़ेगा कि उसने खुदासे चाल चली है।

मुराद—यह तो कहना ही पड़ेगा।

दिल०—सिर्फ़ हँसते ही नहीं, बहुतसे लोग गोया हँसनेकी कोशिशमें लगे रहते हैं, यहाँ तक कि इसके लिए रुपये भी खर्च करते हैं।

मुराद—हाः हाः हा।

दिल०—खुदाने इन्सानको जीभ दी थी, साफ मालूम पड़ता है, जायका चखनेके लिए। लेकिन, आदमियोंने उससे बोलनेका काम लेकर तरह तरहकी जबानें पैदा कर दीं।—खुदाने नाक क्यों दी थी? साँस लेनेके लिए ही तो?

मुराद—हाँ, और शायद सूँघनेके लिए भी।

दिल०—लेकिन इन्सानने उसपर भी अपनी बहादुरी दिखाई है। वह उस नाकके ऊपर चश्मा लगाता है। इसमें कोई शक नहीं कि खुदाने नाक इसलिए नहीं बनाई थी।—बहुतसे लोगोंकी नाक सोतेमें खर्राटे भी लेती है।

मुराद—हाँ, खर्राटे लेती है। लेकिन मेरी नाक नहीं बजती।

दिल०—जी, जहाँपनाहकी नाक तो रातको नहीं, दिन-दहाड़े बजती है।

मुराद—अच्छा, इस बार जब बजे तब दिखा देना।

दिल०—जहाँपनाह, यह चीज़ तो ठीक उस खुदाकी तरह है जिसकी कोई सूरत नहीं है। ठीक ठीक दिखाई नहीं जा सकती। क्योंकि दिखा देनेकी हालत जब होती है, तब यह बजती ही नहीं।

मुराद—अच्छा दिलदार, खुदाने इन्सानको कान दिये हैं। इन्सानने उनके बारेमें क्या बहादुरी दिखाई है?

दिल०—लीजिए, इससे तो मैंने यह एक बड़े मतलबकी बात ईज़ाद कर डाली। कान पकड़नेसे दिमाग़ ठिकाने आ जाता है। लेकिन, शर्त यह है कि कानोंके पीछे एक दिमाग़ होना चाहिए। क्योंकि बहुतोंके दिमाग़ ही नहीं होता।

मुराद०—दिमाग़ नहीं होता! यह क्या! हाः हाः,—लो, वे भाई साहब आ रहे हैं। इस वक्त तुम जाओ।

दिल०—बहुत खूब। (प्रस्थान)

[दूसरी ओरसे औरंगज़ेबका प्रवेश]

मुराद—आओ भाई साहिब, मैं तुमको गलेसे लगा लूँ। तुम्हारी ही अक़्लकी बदौलत हमें फतह नसीब हुई है। (गले लगाता है।)

औरंग०—मेरी अक़्लसे, या तुम्हारी बहादुरी और दिलेरीसे? तुम्हारी जैसी बहादुरी बेशक कहीं देखनेको नहीं मिल सकती। ताज्जुब! तुम मौतसे बिल्कुल डरते ही नहीं!

मुराद—आसफखाँकी वह बात मुझे याद है कि जो लोग मौतसे डरते हैं, वे ज़िन्दा रहनेके मुस्तहक़ नहीं।—हाँ, यह तो कहो कि तुमने जसवन्त-

सिंहके चालीस हजार मुगल सिपाहियोंपर कौन-सा जादू डाल दिया था जो वे आखिर जसवन्तसिंहकी ही राजपूत फौजके आगे बंदूकें तानकर खड़े हो गये ? मुझे तो वह सब जादू-का तमाशा नज़र आया।

औरंग०—मैंने लड़ाई छिड़नेके पहले दिन कुछ सिपाहियोंको मुल्ला बनाकर इस पार भेज दिया था। वे मुगलोंकी फौजको यह कहकर भड़का गये कि काफिरकी मातहतीमें, काफिरके साथ, काफिर दाराकी तरफ़से लड़ना बड़ा बुरा काम है, और कुरानकी रूसे नाजायज है। बस, उन सिपाहियोंने इसीपर यकीन कर लिया।

मुराद—तुम्हारी चालें निराली और ताज्जुबमें डाल देनेवाली होती हैं।

औरंग०—भाईजान, सिर्फ़ एक तरकीबपर कायम रहनेसे कामयाबी हासिल नहीं हो सकती। जितनी तरकीबें हों, सबको सोचना चाहिए।

[मुहम्मदका प्रवेश]

औरंग०—मुहम्मद, क्या खबर है ?

मुहम्मद—अब्बाजान, महाराजा जसवन्तसिंह अपनी फौजके लिए घोड़ेपर चढ़े हमारे पड़ावके चारों तरफ़ चक्कर काट रहे हैं।—क्या हम लोग उनपर धावा कर दें ?

औरंग०—नहीं।

मुहम्मद—इसका मतलब क्या है ?

औरंग०—रजपूतीका घमंड ! इसी घमंडसे राजा जसवन्तको नीचा देखना पड़ेगा। मैं जिस वक्त फौज लेकर नर्मदाके किनारे पहुँचा था, उसी वक्त अगर वे मुझपर धावा कर देते तो मेरा बचना मुश्किल था।—मुझे ज़रूर शिकस्त खानी पड़ती; क्योंकि तब तक तुम आये ही नहीं थे और तुम्हारी फौज भी सफरकी थकी हुई थी। लेकिन मैंने सुना कि इस तरहका वार करना बहादुरीके खिलाफ समझकर ही राजा साहब तुम्हारे आ जानेकी राह देखते रहे। जब इतना घमंड है, तब उन्हें जरूर नीचा देखना पड़ेगा।

मुहम्मद—तो हम लोग उनसे छेड़छाड़ न करें ?

औरंग०—नहीं। हमारे पड़ावके चारों तरफ़ चक्कर काटनेसे अगर जस-

वंतसिंहको कुछ तसल्ली हो, तो वे एक नहीं, सौ बार चक्कर काटा करें। जाओ।

(मुहम्मदका प्रस्थान)

औरंग०—शाहजादेको लड़ाईका बड़ा शौक है।—मेरा यह लड़का सीधा, ऊँचे खयालोंवाला और निडर है। अच्छा मुराद, अब मैं जाता हूँ। तुम भी जाकर आराम करो। (प्रस्थान)

मुराद—अच्छी बात है।—दरबान, शराब और तवायफ!–(प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

स्थान—काशीमें शुजाकी फौजका पड़ाव

समय—रात

(शुजा और पियारा)

शुजा—पियारा, तुमने कुछ सुना? दाराका बेटा सुलेमान इस जंगमें मेरा मुकाबला करनेके लिए आया है।

पियारा—तुम्हारे बड़े भाई दाराका बेटा दिल्लीसे आया है? सच? तो ज़रूर अपने साथ दिल्लीके लड्डू लाया होगा। तुम जल्द उसके पास आदमी भेजो। मेरी तरफ ताक क्या रहे हो! आदमी भेजो—

शुजा—लड्डू कैसे! उसके साथ लड़ाई होगी—

पियारा—उसके साथ अगर बेलका मुरब्बा हो तो और भी अच्छा है। मुझे वह भी नापसन्द नहीं है। लेकिन, दिल्लीके लड्डू, सुना है, जो खाता वह पछताता है और जो नहीं खाता वह भी पछताता है। दोनों तरह जब पछताना ही है, तब बनिस्बत न खाकर पछतानेके खाकर पछताना ही अच्छा है,—जल्दी आदमी भेजो।

शुजा—तुम एक साँसमें इतना बक गईं कि मुझे जो कुछ कहना था, उसके कहनेकी तुमने फुरसत ही नहीं दी।

पियारा—तुम और क्या कहोगे! तुम तो सिर्फ जंग करोगे।

शुजा—और जो कुछ कहना होगा, वह शायद तुम कहोगी?

पियारा—इसमें शक क्या है ! हम औरतें जिस तरह समझाकर साफ़ साफ़ कह सकती हैं, उस तरह तुम लोग कह सकते हो ? अगर तुम लोग कुछ कहनेको तैयार होते हो तो पहले ही ऐसी गड़बड़ी कर देते हो और बोलनेमें ऐसी ऐसी गलतियाँ करते हो कि—

शुजा— कि ?

पियारा—और लुगत (कोष) के आधे लफ्ज़ तो तुम लोग जानते ही नहीं । बातें करनेमें तुम कदम कदमपर गलतियाँ करते हो । गूँगे लफ्ज़ों (शब्दों) और अन्धे क़ायदे (व्याकरण) को मिलाकर ऐसी लँगड़ी ज़बान (भाषा) बोलते हो कि उसे बहुत ही कुबड़ी होकर चलना पड़ता है ।

शुजा—लेकिन मुझे तो तुम्हारी भी ये बातें बहुत दुरुस्त नहीं मालूम होतीं ।

पियारा—मालूम कैसे हों ? हम लोगोंकी बातें समझनेकी लियाक़त ही तुम लोगोंमें नहीं है ! या खुदा ! ऐसी अक़्लमंद औरतोंकी जातको ऐसी अक्लसे खारिज मर्द जातके हाथमें सौंप दिया है कि बनिस्बत इसके अगर तुम औरतोंको गर्म और खौलते हुए तेलके कड़ाहेमें चढ़ा देते, तो शायद वे इस हालतसे मज़ेमें रहतीं !

शुजा—खैर,—तुम बके जाओ ।

पियारा—शेरकी ताकत दाँतोंमें, हाथीकी ताकत सूँड़में, भैंसेकी ताकत सींगोंमें, घोड़ेकी ताकत पिछले दोनों पैरोंमें, हिन्दोस्तानियोंकी ताकत पीठमें और औरतोंकी ताकत ज़बानमें होती है ।

शुजा—नहीं, औरतोंकी ताकत उनकी नज़रमें होती है ।

पियारा—ऊँहूँ ! नज़र पहले पहल ज़रूर कुछ काम करती है, लेकिन आगे ज़िन्दगी-भर तो मर्दपर औरत इसी ज़बानके ज़ोरसे हुकूमत करती है ।

शुजा—नहीं । मालूम होता है, तुम मुझे बात कहनेका मौक़ा ही न दोगी । सुनो, मैं क्या कह रहा था—

पियारा—यही तो तुममें ऐब है । तुम्हारी बातोंका दीबाचा (भूमिका) इतना वसीअ (विस्तृत) होता है कि वह पूरा ही नहीं हो पाता और तुम

[illegible] मतलबकी बात भूल जाते हो ।

शुजा—तुम अगर थोड़ी देर और इस तरह बके जाओगी, तो वाकई मैं कहनेकी बात भूल जाऊँगा ।

पियारा—तो चटपट कह डालो । देर न करो ।

शुजा—लो सुनो—

पियारा—कहो । लेकिन मुख्तसर (संक्षेप) । याद रखना,—एक साँसमें ।

शुजा—इस वक्त मुझसे खिलाफ होकर मुझसे लड़नेके लिए दाराका लड़का सुलेमान आया है । उसके साथ बीकानेरके महाराजा जयसिंह और सिपहसालार दिलेरखाँ भी हैं ।

पियारा—अच्छी बात है, एक दिन उन्हें बुलाकर दावत खिला दो ।

शुजा—तुम लड़कपन ही किये जाओगी ! ऐसा मुश्किल मामला,—खौफ़नाक लड़ाई, सामने है और उसे तुम—

पियारा—इसीसे तो मैं उसे ज़रा आसान बनानेकी कोशिश कर रही हूँ । ऐसे गाढ़े मामलेको अगर पतला न बनाया जायगा, तो वह हज़म कैसे होगा ? हाँ, कहे जाओ ।

शुजा—अभी राजा जयसिंह मेरे पास आये थे । वे कहते हैं कि बादशाह शाहजहाँकी मौत अभी नहीं हुई । उन्होंने मुझे बादशाहके हाथका लिखा खत भी दिखलाया । उस खतमें क्या लिखा है जानती हो ?

पियारा—जल्दी कह डालो । अब मुझसे रहा नहीं जाता ।

शुजा—उस खतमें उन्होंने लिखा है कि अगर मैं अब भी बंगालको लौट जाऊँ तो वह सूबा न छीना जायगा । नहीं तो,—

पियारा—नहीं तो छीन लिया जायगा, यही न ?—जाने दो ! अब और तो कुछ कहनेको नहीं है ? अब मैं गाना गाऊँ ?

शुजा—जानती हो, मैंने जवाबमें क्या लिख दिया है ? मैंने लिख दिया है, "अच्छी बात है, मैं बिना लड़े-भिड़े बंगालको लौटा जाता हूँ । अब्बाजानके हुक्म और दबावको मैं सर-आँखोंसे कुबूल कर सकता हूँ,

लेकिन, दाराका हुक्म मैं किसी तरह माननेको तैयार नहीं हूँ।"

पियारा—तुम मुझे गाने न दोगे। आप ही बके चले जा रहे हो। अब न गाऊँगी।

शुजा—नहीं, गाओ। लो मैं चुप हूँ।

पियारा—देखो याद रखना। बोलना नहीं।—क्या गाऊँ?

शुजा—जो जी चाहे।—नहीं। कोई मुहब्बतका गाना गाओ। ऐसा गाना गाओ जिसकी ज़बानमें मुहब्बत, जिसके मतलबमें मुहब्बत, जिसके इशारोंमें मुहब्बत, जिसकी तानमें मुहब्बत और जिसके समर्में भी मुहब्बत हो।—ऐसा ही गाना गाओ, मैं सुनूँगा।

(पियारा गाना शुरू करती है।)

शुजा—पियारा, दूरपर एक तरहके शोरो-गुलकी आवाज़ सुनाई देती है।—जैसे बादल गरज रहा है।—वह देखो!

पियारा—नहीं, तुम गाने न दोगे। मैं जाती हूँ।

शुजा—नहीं, वह कुछ नहीं है, गाओ।

ठुमरी—पंजाबी ठेका।

इस जीवनमें साध न पूरी हुई प्यारकी प्यारे।
छोटा है यह हृदय; इसीसे, इससे नाथ हमारे—
प्रेम-पुंज आकुल असीम यह उमड़ पड़े दृगद्वारे—॥ इस०॥
अपना हृदय अतृप्त, हृदयसे मिला रखूँ कितना ही,
तो भी युगल हृदय-बिच मानों, खटके बिरह सदा ही॥ इस०
यह जीवन, यह दुनिया मेरी, कुछ दिनकी है; इसमें—
सारा प्रेम दे सकूँगी क्या रसिया, रसमें रिसमें॥ इस०॥
चाहूँ जितना, और अधिक ही जी चाहे—मैं चाहूँ।
देकर प्रेम न मिटती आशा, ऐसी अकथ कथा हूँ॥ इस०॥
बेहद होवे जगह, अमर हों प्रान, मिटे सब बाधा।
तब पूजेगी प्रेम-आस दे चुके जनम ऋण साधा॥ इस०॥

शुजा—यह ज़िन्दगी एक खुमारी है। बीच बीचमें ख्वाबकी तरह बहिश्त-से एक तरहका इशारा आकर समझा देता है कि इस खुमारीसे जागना

कैसा मीठा और प्यारा है !—यह गाना उसी बहिश्तकी एक झनकार है। नहीं तो यह इतना मीठा और दिलचस्प कैसे होता ?

[नेपथ्यमें तोपकी आवाज़]

शुजा—(चौंककर) यह क्या !

पियारा—हाँ प्यारे ! इतनी रातको तोपकी आवाज़,—इतने नज़दीक !—दुश्मन तो उस पार है !

शुजा—यह क्या ! वही आवाज़ ! मैं देख आऊँ। (प्रस्थान)

पियारा—यही तो मैं भी सोच रही हूँ ! बार बार वही तोपकी आवाज़ सुन पड़ती है ! यह उमंगसे भरा फौजका शोरो-गुल, हथियारोंकी झनकार ! रातका गहरा सन्नाटा गोया यकायक चोट लगनेसे चिल्ला उठा है।—यह सब क्या है ?

शुजा—पियारा, बादशाही फौजने यकायक मेरे पड़ावपर धावा बोल दिया है।

[तेज़ीसे शुजाका फिर प्रवेश]

पियारा—धावा बोल दिया है ! यह क्या !

शुजा—हाँ, महाराज जयसिंहने यह दगाबाजी की है !—मैं लड़ाईके मैदानमें जा रहा हूँ। तुम भीतर जाओ। कुछ डर नहीं है पियारा—

पियारा—शोरो-गुल धीरे धीरे बढ़ता ही जा रहा है। ओः यह क्या है—

(प्रस्थान)

(नेपथ्यमें कोलाहल सुन पड़ता है।)

[एक ओरसे सुलेमान और दूसरी ओरसे दिलेरखाँका प्रवेश]

सुलेमान—सूबेदार (शुजा) कहाँ हैं ?

दिलेर०—वे इस दरियाकी तरफ़ भाग गये।

सुलेमान—भाग गये ? दिलेरखाँ, उनका पीछा करो।

[दिलेरखाँका प्रस्थान। जयसिंहका प्रवेश]

सुलेमान—महाराज, हम लोगोंकी फतह हुई।

जयसिंह—आपने क्या रातको ही नदी पार होकर दुश्मनकी फौजपर

धावा बोल दिया था ?

सुलेमान—हाँ, मगर क्या उन्होंने यह सोचा न होगा कि मैं ऐसा करूँगा ? लेकिन तो भी मुझे इतनी जल्दी कामयाब होनेकी उम्मेद न थी।

जयसिंह—सुल्तान शुजाकी फौज बिल्कुल तैयार न थी। जब करीबन आधे आदमी हलाक हो चुके, तब भी अच्छी तरह उनकी आँखें नहीं खुलीं।

सुलेमान—इसका सबब ? चचाजान तो सच्चे और मुस्तैद सिपाही हैं। वे पहलेहीसे रातको धावा होना मुमकिन समझते होंगे।

जयसिंह—मैंने बादशाह सलामतकी तरफ़से उनसे सुलह कर ली थी। वे लड़ाई किये बिना ही बंगालको लौट जानेके लिए राजी हो गये थे। यहाँ तक कि लौट जानेके लिए नाव तैयार करनेका हुक्म भी दे चुके थे।

[दिलेरखाँका फिर प्रवेश]

दिलेर०—शाहजादे साहब, सुल्तान शुजा बाल-बच्चोंके साथ नावपर बैठकर भाग गये।

जय०—देखिए, उसी सजी हुई नावपर।

सुले०—पीछा करो,—जाओ, फौजको हुक्म दो।

(दिलेरखाँका फिर प्रस्थान)

सुले०—राजासाहब, आपने किसके हुक्मसे यह सुलह की थी ?

जय०—खुद बादशाहके हुक्मसे।

सुले०—अब्बाजानने तो मुझे कुछ लिखा ही नहीं। और तुमने भी मुझसे पहले नहीं कहा।—तुम बड़े बेवकूफ हो !

जय०—बादशाहने मना कर दिया था।

सुले०—फिर झूठ बोलते हो !—जाओ।

(जयसिंहका प्रस्थान)

सुले०—बादशाहका कुछ और हुक्म है और मेरे अब्बाजानका कुछ और। क्या यह भी मुमकिन है ?—अगर यही हो तो राजा साहबको मैंने नाहक बताया। और अगर बादशाहका ऐसा ही हुक्म हो तो ? इधर अब्बाने लिखा है कि "शुजाको मय बाल बच्चोंके कैद कर लो।"—नहीं, मैं

अब्बाके हुक्मकी तामील करूँगा। उनका हुक्म मेरे लिए खुदाके हुक्मके बराबर है।

चौथा दृश्य

स्थान—जोधपुरका किला। **समय**—सबेरा

[महामाया और चारणियाँ]

महामाया—फिर गाओ, चारणियो, फिर गाओ।

सोहनी। ताल—धमार।

(१)

वह तो गये हैं युद्धमें जय प्राप्त करनेको वहाँ।
ऐसे महा आह्वानमें निर्भय विचरनेको वहाँ॥
यश-मानके हित प्राणका बलिदान देनेको वहाँ।
होने अमर, मथने मरणके सिन्धुको, देखो वहाँ॥
उठ वीर-बाला, बाल बाँधो, पोंछ दृग, गौरव गहे।
सधवा रहो, विधवा बनो, ऊँचा तुम्हारा सिर रहे॥

(२)

निज प्रभुके रणके निमंत्रणमें गये हैं वे वहाँ।
मिलते कवचसे हैं कवच, बढ़ता विकट विग्रह वहाँ॥
होता कठिन परिचय खुले खर खड्गहीकी धारसे।
भ्रूभंगसे गर्जन मिलें; त्यों रक्त रक्ताकारसे॥
उठ वीर-बाला०॥

(३)

अनुनय, दिखाना पीठ या, होता नहीं रणमें वहाँ।
लाशें तड़पती सैकड़ों बस एक ही क्षणमें वहाँ॥
तर खूनसे काली बला-सी मौत नाचे चावसे।
बाजे बजें जयके उधर है आर्त्तनाद उभावसे॥
उठ वीर-बाला०॥

(४)

ज्वाला बुझाने सब गये हैं वे वहाँ संग्राममें।
आते अभी होंगे यहाँ जय प्राप्तकर निज धाममें॥
अथवा अमर होकर मरेंगे वीरके उत्कर्षसे।
ले गोदमें महिमा वही तुम भी मरोगी हर्षसे॥
उठ वीर बाला० ॥

पहरेदार—महारानी साहबा !

महामाया—सिपाही, क्या खबर है ?

पहरे०—महाराज लौट आये हैं।

महामाया—आ गये ? युद्धमें विजय पाकर लौट आये ?

पहरे०—जी नहीं, इस युद्धमें वे हारकर लौटे हैं।

महा०—हारकर लौटे हैं ! तुम क्या कहते हो ! कौन हारकर लौट आया है ?

पहरे०—महाराज।

महामाया—क्या कहा ? महाराज जसवन्तसिंह हारकर लौट आये हैं ? यह क्या मैं ठीक सुन रही हूँ। जोधपुरके महाराज,—मेरे स्वामी,—युद्धमें हारकर लौट आये हैं ! क्षत्रियोंकी शूरताका ऐसा अन्त,—ऐसी बुरी दशा, हो गई है !—यह असंभव है। वीर क्षत्रिय युद्धमें हारकर घर नहीं लौटते ! महाराज जसवन्तसिंह क्षत्रियोंके शिरोमणि हैं। युद्धमें हार हो सकती है। अगर वे युद्धमें हार गये हैं तो युद्धभूमिमें मरे पड़े होंगे। महाराज जसवन्तसिंह युद्धमें हारकर कभी लौट ही नहीं सकते। जो लौट कर आया है वह महाराज जसवन्तसिंह नहीं है। वह उनका भेष धरकर आनेवाला कोई ऐयार है। उसे क़िलेके भीतर न आने दो। क़िलेका फाटक बंद कर लो। गाओ, चारणियो, फिर गाओ।

(चारणियाँ फिर वही गीत गाती हैं)

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—ऊसर मैदान। **समय**—रात

[औरंगज़ेब अकेले खड़े हैं।]

औरंग०—आसमानमें काले बादल छाये हैं। आँधी आवेगी। एक दरिया पार कर आया हूँ; यह एक और बाक़ी है, बड़ा ही खौफ़नाक है, इसमें बड़ी बड़ी लहरें उठ रही हैं। इसका पाट इतना लम्बा-चौड़ा है कि दूसरा किनारा नज़र नहीं आता। तो भी, पार करना पड़ेगा, और वह भी इसी छोटी-सी नाव से।

[मुरादका प्रवेश]

औरंग०—क्यों मुराद, क्या है?

मुराद—दाराके साथ एक लाख घुड़सवार फ़ौज और सौ तोपें हैं।

औरंग०—तो यह खबर ठीक है?

मुराद—ठीक है; हमारे हर एक जासूसका यही अंदाज़ा है।

औरंग०—(टहलते टहलते) यह—नहीं—यही तो!

मुराद—दाराने इसी पहाड़के उस पार अपना पड़ाव डाला है।

औरंग०—इसी पहाड़के उस पार?

मुराद—हाँ।

औरंग०—यही तो!—एक लाख सवार,—और—

मुराद—हम लोग कल सबेरे ही—

औरंग०—चुप रहो, बोलो नहीं। मुझे सोचने दो।—इतनी फ़ौज दाराके पास आई कहाँसे?—और एक-सौ तोपें!—अच्छा, मुराद, तुम इस वक़्त जाओ, मुझे सोचने दो। (मुरादका प्रस्थान)

औरंग०—यही तो!—इस वक़्त पीछे हटनेसे फिर बचाव नहीं हो सकता; लड़नेमें भी जान गँवानी पड़ेगी।—एक-सौ तोपें! अगर,—नहीं,—यह हो ही कैसे सकता है—हूँ (लम्बी साँस छोड़ना) औरंगज़ेब! इस बार या तो तुम्हारी तक़दीर खुल गई या हमेशाके लिए फूट गई!—फूटना?—गैरमुम-

। खुलना ?—लेकिन किस तरकीबसे ? कुछ समझमें नहीं आता ।

[मुरादका प्रवेश]

औरंग०—तुम फिर क्यों आये ?

मुराद—उधरसे शायस्ताखाँ तुमसे मिलने आये हैं।

औरंग०—आये हैं ? अच्छी बात है, इज़्ज़तके साथ उन्हें यहाँ । नहीं, मैं खुद आता हूँ। (प्रस्थान)

मुराद—यही तो ? शायस्ताखाँ हमारे पड़ावमें क्यों आया है !—भाई भीतर ही भीतर क्या मतलब सोच रहे हैं, समझमें नहीं आता। ाखाँ क्या दारासे दगाबाज़ी करेगा ? देखा जायगा। (इधर उधर टह-गता है।)

[औरंगज़ेबका प्रवेश]

औरंग०—भाई मुराद, इसी वक़्त आगरे जानेके लिए मय फ़ौजके होना होगा। तैयार हो जाओ।

मुराद—यह क्या ! इतनी रातको ?

औरंग०—हाँ, इतनी रातको। पड़ावके डेरे जैसेके तैसे पड़े रहने दो। फ़ौजपर हम धावा नहीं करेंगे। इस पहाड़के दूसरे किनारेसे आगरे एक राह है। उसीसे चलेंगे। दाराको शक न होगा। दारासे पहले गरे पहुँचना है। तैयार हो जाओ।

मुराद—तो क्या अभी ?

औरंग०—बहस करनेके लिए वक़्त नहीं है। तख़्त चाहो, तो कुछ नो नहीं। नहीं तो याद रक्खो, मौतका सामना है। (दोनोंका प्रस्थान)

छठा दृश्य

स्थान—प्रयागमें सुलेमानका पड़ाव

समय—तीसरा पहर

[जयसिंह और दिलेरखाँ]

देलेर०—आख़िरी लड़ाईमें भी औरंगज़ेबकी फ़तह हुई। सुना राजा

साहब ।

जयसिंह—मैं पहले ही जानता था ।

दिलेर०—शायस्ताखाँने दगाबाज़ी की । आगरेके पास बड़ी भारी लड़ाई हुई । उसमें हारकर दारा दोआबेकी तरफ़ भाग गये । उनके पास सब मिलकर सौ हाथी हैं और तीस लाख रुपये हैं ।

जय०—उनको भागना ही पड़ता । मैं जानता था ।

दिलेर०—आप तो सभी जानते थे !—दारा भागनेके वक़्त जल्दीके बाइस बहुत-सा रुपया नहीं ले जा सके । लेकिन, उसके बाद सुना, बूढ़े बादशाहने सत्तावन खच्चरोंपर मोहरें लदाकर दाराके लिए भेजीं । पर राहमें वह रक़म भी जाटोंने लूट ली ।

जय०—बेचारा दारा !—लेकिन, यह मैं पहले ही जानता था ।

दिलेर०—औरंगज़ेब और मुराद फ़तहयाबीकी खुशी मनाते हुए आगरेमें दाखिल हुए हैं । मतलब यह कि इस वक़्त औरंगज़ेब ही बादशाह हैं ।

जय०—यह सब मैं पहलेहीसे जानता था ।

दिलेर०—औरंगज़ेबने मुझे खतमें लिखा है कि अगर तुम मय अपनी फ़ौजके सुलेमानको छोड़कर चले आओ, तो मैं तुम्हें बहुत बड़ी रक़म इनाममें दूँगा । आपको भी शायद यही लिखा है ।

जय०—हाँ ।

दिलेर०—राजा साहब, इस जंगके आखिरी नतीजेके बारेमें आपकी क्या राय है ?

जय०—मैंने कल एक ज्योतिषीसे इसके बारेमें पूछा था । उन्होंने कहा, इस समय भाग्यके आकाशमें औरंगज़ेबका सितारा बलन्द हो रहा है और दाराका सितारा डूब रहा है ।

दिलेर०—तो फिर हम लोगोंको इस वक़्त क्या करना चाहिए ?

जय०—मैं जो करूँ, उसे तुम देखते भर जाओ ।

दिलेर०—अच्छा, इन सब बातोंमें मेरी अक्ल उतना काम नहीं करती । मगर एक बात—

जय०—चुप रहो, सुलेमान आ रहे हैं।

[सुलेमानका प्रवेश]

जयसिंह और दिलेर०—शाहज़ादे साहब, तसलीम। अभ्यर्थना

सुले०—राजा साहब, अब्बा हारकर भाग गये।—यह बादशाह
ाँका खत है। (पत्र देता है)

जय०—(पत्र पढ़कर) कहिए शाहज़ादे साहब, क्या किया जाय?

सुले०—बादशाहने मुझे अब्बाजानकी कुमकको फ़ौज लेकर जल्द
होनेके लिए लिखा है। मैं अभी जाऊँगा। तम्बू उतार लिए जायँ
ौजको हुक्म दिया जाय कि—

जय०—शाहज़ादे साहब, मेरी समझमें और भी ठीक खबर पानेके
कना मुनासिब है। क्यों खाँ साहब, तुम्हारी क्या राय है?

दिलेर०—मेरी भी यही राय है।

सुले०—इससे बढ़कर ठीक खबर और क्या हो सकती है? खुद बाद-
दस्तखत हैं।

जय०—मुझे यह जाल जान पड़ता है। खासकर जब बादशाह कुछ
ाहीं कर सकते। उनकी आज्ञा ही नहीं है। आपके पिताकी आज्ञा पाये
ह्म यहाँसे एक क़दम भी नहीं हट सकते। क्यों दिलेरखाँ?

दिलेर०—आपका कहना ठीक है।

सुले०—लेकिन अब्बा तो भाग गये हैं। वे हुक्म कैसे दे सकते हैं?

जय०—तो हमको अब उनकी जगहपर औरंगज़ेबकी आज्ञाकी राह
पड़ेगी,—अगर यह बात सच हो।

सुले०—क्या! औरंगज़ेबके हुक्मकी,—अपने वालिदके दुश्मनके
!, मैं राह देखूँगा?

जय०—आप न देखें, हमको तो देखनी पड़ेगी,—क्यों दिलेरखाँ?

दिलेर०—हाँ, मौका तो कुछ ऐसा ही आ पड़ा है!

सुले०—तो क्या आप दोनों आदमियोंने मिलकर दगा करनेकी ठान
?

जय०—हम लोगोंका दोष क्या है?—बिना उचित आज्ञा पाये हम किस तरह कोई काम कर सकते हैं? लाहौरमें शाहज़ादे दाराके पास जानेकी कोई उचित और माननीय आज्ञा हमने नहीं पाई।

सुले०—मैं तो हुक्म दे रहा हूँ।

जय०—आपकी आज्ञासे हम आपके पिताकी आज्ञाके विरुद्ध कुछ नहीं कर सकते। क्यों खाँ साहब?

दिलेर०—कैसे कर सकते हैं!

सुले०—समझ गया। आप लोगोंने दगा करनेकी ठान ली है। अच्छा, मैं खुद ही फ़ौजको हुक्म देता हूँ। (प्रस्थान)

दिलेर०—राजा साहब, आप यह क्या कर रहे हैं?

जय०—डरनेकी कोई बात नहीं। मैंने सब सिपाहियोंको अपनी मुट्ठीमें कर रक्खा है।

दिलेर०—आप जैसा होशियार कामकाजी आदमी मैंने कोई नहीं देखा। लेकिन, यह काम क्या ठीक हो रहा है?

जय०—चुप रहो। इस समय ज़रा अलग रहकर तमाशा देखना ही हमारा काम है। अभी हम एकदम औरंगज़ेबकी तरफ़ झुक भी न पड़ेंगे। कुछ रुकना होगा। क्या जानें—

[सुलेमानका फिर प्रवेश]

सुले०—फ़ौजके सिपाही भी सब इस धोखादेहीमें शामिल हैं। आप लोगोंके हुक्मके बग़ैर वे टससे मस होना नहीं चाहते।

जय०—यही फ़ौजी दस्तूर है।

सुले०—राजा साहब, बादशाहने मुझे अब्बाकी कुमकपर जानेको लिखा है। अब्बाके पास जानेके लिए मेरा दिल बेक़रार है। मैं आप लोगोंसे मिन्नत करता हूँ।—दिलेरखाँ, दाराका बेटा मैं हाथ जोड़कर आप लोगोंसे यह भीख माँगता हूँ कि आप न जाँय, पर मेरे सिपाहियोंको मेरे साथ अब्बाके पास लाहौर जानेका हुक्म दे दें। मैं देखूँ, इस बाग़ी औरंगज़ेबमें कितनी बहादुरी है। अगर मैं अपने इन दिलेर सिपाहियोंको लेकर अब भी जंगके

पहुँच सकता,—राजा साहब,—दिलेरखाँ, हुक्म दे दो! इस मेहर-
बदलेमें ताज़िन्दगी गुलाम रहूँगा।

य०—बादशाहकी आज्ञाके बिना हम यहाँसे एक क़दम भी आगे
सकते।

लि०—दिलेरखाँ, मैं शाहज़ादा दाराका बेटा, घुटने टेककर यह भीख
हूँ। (घुटने टेकता है।)

दिलेर०—उठिए शाहज़ादे साहब, राजा साहब न दें, मैं हुक्म देता
दाराका नमक खाया है। मुसलमानोंकी क़ौम नमकहराम नहीं होती।
शाहज़ादे साहब, मैं अपनी सारी फ़ौज लेकर आपके साथ लाहौर
। और क़सम खाता हूँ कि अगर शाहज़ादा मुझे छोड़ न देंगे, तो
शाहज़ादेको कभी न छोडूँगा। मैं ज़रूरत पड़नेपर शाहज़ादे दाराके
ए जान देनेको तैयार हूँ। आइए शाहजादे साहब, मैं इसी वक़्त
ता हूँ।　　　　(सुलेमान और दिलेरखाँका प्रस्थान)

य०—लो, खाँ-साहब एक बूँद पानीमें ही गुल गये! अपनी
उन्होंने पर्वाह ही न की। तो अब मैं क्या करूँ?—अपनी सेना
गरे ही चलूँ।　　　　(प्रस्थान)

सातवां दृश्य

थान—आगरेका महल। **समय**—तीसरा प्रहर।

[शाहजहाँ और जहानारा]

शाहजहाँ—जहानारा, मैं बड़े शौक़से औरंगज़ेबकी राह देख रहा हूँ।
बेटा,—मेरा जवाँमर्द फ़तहयाब बेटा है; मेरी लाज और मेरी
।

जहानारा—इज़्ज़त! अब्बा, इतना मक्कार,—इतना झूठा है वह! उस
मैं उसके खेमेमें गई, तब उसके ढंगसे ऐसा मालूम पड़ा कि वह
बहुत मानता है और आपकी बड़ी इज़्ज़त करता है। उसने
मुझसे यह बड़ा भारी कुसूर हो गया है, मैंने यह बड़ा भारी गुनाह

किया है। साथ ही साथ उसने दो-एक बूँद आँसू भी गिरा दिये। उसने कहा, दाराकी तरफ़ जो बड़े बड़े लायक आदमी हैं, उनके नाम अगर मुझे मालूम हो जायँ, तो मैं बेधड़क अब्बाजानके हुक्मके मुताबिक मुरादको छोड़कर दाराकी तरफ़ हो जाऊँ। मुझे उसकी इस बातपर यक़ीन हो गया और मैंने बदनसीब दाराके तरफ़दार दोस्तोंके नाम उसे बतला दिये। बस,—उसने उन्हें उसी वक़्त क़ैद कर लिया। मैंने दाराको रुक्का भेज दिया था। राहमें वह रुक्का भी औरंगज़ेबने हथिया लिया। वह ऐसा दग़ाबाज़ और फ़रेबी है!

शाह०—नहीं जहानारा, यह वह नहीं कर सकता। ना ना ना! मैं इस बातपर यक़ीन न करूँगा।

जहा०—आवे वह एक दफ़ा इस क़िलेमें। मैं धोखा देकर चालाकीसे उसे क़ैद करूँगी। यहाँ मैंने हथियारबंद सौ सिपाही छिपा रक्खे हैं। उसे मैं आपके सामने ही क़ैद करूँगी।

शाह०—जहानारा, यह क्या बात है!—वह मेरा लख्तेजिगर, तुम्हारा भाई है। नहीं जहानारा, ऐसा करनेकी ज़रूरत नहीं है। वह आवे। मैं उसे मुहब्बतसे क़ाबूमें कर लूँगा। उससे भी अगर वह क़ाबूमें न आवेगा तो उसके आगे मैं;—वालिद, उसके आगे घुटने टेककर तुम सब लोगोंकी और अपनी जानकी भीख माँग लूँगा। कहूँगा, हम और कुछ नहीं चाहते; हमें जीने दो, हम लोगोंको आपसमें एक दूसरेसे मुहब्बत करनेका मौक़ा दो।

जहा०—अब्बा, इस बेइज़्ज़तीसे मैं आपको बचाऊँगी।

शाह०—बेटेसे इल्तिजा करनेमें बापकी बेइज़्ज़ती नहीं हो सकती।

[मुहम्मदका प्रवेश]

शाह०—यह देखो, मुहम्मद आ गया! तुम्हारे अब्बा कहाँ हैं?

मुहम्मद—बाबा जान, मुझे मालूम नहीं।

शाह०—यह क्या! मैंने तो सुना था, वह यहाँ आनेके लिए घोड़ेपर सवार हो चुका है।

मुह०—किसने कहा? वे तो घोड़ेपर चढ़कर बादशाह अकबरकी

कब्रपर नमाज़ पढ़ने गये हैं। मुझे जहाँ तक मालूम है, यहाँ आनेका उनका बिलकुल इरादा नहीं है।

जहा०—तो तुम यहाँ क्यों आये हो ?

मुह०—इस क़िलेके शाही महलपर क़ब्ज़ा करनेके लिए।

शाह०—यह क्या !—नहीं मुहम्मद, तुम हँसी कर रहे हो।

मुह०—नहीं बाबा जान, यह सच बात है।

जहा०—हाँ !—तो मैं तुमको ही क़ैद करूँगी। (सीटी बजाती है)

[हथियारबन्द पाँच सिपाहियोंका प्रवेश]

जहा०—मुहम्मद, हथियार दे दो।

मुह०—क्यों ?

जहा०—तुम मेरे क़ैदी हो। सिपाहियो, हथियार ले लो।

मुह०—तो मुझे भी अपने सिपाहियोंको बुलाना पड़ा।

(सीटी बजाता है)

[दस शरीर रक्षक सिपाहियोंका प्रवेश]

मुह०—मेरी फ़ौजके हज़ार सिपाहियोंको बुलाओ।

जहा०—हजार सिपाही ! उन्हें क़िलेके भीतर किसने घुसने दिया ?

शाह०—मैंने। सब क़ुसूर मेरा है। मैंने मुहब्बतके मारे, औरंगज़ेबने खतमें जो कुछ मुझसे माँगा था, सब उसे दिया था। ओः, मैंने ख्वाबमें भी यह नहीं सोचा !—मुहम्मद !

मुह०—बाबा जान !

शाह०—तो क्या अब यही समझ लूँ कि मैं तुम्हारा क़ैदी हूँ ?

मुह०—क़ैदी तो नहीं हैं, पर हाँ, आप बाहर नहीं जा सकते।

शाह०—मैं ठीक ठीक समझ नहीं सकता। यह क्या सच्चा वाक़या है या यह सब ख्वाब देख रहा हूँ ! मैं कौन हूँ ? मैं शाहंशाह शाहजहाँ हूँ। तुम मेरे पोते, मेरे सामने तलवार लिये खड़े हो ! यह क्या है ? एक ही दिनमें क्या दुनियाका सब क़ायदा उलट गया ? एक दिन जिसकी गुस्सेसे लाल आँखें देखकर औरंगज़ेब ज़मीनमें धँस-सा जाता था, उसके,

—उसके,—बेटेके हाथोंमें,—वही शाहजहाँ क़ैदी है !—जहानारा !—कहाँ गई !—यह है ! यह क्या शाहजादी है ? तेरे होंठ हिल रहे हैं, मुँहसे आवाज़ नहीं निकलती; तू फीकी और सूखी नज़रसे एकटक देख रही है; तेरे गुलाबी गालोंपर स्याही फेर दी गई है।—क्या हुआ बेटी !

जहा०—कुछ नहीं अब्बा ! लेकिन मेरे दिलकी हालत आप कैसे जान गये, मैं सिर्फ़ यही सोच रही हूँ।

शाह०—मुहम्मद, तुमने सोचा है कि मैं इस जालसाज़ी,—इस ज़ुल्मको यहाँ इसी तरह बैठे बैठे किसी मददगारके न होनेसे चुपचाप सह लूँगा ! तुमने सोचा है, यह शेर बूढ़ा है, इसलिए तुम्हारी लातें सह लेगा ? मैं बूढ़ा शाहजहाँ ज़रूर हूँ, लेकिन मैं शाहजहाँ हूँ !—ए कौन है ? ले आओ मेरा ज़िरह-बख्तर और तलवार।—कोई नहीं है ?

मुह०—बाबाजान, आपके खास सिपाही किलेसे बाहर निकाल दिये गये हैं।

शाह०—किसने उन्हें निकाल दिया ?

मुह०—मैंने !

शाह०—किसके हुक्मसे ?

मुह०—अब्बाके हुक्मसे। इस वक्त मेरे ये हज़ार सिपाही ही जहाँ-पनाहकी हिफ़ाज़तका काम करेंगे।

शाह०—मुहम्मद ! दग़ाबाज़ !

मुह०—मैं सिर्फ़ अब्बाके हुक्मकी तामील कर रहा हूँ। मैं और कुछ नहीं जानता।

शाह०—औरंगज़ेब !—नहीं, आज वह कहाँ, और मैं कहाँ !—जहानारा, तब भी, अगर आज मैं इस क़िलेके बाहर जाकर एक बार अपने सिपाहियोंके सामने खड़ा हो सकता, तो अब भी इस बूढ़े शाहजहाँकी फ़तह-यावीके नारोंसे औरंगज़ेब ज़मीनमें घुटने टेक देता। एक दफ़ा, सिर्फ़ एक दफ़ा बाहर निकल पाता ! मुहम्मद ! मुझे एक दफ़ा बाहर जाने दो ! एक दफ़ा ! सिर्फ़ एक दफ़ा !

—बाबा जान, मेरा कुसूर नहीं। मैं अब्बाके हुक्मका पाबंद हूँ।
—और मैं क्या तुम्हारे अब्बाका अब्बा नहीं हूँ? वह अगर
इपर ऐसा जुल्म कर रहा है, तो तुम क्यों फिर उसके हुक्मके
—मुहम्मद, आओ, क़िलेका फाटक खोल दो।
—मुआफ़ कीजिएगा बाबा जान। मैं अब्बाके हुक्मको टाल

—न खोलोगे? न खोलोगे? देखो, मैं तुम्हारे बापका बाप,—
और ज़ईफ़ हूँ। मैं और कुछ नहीं चाहता, सिर्फ़ एक दफ़ा
जाना चाहता हूँ। क़सम खाता हूँ, फिर लौट आऊँगा। न
—न जाने दोगे?
—मुआफ़ कीजिएगा बाबा जान, यह मुझसे न हो सकेगा।
(जाना चाहता है
—ठहरो मुहम्मद! (कुछ सोचनेके बाद राजमुकुट और पलंगपरसे
) देखो मुहम्मद, यह मेरा ताज और यह मेरा कुरान है! यह
मैं क़सम खाता हूँ कि बाहर जाकर सब रिआयाकी भीड़के सामने
तुम्हारे सिरपर रख दूँगा। किसीकी मजाल नहीं जो चूँ करे। मैं
तापर और लकवेकी बीमारीसे लाचार हूँ। लेकिन बादशाह
दिनोंसे इस तरह हिन्दोस्तानकी सल्तनत करते आ रहा है कि
क दफ़ा अपनी फ़ौजके सिपाहियोंके सामने जाकर खड़ा हो सके
ी आग बरसानेवाली नज़रसे ही सौ औरंगज़ेब खाक हो जायँ।
छोड़ दो। तुम हिन्दोस्तानकी बादशाहत पाओगे। कसम खाता
मैं सिर्फ़ इस दग़ाबाज़ जालसाज़ औरंगज़ेबको एक दफ़ा
मुहम्मद!
—बाबा जान, मुआफ़ कीजिएगा।
—देखो, यह लड़कोंका खेल नहीं है। मैं खुद बादशाह शाह-
कर क़सम खाता हूँ। देखो, एक तरफ़ तुम्हारे अब्बाका हुक्म
ी जानिब हिन्दोस्तानकी बादशाहत। इसी दम जो चाहे पसन्द

कर लो।

मुह०—बाबा जान, मैं अब्बाके हुक्मके खिलाफ़ कोई काम नहीं कर सकता।

शाह०—एक बादशाहतके लिए भी नहीं ?

मुह०—दुनिया-भरकी बादशाहतके लिए भी नहीं।

शाह०—देखो मुहम्मद, सोच लो। अच्छी तरह सोच लो—हिन्दोस्तानकी सल्तनत।

मुह०—मैं यहाँ खड़ा होकर अब यह बात नहीं सुनूँगा। यह लालच बड़ा है। दिल बड़ा ही कमज़ोर है। बाबा जान, मुआफ़ कीजिएगा। (प्रस्थान)

शाह—चला गया ! चला गया ! जहानारा, चुप क्यों है ?

जहा०—औरंगज़ेब ! तुम्हारा ऐसा सआदतमंद लड़का ! वह अपने बापके हुक्मको माननेका फ़र्ज़ अदा करनेमें एक बड़ी भारी सल्तनतको लात मारकर चला जाता है और तुमने अपने बूढ़े बापको उसकी ऐसी मुहब्बतके बदलेमें धोखा देकर दग़ासे क़ैद कर लिया है !

शाह०—सच कहती है बेटी ! ऐ औलादवाले लोगो, बिला खुद खाये अपने बेटोंको मत खिलाओ, इन्हें छातीसे लगाकर मत सुलाओ; इन्हें हँसानेके लिए प्यारकी हँसी मत हँसो। ये सब एहसानफ़रामोशीके पौधे हैं। ये सब छोटे छोटे शैतान हैं। इन्हें आधा पेट खिलाओ। इन्हें रोज़ाना सुबह और शाम कोड़ोंसे मारो। हमेशा लाल आँखें दिखाकर डाँटते रहो। तब शायद ये मुहम्मदकी तरह तुम्हारे ताबेदार और सआदतमंद होंगे। उन्हें यह सज़ा देनेमें अगर तुम्हारे कलेजेमें कसक हो, तो तुम उस कलेजेके टुकड़े टुकड़े कर डालो; आँखोंमें आँसू आवें, तो आँखें निकालकर फेंक दो, दुखसे चिल्लानेको जी चाहे, तो दोनों हाथोंसे अपना गला घोंट लो।

जहा०—अब्बा, इस क़ैदखानेके कोनेमें बैठकर लाचार बच्चोंकी तरह रोने-धोने या कुढ़नेसे कुछ न होगा, लात खाये हुए लूले आदमीकी तरह बैठकर दाँत पीसने और कोसनेसे कुछ न होगा, किसी मरते हुए गुनहगारकी तरह आखिरी वक़्तमें एक दफ़ा खुदाको रहीम करीम कहकर पुकारनेसे कुछ

न होगा। उठिए, चोट खाये हुए ज़हरीले नागकी तरह फन फैलाकर पुकारते हुए उठिए, बच्चा छिन जानेपर बाघिन जैसे गरज उठती है वैसे ही गरज उठिए, जुल्मसे पागल हुई क़ौमकी तरह जाग उठिए। होनीकी तरह सख्त, हसदकी तरह अन्धे और शैतानकी तरह बेरहम बन जाइए। तब उससे पेश पाइएगा।

शाह०—अच्छी बात है। ऐसा ही हो। आ बेटी, तू भी मेरी मददगार हो। मैं आगकी तरह जल उठूँ, तू हवाकी तरह चल। मैं भू-चालकी तरह इस सल्तनतको उलट-पलटकर सत्यानाश कर दूँ, तू समंदरकी लहरोंकी तरह आकर उसे डुबा दे। मैं जंग ले आऊँ, तू मरी ले आ। आ तो एक दफ़ा सल्तनतको उथल-पुथल करके चल दें। फिर चाहे जहाँ जायँ—कुछ हर्ज़ नहीं। तोपकी तरह शोले उड़ाते हुए बलंद होकर आसमानमें छा जायँ।

दूसरा अङ्क

पहला दृश्य

स्थान—मथुरामें औरंगज़ेबका पड़ाव

समय—रात

[दिलदार अकेला खड़ा है]

दिल०—मुराद! तुम कैसे धीरे-धीरे सीढ़ी दर-सीढ़ी गिरते जा रहे हो। अव्वल तो यों ही शराबके बहावमें बहे जा रहे हो, उसपर भी तुर्रा यह है कि तवायफ़ोंकी नाज़ो-अदा (हाव-भाव) का तूफ़ान ज़ोरोंसे बरपा है। तुम ज़रूर डूबोगे। अब देर नहीं है। मुराद! तुम्हें देखकर मुझे कभी कभी बेहद सदमा होता है। तुम बहुत ही भोले हो। शाहजादीके कहने सुननेसे औरंगज़ेबको दग़ासे क़ैद करने गए थे। पानीमें बसकर मगर-मच्छसे दुश्मनी!—आज उसके बदलेकी दावत है।—जहाँपनाह आ गये!

[मुरादका प्रवेश]

मुराद—भाई साहब अभी तक नमाज़ पढ़ते हैं!—उनकी ज़िन्दगी

आकबत-अन्देशीमें (परलोकके ध्यानमें) ही गुजरी । इस ज़िन्दगीका मज़ा उन्होंने कुछ भी न पाया ।—दिलदार, क्या सोच रहे हो ?

दिल०—जहाँपनाह, सोच रहा हूँ कि मछलियोंके डैने न होकर अगर पंख होते, तो जान पड़ता है, शायद वे उड़ने लगतीं ।

मुराद—अरे, मछलियोंके अगर पंख होते; तो वे चिड़ियाँ ही न कहलातीं ? उन्हें कोई मछली कहता ही क्यों ?

दिल०—हाँ ठीक है । यह मैं पहले नहीं सोच सका था । इसीसे इस झमेलेमें पड़ गया । अब साफ समझमें आ रहा है ।—अच्छा जहाँपनाह, बत्तख जैसे परंद बहुत कम नज़र आते हैं । वह पानीमें तैरता, ज़मीनपर चलता और आसमानमें उड़ता है ।

मुराद—उससे और मौजूदा दलीलसे क्या वास्ता, बेवक़ूफ़ !

दिल०—उस रहीम करीमने दोनों पैर नीचेके हिस्सेमें दिये थे चलनेके लिए; यह बात साफ़ ज़ाहिर है ।

मुराद—हाँ, बिलकुल साफ़ ।

दिल०—लेकिन पैर अगर सोचनेका काम करना शुरू कर दें तो दिमाग़को सही रखना मुश्किल हो जायगा ।—अच्छा जहाँपनाह, आप यह जानते हैं कि खुदाने जानवरोंको सिर सामने और पूँछ पीछे क्यों दी है ?

मुराद—अरे बेवक़ूफ़, अगर उनका सिर पीछे होता, तो वही उनका सामनेका हिस्सा होता ।

दिल०—बजा फ़रमाया जहाँपनाह । —कुत्ता दुम क्यों हिलाता है,इसका सबब मामूली नहीं है ।

मुराद—क्या सबब है ?

दिल०—कुत्ता दुम हिलाता है, इसका सबब यह है कि कुत्तेमें दुमसे ज़्यादह ज़ोर है । अगर दुममें कुत्तेसे ज़्यादह जोर होता, तो दुम ही कुत्तेको हिलाती ।

मुराद—हाः हाः—वह देखो; भाई साहब आ गये !

[औरंगज़ेबका प्रवेश]

औरंग०—तुम आ गये भाई, अपने मसखरेको भी साथ लेते आये !

मुराद—हाँ भाई साहब, दिलबस्तगीके लिए मसखरा भी चाहिए और तवायफ़ भी।

औरंग०—हाँ, ज़रूर चाहिए।—कल यकायक बहुत-सी नौजवान और परीज़माल तवायफ़ें आकर मौजूद हुईं। तुम जानते हो, मुझे तो यह शौक़ है नहीं। मैं तो अब मक्के शरीफ़को जा रहा हूँ। मैंने सोचा, उनसे तुम्हारा दिलबहलाव हो सकता है। ये बहुत उम्दा शराबकी कई बोतलें भी मुझे फिरंगियोंसे मिल गई हैं।—भला देखो, यह शराब कैसी है। (बोतलें देता है।)

मुराद—देखूँ ! (पात्रमें डालकर पीना) वाह ! क्या तुहफ़ा है ! वाह ! दिलदार, क्या सोच रहा है ? ज़रा-सी पियेगा ?

दिल०—जहाँपनाह, मैं एक बात सोच रहा था कि सब जानवर सामने ही क्यों चलते हैं ?

मुराद—क्यों ? पीछेकी तरफ़ नहीं चल सकते, इसलिए।

दिल०—नहीं। इसका सबब यह है कि उनकी दोनों आँखें सामनेकी तरफ़ हैं। लेकिन जो अंधे हैं, उनका सामने चलना और पीछे चलना बराबर है—एक ही बात है।

मुराद—तुहफ़ा है ! ये फ़िरंगी शराब बहुत अच्छी बनाते हैं। (फिर पीना) भाई-साहब, तुम भी ज़रा-सी पी लो।

औरंग०—नहीं। तुम तो जानते ही हो,मुझे शराबसे परहेज़ है। कुरानमें शराब पीनेकी मनाही है।

दिल०—अंधे, जागो, देखो रात है या दिन।

मुराद—कुरानकी सभी हिदायतोंको माननेसे दुनियाका काम नहीं चल सकता। (शराब पीता है)

दिल०—हाथीमें जितना जोर है, उतनी ही अगर अक़्ल भी होती तो वह कैसा आक़िल जानवर होता ! तब हाथीके ऊपर फीलवान न बैठता, उसके ऊपर हाथी ही बैठता। इतनी ताकत—जो इतने बड़े जिस्मको मय सूँड़के लिये घूमती फिरती है—ओः !

औरंग०—भाई, तुम्हारा मसखरा तो खूब दिल्लगीबाज़ है ?

मुराद—यह एक नायाब गौहर है ।—तवायफ़ें कहाँ हैं ?

औरंग०—उस तंबूमें । तुम खुद ही जाकर बुला लाओ ।

मुराद—अभी लो । मुराद जंगमें या ऐशमें कभी पीछे नहीं हटता ।

(प्रस्थान)

(दिलदार 'अन्धे जागो' कहकर मुरादके पीछे पीछे जाना चाहता है और औरंगज़ेब उसे रोकता है ।)

औरंग०—ठहरो, तुमसे कुछ कहना है ।

दिल०—मुझे न मारो बाबा, मैं तख्त भी नहीं चाहता, मक्का भी नहीं चाहता ।

औरंग०—तुम कौन हो, ठीक कहो । तुम कोरे मसखरे नहीं हो । कौन हो तुम ?

दिल०—मैं एक पुराना गिरहकट, धोखेबाज़ चोर हूँ । मेरी आदत है खुशामद, शरारत, पाज़ीपन । मैं सियारसे भी ज़्यादा सयाना, कुत्तेसेभी ज़्यादा खुशामदी और चिड़ियोंसे भी बढ़कर बुलहवस (लंपट) हूँ ।

औरंग०—सुनो, मुझे मसखरापन पसन्द नहीं । तुम क्या काम कर सकते हो ?

दिल०—कुछ नहीं । जँभाई ले सकता हूँ, अँगड़ाई ले सकता हूँ, कोई काम कराओ तो उसे बिगाड़ सकता हूँ, गाली-गलोज़ करो तो उसे समझ सकता हूँ,—और कुछ नहीं कर सकता ।

औरंग०—जाने दो,—समझ गया । मुझे तुम्हारी ज़रूरत होगी । कुछ डर नहीं है ।

दिल०—भरोसा भी नहीं है ।

[वेश्याओंके साथ फिर मुरादका प्रवेश]

मुराद०—वाह वाह !—ये हूरें !—तुहफ़ा है !

औरंग०—तो तुम अब दिलबस्तगी करो । मैं जाता हूँ । तुम्हारे मसखरेको भी लिये जाता हूँ । इसकी बातमें मुझे बड़ा मज़ा आता है ।

मुराद—क्यों, आता है न ? कहता तो हूँ, यह एक नायाब गौहर है। अच्छी बात है, इसे ले जाओ। मुझे इस वक्त इससे भी अच्छी सोहबत मिल गई।

(दिलदारको लेकर औरंगज़ेबका प्रस्थान)

मुराद—नाचो, गाओ।

नाचना-गाना

[तर्ज़—मज़ा देते हैं क्या यार, तेरे बाल घुँघरवाले]

आये आये हैं हम यार, तुमको गले लगाने आये।
यह हुस्न, हँसी, यह गाना, जो कुछ है सो सब, जाना—
हम आज तुम्हें मनमाना, देंगे देंगे कर मन भाये ॥ आये०— ॥
चरनोंमें फूल चढ़ायें, यह हार गलेमें पिन्हायें,
बन दासी तुम्हें रिझायें, अब तो सुखके बादल छाये ॥ आये० ॥
ये ओंठ अमृतके प्याले, पी ले पी ले यार मज़ा ले।
सीनेसे खींच लगा ले, पूरा अर्माँ बस हो जाये ॥ आये० ॥
तन मन धन जीवन सारा, हमने तुमपर है वारा।
हसरत सुख, प्यार हमारा, तुममें पूरा बस हो जाये ॥ आये० ॥
यह हवा चमनसे आती, खुश करती, खुशबू लाती।
वह जमना भी लहराती, अपना सुन्दर रूप दिखाये ॥ आये० ॥
पी कहाँ पपीहा गाता, वह मीठी तान सुनाता।
मन लोट-पोट हो जाता, ऐसी खिली चाँदनी पाये ॥ आये० ॥
इस खिली चाँदनीहीमें, मर जायँ अगर तो जीमें—
दुख होगा नहीं; उसीमें मरना जन्नतसे बढ़ जाये ॥ आये० ॥
तेरे क़दमोंमें रहना, मरकर तुझको ही चहना।
मुतलक़ न झूठ यह कहना, इसके सिवा न कुछ मन भाये ॥ आये०
पड़ रहूँ नज़रके नीचे, यह चाह यहाँतक खींचे।
लाई हैं आँख मीचें, हमको, बने न बिन अपनाये ॥ आये० ॥
कर दो सरफ़राज़ तो आज, दस रह जाय न कुछ हो आज।
प्यारे आशिक़के सरताज, दिलबर दिलसे दिल मिल जाये ॥ आये० ॥

(गाना सुनते सुनते मुरादका मद्य-पान और धीरे धीरे आँखें बंद कर लेना)

(वेश्याओंका प्रस्थान)

[सिपाहियोंसहित औरंगज़ेबका प्रवेश]

औरंगज़ेब—बाँध लो !

मुराद०—(चौंककर) कौन ? भाई ! यह क्या ! दग़ाबाज़ी ? (उठना)

औरंग०—अगर हाथ-पैर हिलावे, तो क़त्ल कर डालो !—छोड़ो मत।

(सिपाही मुरादको कैद कर लेते हैं।)

औरंग०—इसे आगरे ले जाओ। मेरे शाहज़ादे मुहम्मद सुल्तान और शायस्ताखाँके हवाले कर देना। मैं रुक्क़ा लिखे देता हूँ।

मुराद—इसका बदला पाओगे—मैं तुमसे समझ लूँगा।

औरंग०—ले जाओ।

(हिरासतकी हालतमें मुरादका प्रस्थान)

औरंग०—या खुदा ! मेरा हाथ पकड़कर मुझे कहाँ लिये जा रहे हो ? मैं यह तख्त नहीं चाहता था। तुम्हींने हाथ पकड़कर मुझे इस तख्तपर बिठाया है। क्यों ? यह तुम्हीं जानो।

दूसरा दृश्य

स्थान—आगरेके क़िलेका शाही महल

समय—प्रातःकाल

[अकेले शाहजहाँ]

शाह०—सूरज निकल आया; वैसा ही, जैसा चमकीला और सुर्ख रंगका हमेशा निकला करता है। आसमान वैसा ही नीला है; यह जमना उसी तरह इठलाती बल खाती हुई अपनी पुरानी चालसे कलोलें करती बह रही है; उस पारके दरख्तोंका नीला रंग वैसा ही नज़र आ रहा है। सब कुछ वैसा

ही है जैसा कि मैं बचपनसे देख रहा हूँ। सिर्फ़ मैं ही बदल गया हूँ। (विषादके स्वरमें) मैं आज अपने ही बेटेकी हिरासतमें हूँ। मैं आज औरतोंकी तरह लाचार और बच्चोंकी तरह कमज़ोर हूँ। बीच बीचमें गुस्सेसे गरज़ उठता हूँ, लेकिन यह बे-मौसिमके बादलका गरजना—फ़िजूलका हाय हाय करना है! इस तरह कुढ़कुढ़कर मैं आप भीतर ही भीतर घुलता जा रहा हूँ। ओः! हिन्दोस्तानके बादशाह शाहजहाँकी आज यह हालत! (एक खंभेपर हाथ टेककर यमुनाकी ओर एकटक देखना)—यह कैसी आवाज़ है! यह! फिर! फिर!—यह कौन? जहानारा!

[जहानाराका प्रवेश]

शाह०—जहानारा, यह कैसा शोरोगुल है? यह फिर!—सुना? (उत्सुक भावसे) क्या दारा अपनी फौज और तोपें साथ लिये फ़तहयाब होकर आगरे लौट आया है? आओ बेटा! इस बेइन्साफ़ी बेदर्दी और जुल्मका बदला लो!—क्यों जहानारा, आँखें क्यों मूँद लीं? समझा बेटी, यह दाराकी फ़तहयाबीकी खुशखबर नहीं है—यह और एक बुरी खबर है। ठीक कहता हूँ न?

जहा०—हाँ अब्बाजान!

शाह०—मैं जानता हूँ, बदनसीबी अकेली नहीं आती; अपने साथ नई नई आफ़तें भी ले आती है। जब आफ़तोंका सिलसिला बँधा है, तो वह अपना पूरा ज़ोर दिखाये बिना नहीं रह सकता। क्यों बेटी, कौन-सी बुरी खबर है! यह कैसा शोरोगुल है?

जहा०—औरंगज़ेब आज बादशाह होकर दिल्लीके तख्तपर बैठा है। आगरेमें आज उसीका जल्सा है—उसीका यह शोरोगुल है।

शाह०—(जैसे सुना ही नहीं, इस ढंगसे) क्या! औरंगज़ेब—उसने क्या किया?

जहा०—वह आज दिल्लीके तख्तपर बैठा है।

शाह०—जहानारा, तू क्या कह रही है ? मैं ज़िन्दा हूँ, या मर गया ? औरंगज़ेब—नहीं—ग़ैर-मुमकिन है। जहानारा, तेरे सुननेमें भूल हुई है। यह क़हीं हो सकता है ! औरंगज़ेब—औरंगज़ेब यह काम नहीं कर सकता। उसका बाप अभीतक हयात है।—उसमें क्या कुछ भी समझ बाक़ी नहीं रही ? क्या उसकी आँखोंमें कुछ भी दुनियाकी शर्म नहीं है ?

जहा०—(काँपते हुए स्वरमें) जो शख़्स बूढ़े बापको दग़ासे क़ैद कर सकता है और उसे 'ज़िन्दादर गोर' बना सकता है, वह और क्या नहीं कर सकता ?

शाह०—तो भी—नहीं होगा ! ताज्जुब क्या है !—ताज्जुब क्या है !—यह क्या ! ज़मीनसे काला धुआँ निकलकर आसमानको चढ़ रहा है ! —आसमान स्याह हो गया ! शायद दुनिया उलट-पलट गई।—यह यह ! नहीं, क्या मैं पागल हुआ जा रहा हूँ !—यह वही तो नीला आसमान है, वैसा ही साफ-सुथरा सुहावना सवेरेका वक़्त है ? कुछ भी तो नहीं हुआ !— ताज़्जुब ! (कुछ चुप रहकर) जहानारा !

जहा०—अब्बा !

शाह०—(गद्गदस्वरसे) तू बाहर क्या देख आई ?—दुनियाका काम क्या ठीक उसी तरह चल रहा है ? माताएँ अपनी औलादोंको दूध पिला रही हैं ? औरतें अपने शौहरोंका घर देख रही हैं ? नौकर मालिकोंकी खिदमत कर रहे हैं ? लोग फ़क़ीरोंको भीख दे रहे हैं ? देख आई—इमारतें वैसी ही खड़ी हैं ? रास्तेमें लोग चल रहे हैं ? आदमी आदमीको खा नहीं रहा ?—देख आई ? देख आई ?

जहा०—अब्बाजान, कमीनी दुनिया उसी तरह अपना काम कर रही है ? क़ैदी शाहजहाँका खयाल किसीको नहीं है।

शाह—हाँ ?—सचमुच ?—वे यह नहीं कहते कि यह बड़ा भारी ज़ुल्म है ? वे यह नहीं कहते कि हमारे प्यारे रहमदिल ग़रीब-परवर शाहजहाँ-को किसकी मजाल है कि क़ैद कर रक्खे ? वे चिल्लाकर यह नहीं कहते कि

म बग़ावत करेंगे, औरंगज़ेबको पकड़कर क़ैद कर लेंगे, आगरेके क़िलेका ाटक तोड़कर अपने शाहजहाँको लाकर फिर तख्तपर बिठावेंगे?—यह नहीं हते? नहीं कहते?

जहा०—नहीं अब्बा, दुनिया किसीके लिए नहीं सोचती। सबको पनी अपनी पड़ी है। वे अपने अपने खयालमें ऐसे डूबे हुए हैं कि कल गर सूरज न निकले, एक ज़बर्दस्त आग आसमानको जलाती हुई सूरजकी गह दौरा करने लगे, तो वे उसीकी लाल रोशनीमें पहलेकी तरह अपना ाम करते रहेंगे।

शाह०—अगर मैं एक दफ़ा रिहाई पाकर क़िलेके बाहर जा सकता। हानारा, मौक़ा नहीं मिलता? सिर्फ़ एक दफ़ा तू छिपाकर मुझे क़िलेके हर ले जा सकती है?

जहा०—नहीं अब्बा, बाहर हज़ारों हथियारबन्द सिपाही पहरा दे रहे हैं।

शाह०—तब भी कुछ हर्ज नहीं। वे एक दिन मुझे अपना बादशाह नते थे। मैंने कभी उनसे बुरा बरताव नहीं किया। उनमें बहुतसे ऐसे होंगे न्हें रोजी देकर मैंने भूखों मरनेसे बचाया होगा—आफ़तोंसे छुड़ाया होगा—से रिहाई दी होगी। बदलेमें—

जहा०—नहीं अब्बा, इन्सान खुशामदी कुत्तेकी तरह खुशामदी होता । जो गोश्तका एक छीछड़ा दे सकता है, उसीके पैरोंके पास खड़े होकर दुम हिलाने लगता है।—इतना कमीना है! इतना नालायक है!

शाह०—तो भी मैं अगर, एक दफ़ा उनके पास जाकर खड़ा हो जाऊँ, सफ़ेद बालोंको बिखेरकर, कमज़ोरीसे काँपता हुआ मैं अगर ज़रीबका ारा लेकर उनके आगे खड़ा हो जाऊँ, तो उन्हें तरस न आवेगा? रहम आवेगा?

जहा०—अब्बा, अब दुनियामें तरस और रहमका नाम नहीं रहा। क़ने उन्हें तहस-नहस कर डाला। जो आगे बढ़तीके जमानेमें 'जय बाद- ह शाहजहाँकी जय'के नारेसे आसमानको हिला देते थे, वे ही अगर आज

आपकी इस जईफ़ मरीज़ मज़बूर सूरतको देखें, तो इस मुँहपर थूक देंगे और मेहरबानी करके न थूकेंगे, तो नफ़रतके साथ मुँह फेरकर चले जायँगे।

शाह०—ऐसी बात ! ऐसी बात !—(गम्भीर स्वरसे) अगर आज दुनियाकी यह हालत है,तो ज़रूर एक बड़ी भारी बला उसकी रगरगमें घुस गई है। तो फिर देर क्या है ? या खुदा ! अब उसे नेस्तनाबूद कर दो ! गला घोंटकर उसे अभी मार डालो ! अगर ऐसा ही है, तो ऐ आसमान, अभीतक तेरा रंग नीला क्यों है ? सूरज ! तू अभीतक आसमानके ऊपर क्यों है ? बेहया ! नीचे उतर आ ! एक बड़े भारी तूफ़ानमें तू चूरचूर हो जा ! भूचाल ! तू हुमककर इस ज़मीनकी छाती फाड़कर इसके टुकड़े टुकड़े उड़ा दे ! ऐ आग ! तू भभककर तमाम दुनियाको खाकमें मिला दे ! और क्या ही अच्छा हो, अगर एक भारी आँधी आकर वही खाक खुदाके मुँहपर डाल आवे !

तीसरा दृश्य

स्थान—राजपूतानेकी मरुभूमिका एक किनारा

समय—दिन दोपहर

[पेड़के तले दारा, नादिरा और सिपर बैठे हैं—
पास ही जोहरतउन्निसा सो रही है।]

नादिरा—प्यारे शौहर, अब नहीं चला जाता !—यहीं ज़रा आराम करो।

सिपर—हाँ अब्बा। ओः, कैसी प्यास लगी है !

दारा—आराम ! नादिरा, दुनियामें हमारे लिए आराम नहीं है। यह ऊपर मैदान देखती हो, जिसे हम अभी तय करके आये हैं।—देखती हो नादिरा !

नादिरा—देखती हूँ—ओः—

दारा—हमारे पीछे जैसा उजाड़ ऊसर है, हमारे सामने भी वैसा

है। पानी नहीं है, आँहु नहीं है, किनारा नहीं है—साँय साँय कर
है!

सिपर—अब्बा, बड़ी प्यास लगी है—ज़रा-सा पानी!

दारा—बेटा, पानी यहाँ नहीं है!

सिपर—अब्बा, पानी! पानी न मिलेगा तो मैं मर जाऊँगा।

दारा—(गुस्सेसे) हूँ!

नादिरा—देखो प्यारे, कहीं अगर ज़रा-सा पानी मिल सके तो लाओ।
ा बेहोश हुआ जा रहा है। प्यासके मारे मेरा भी कलेजा मुँहको आ
है।

दारा—क्या सिर्फ़ तुम्हीं लोगोंका यह हाल है नादिरा? प्याससे मेरा
नहीं सूख रहा? तुमको सिर्फ़ अपना ही खयाल है।

नादिरा—प्यारे, मैं अपने लिए नहीं कहती!—यह बेचारा—आहा—

दारा—मेरे भी कलेजेके भीतर एक आग लगी हुई है!—धाँय धाँय
रही है। उसपर इस बेचारे बच्चेका सूखा हुआ मुँह देख रहा हूँ—मुँहसे
नहीं निकलती—देखता हूँ—और नादिरा, क्या तुम समझती हो कि
दिलपर सदमा नहीं पहुँचता? लेकिन क्या करूँ—पानी नहीं है। कोस-
भीतर पानीकी बूँद भी नहीं है—नामो-निशान नहीं है।—ओः!
हालतमें मुझे डाल रक्खा है मेरे खुदा! अब नहीं सहा जाता।

सिपर—अब्बा, अब नहीं रहा जाता!

नादिरा—आहा मेरे बच्चे—मैं तुझपर कुर्बान जाऊँ—अब नहीं
जाता!

दारा—मरो—मरो—तुम सब मरो, मैं भी मरूं—आज यहीं हम
ा खातमा हो जाय!—हो जाय—यहीं हो जाय!

सिपर—अम्मी, ओः, बोला नहीं जाता। कैसी बेचैनी है अम्मी!

नादिरा—ओः, कैसी बेचैनी है!

दारा—नहीं, अब देखा नहीं जा सकता। मैं आज खुदासे बदला
। उसकी इस सड़ी हुई थोथी दुनियाको काटकर उसकी भारी बेईमा-

नीका पर्दाफाश कर दूँगा। मैं मरूँगा, लेकिन उससे पहले अपने हाथसे तुम सबको क़त्ल कर डालूँगा, तुमको मारकर मरूँगा ! (कटार निकालकर)

सिपर—अम्मीको मत मारो—मुझे मार डालो !

नादिरा—ना—ना—मुझे पहले मारो। मेरे देखते तुम बच्चेकी छातीमें कटार न मारने पाओगे !—मुझे पहले मारो।

सिपर—नहीं अब्बा, मुझे पहले मारो !

दारा—यह क्या मेरे अल्लाह !—यह फिर—बीच-बीचमें क्या दिखाते हो ! गहरे अँधेरेके बीचमें यह कैसी रोशनीकी झलक ! या खुदा ! या रहीम ! तुम्हारे पैदा किये हुए इन्सान ऐसे खूबसूरत, लेकिन ऐसे जल्लाद हैं !—इन मा-बेटोंका एक दूसरेको बचानेके लिए यह रोना—मगर तो भी कोई किसीको बचा नहीं सकता।—इतने ज़बर्दस्त लेकिन इतने कमजोर ! इतने ऊँचे, लेकिन इतने नीचे गिरे हुए !—यह रोना नहीं, आसमानसे पाक-साफ़ मोतियोंकी बारिश है। यह बहिश्त और दोजख़ एक साथ !—मेरे खुदा, यह कैसी पहेली है !

सिपर—अब्बा, अब्बा,—ओः ! (गिर पड़ता है।)

नादिरा—मेरा बच्चा ! (जाकर गोदमें उठा लेती है।)

दारा—यह फिर वही दोजख है,—ना-ना-ना यह रोशनीका वहम है ! यह शैतानी है ! यह दग़ा है ! अँधेरीकी ताक़त दिखानेके लिए यह एक जलता हुआ अंगारा है ! कुछ नहीं ! मैं तुम सबको क़त्ल करूँगा ! फिर खुदकुशी करूँगा—! (जोहरतकी ओर देखकर) वह सो रही है। उसको भी मारूँगा ! उसके बाद—तुम लोगोंकी लाशोंसे लिपटकर मैं भी जान दे दूँगा।—आओ, एक एक करके मेरे सामने आओ।

(नादिराको मारनेके लिए कटार खींचता है।)

सिपर—(होशमें आकर) मत मारो, मत मारो।

दारा—(सिपरको एक हाथसे दूर हटाकर कटार मारनेको तैयार होकर) मरनेके लिए तैयार हो जाओ।

नादिरा—मरनेसे पहले मुझे ज़रा इबादत कर लेने दो।

दारा—इबादत ! किसकी ? खुदाकी ? खुदा नहीं है ! सब ढोंग है, धोखेबाजी है । खुदा नहीं है ।—कहाँ है ?—कहाँ है ?—कौन कहता है, खुदा है ? अच्छा तो करो इबादत ।

नादिरा—आ बच्चे, मरनेसे पहले खुदाकी याद कर लें ।

(दोनों घुटने टेककर आँखें मूँद लेते हैं ।)

नादिरा—मेरे खुदा ! मेरे रहीम ! बड़े दुखमें आज तुम्हें पुकार रही हूँ । मालिक ! दुख दिया, अच्छा किया । तुम जो दोगे, उसे हम सर-आँखों-से क़बूल करेंगे । तो भी, तो भी, मरते वक़्त अगर लड़की-लड़के और प्यारे शौहरको खुश देखकर मर सकती !—

दारा—(देखते ही सहसा घुटने टेककर) या खुदा ! तुम शाहोंके शाह हो ! तुम नहीं हो, तो इतने बड़े इस दुनियाके कारखानेको चलाता कौन है ? कहाँसे वह क़ायदा आया कि जिसके ज़ोरसे ऐसी दो पाक चीज़ें दुनियामें नज़र आती हैं,—मा और औलाद । या खुदा ! तुमको मैंने अक्सर याद किया है, लेकिन ऐसे दुखमें, ऐसी आजिज़ीसे कलेजा थामकर, और कभी नहीं पुकारा । या रहीम !

[गऊ चरानेवाले एक मर्द और औरतका प्रवेश]

मर्द—तुम कौन हो ?

दारा—यह किसकी आवाज़ है ! (आँखें खोलकर) तुम लोग कौन हो ? ज़रा-सा पानी, ज़रा-सा पानी दो !—मुझे न दो, इस औरत और—इस बच्चेको दो ।

औरत—हाय हाय, बेचारे तड़प रहे हैं ! मैं अभी पानी लाती हूँ । तनिक धीरज धरो भैया ! (प्रस्थान)

मर्द—हाय हाय, बच्चेको साँस लेना कठिन हो रहा है !

दारा—जोहरत ! जोहरत ! मर गई ।

मर्द—नहीं, अभी मरी नहीं है । कैसी प्यारी लड़की है !

दारा—जोहरत !

जोहरत—(क्षीण स्वरसे) अब्बा !

[ग्वालिनका प्रवेश। जल देना। सबका जल पीना]

औरत—आओ भैया, हमारे घर चलो।

मर्द—आओ भैया !

दारा—तुम कौन हो ! तुम कोई फ़रिश्ते या देवता हो !—तुम्हें खुदाने भेजा है ?

मर्द—नहीं भैया, मैं एक चरवाहा हूँ !—यह मेरी स्त्री है।

दारा—तुममें इतनी मुहब्बत, इतनी मेहरबानी है ! इन्सानमें इतना रहम ! आदमीमें इतनी हमदर्दी ! यह भी क्या मुमकिन है ?

मर्द—क्यों भैया, तुमने क्या कभी कोई आदमी नहीं देखा ? तुम हमेशा शैतानोंको ही देखते रहे हो ?

दारा—क्या यही ठीक है ? वे सब शैतान ही हैं ?

औरत—यह तो आदमीका ही काम है भैया। अनाथको आश्रय देना, भूखेको खिलाना, प्यासेको पानी पिलाना,—यह तो आदमीका ही काम है भैया। केवल शैतान ही ऐसा न करेगा।—पर मुझे यह विश्वास नहीं कि कभी कभी ऐसा करनेका शैतानका भी जी न चाहता हो।—आओ भैया !

(सब जाते हैं।)

चौथा दृश्य

स्थान—मुंगेरके क़िलेका महल

समय—चाँदनी रात

[पियारा टहल-टहलकर गा रही है।]

आनन्द भैरवी, ठेका धमार

उलटा हुआ सारा काम।
घर बसाया चैनको जाना न था अंजाम।
आगसे वह जल गया, बस मैं रही नाकाम॥ उलटा०॥

गई, गोता लगाया जाय।
दीरसे मेरे लिए वह हाय ॥ उलटा० ॥
कहूँ क्या, ऐ सखी, सुन बात।
बरसता कर रहा उतपात ॥ उलटा० ॥

[शुजाका प्रवेश]

ाँ हो ! उधर मैं तुम्हें न जाने कहाँ कहाँ ढूँढ़ आया।

(पियारा गाती है।)

चढ़ी ऊँचे बढ़ाकर पाँव।
गिरी, कोई चला नहिं दाँव ॥ उलटा० ॥

ाद तुम्हारी आवाज़ सुननेसे मालूम हुआ कि तुम

(पियारा गाती है।)

मुझे थी, आह जीके साथ।
खो, आई गरीबी हाथ ॥ उलटा० ॥

ो—आ:—

(पियारा गाती है।)

गई मैं, मेहके जो पास।
ली, न पूरी हुई मेरी आस ॥ उलटा० ॥

नहीं ? तो मैं जाता हूँ।

(पियारा गाती है।)

कन्हाईकी, मुझे यह प्रीत।
ेक दुखदाई, हुई उलटी रीत ॥ उलटा० ॥

ान कर डाला ! मैं तो यहीं कहूँगा कि दुनियामें कोई । दूसरी ज़ोरू खसमके सिरपर सवार होती है ! अगर तो क्या तुम्हें एक बात सुनानेके लिए मुझे इतनी

मेरा ऐसा अच्छा गाना मिट्टी कर दिया ! मैं तो यही ई औरत उस मर्दके साथ शादी न करे जिसकी एक

जोरू मर चुकी हो। यह बात अगर न होती, तो तुम आकर मेरा ऐसा अच्छा गाना मिट्टी कर देते ? आः, परेशान कर डाला ! दिन-रात जंगकी ही खबर सुननी पड़ती है ! फिर तुम न जानते हो क़वायद (व्याकरण) न समझते हो गाना। परेशान कर डाला !

शुजा—यह तुमने कैसे जाना कि मैं गाना नहीं समझता ?

पियारा—ऐसा अच्छा गाना ! अहाहाहा !

शुजा—अपने गानेमें आप ही मस्त हो रही हो !

पियारा—क्या करूँ, तुम तो समझते ही नहीं। इसीसे गानेवाला और सुननेवाला मैं ही हूँ।

शुजा—गलत है। 'गानेवाला-सुननेवाला' नहीं, 'गानेवाली-सुनने-वाली' होगा।

पियारा—(सिटपिटाकर) तभी तो, तुमने सब मिट्टी कर दिया !

शुजा—इस वक़्त बात यह कहना है कि सुलेमान मुंगेरका क़िला छोड़कर चला गया है। क्यों, जानती हो ?

पियारा—(अनसुनी करके) वही तो !

शुजा—उसके बाप दाराने उसे बुला भेजा है। लेकिन इधर—

पियारा—(उसी भावसे) मुहाविरा ठीक है। क़वायदकी गलती नहीं है।

शुजा—अरे सुनो, दाराने दोनों बार औरंगज़ेबसे शिकस्त खाई है।

पियारा—(उसी भावसे) मैंने गलत नहीं कहा।

शुजा—तुम बात नहीं सुनोगी ?

पियारा—पहले यह मान लो कि मुझसे क़वायदकी गलती नहीं हुई।

शुजा—जरूर गलती हुई है।

पियारा—गलती बिलकुल नहीं हुई है।

शुजा—चलो, किससे पूछोगी ? पूछो।

पियारा—देखो, मैं कहती हूँ, आपसमें समझौता कर लो, नहीं तो

मैं इसके लिये ग़ज़ब ढा दूँगी। रात-भर चिल्लाऊँगी और देखूँगी कि तुम कैसे सोते हो। आपसमें समझौता कर लो।

शुजा—तो फिर मेरी बात सुनोगी?

पियारा—हाँ सुनूँगी।

शुजा—तो तुमने ग़लती नहीं कहा।—खासकर इसलिए कि तुम मेरी दूसरी बीबी हो। अब सुनो, खास बात है। बेढब मामला है, तुमसे सलाह पूछता हूँ।

पियारा—सलाह! अच्छा ठहरो, मैं तैयार हो लूँ। (चेहरा और पोशाक ठीक करके) यहाँ कोई ऊँची जगह भी नहीं है। अच्छा, खड़े खड़े ही सुनूँगी। कहो, मैं तैयार हूँ।

शुजा—मुझे यकीन है कि अब अब्बा इस दुनियामें नहीं हैं।

पियारा—मेरा भी ऐसा खयाल है।

शुजा—जयसिंहने मुझे जो बादशाहके दस्तखत दिखाये थे वह सब दाराका जाल था।

पियारा—ज़रूर ही—।

शुजा—मानती हो?

पियारा—मानती मैं कुछ नहीं, कहते जाओ।

शुजा—दूसरी लड़ाईमें भी औरंगज़ेबसे दाराने शिकस्त खाई, यह तुमने सुना?

पियारा—हाँ सुना है।

शुजा—किससे सुना?

पियारा—तुमसे।

शुजा—कब?

पियारा—अभी।

शुजा—दारा आगरा छोड़कर भाग गये और औरंगज़ेबने फ़तह पा आगरेमें जाकर अब्बाको क़ैद कर लिया है। उसने मुरादको भी हिरासतमें रख छोड़ा है।

पियारा—हूँ !

शुजा—औरंगज़ेब अब मुझसे लड़ेगा।

पियारा—मुमकिन है।

शुजा—और औरंगज़ेबसे अब मेरी लड़ाई होगी, तो वह लड़ाई बड़ी भारी होगी।

पियारा—इसमें क्या शक़ है !

शुजा—मुझे उसके लिए अभीसे तैयार हो जाना चाहिए।

पियारा—ज़रूरी बात है !

शुजा—लेकिन—

पियारा—मेरी भी ठीक यही सलाह है ! लेकिन—

शुजा—तुम क्या कह रहीं हो, मेरी समझमें नहीं आता।

पियारा—सच तो यह है कि उसे मैं भी बहुत अच्छी तरह नहीं समझ रही हूँ।

शुजा—जाने दो, तुमसे सलाह माँगना ही बेकार है।

पियारा—बिलकुल !

शुजा—लड़ाईका मामला तुम क्या समझोगी ?

पियारा—मैं क्या समझूँगी !

शुजा—लेकिन इधर और एक मुश्किल आ पड़ी है।

पियारा—वह क्या ?

शुजा—मुहम्मदने तो मुझे साफ़ लिख दिया है कि वह मेरी लड़कीसे शादी नहीं करेगा।

पियारा—ठीक तो है; वह कैसे करेगा !

शुजा—क्यों नहीं करेगा ? मेरी लड़कीसे उसकी मँगनी पक्की हो गई है। अब बदलनेसे कैसे काम चल सकता है !

पियारा—या अल्लाह, सचमुच कैसे काम चल सकता है !

शुजा—लेकिन, अब वह ब्याह करनेको राज़ी नहीं है।

पियारा—ठीक तो है, कैसे राज़ी होगा !

शुजा—लिखा है, मैं अपने बापके दुश्मनकी लड़कीसे शादी नहीं करूँगा।

पियारा—कैसे करेगा!

शुजा—लेकिन इधर इससे मेरी लड़कीको बड़ा सदमा पहुँचेगा।

पियारा—वह तो पहुँचेगा ही! क्यों न पहुँचेगा!

शुजा—मैं क्या करूँ, कुछ समझमें नहीं आता।

पियारा—मेरा भी यही हाल है।

शुजा—अब क्या किया जाय?

पियारा—हाँ, क्या किया जाय!

शुजा—तुमसे कोई मतलबकी बात पूछना बेकार है।

पियारा—समझ गये।—कैसे समझ गये! हाँजी, कैसे समझ गये! तुम बड़े समझदार हो!

शुजा—अब क्या करूँ? औरंगज़ेबसे लड़ाई! उसके साथ उसका बहादुर बेटा मुहम्मद है। सोचनेकी बात है। इसीसे सोच रहा हूँ। तुम क्या सलाह देती हो?

पियारा—प्यारे, मेरा कहा सुनोगे? सुनो तो कहूँ।

शुजा—कहो, सुनूँगा।

पियारा—तो सुनो। मैं कहती हूँ, लड़नेकी ज़रूरत नहीं है।

शुजा—क्यों?

पियारा—सल्तनत लेकर क्या होगा? हमें किस चीज़की कमी है? देखो, यह बंगालकी हरी-भरी धरती,—तरह तरहके फूलों, चिड़ियों और खूबसूरतियोंकी बहार। किसकी सल्तनत! मैं तुमको अपने दिलके तख्तपर बिठाकर पूज रही हूँ; उसके आगे तख्ते-ताऊस क्या चीज़ है! जब हम इस महलके ऊपरवाले बरामदेमें खड़े होते हैं, एक दूसरेके गलेसे गला लगा होता है,—हाथमें हाथ होता है,—हम तरह तरहकी चिड़ियोंकी बोलियाँ सुनते हैं,—दूरतक फैली हुई वह गंगाकी धारा देखते हैं,—दूरतक फैले हुए नीले आसमानके ऊपर हम दोनों एक दूसरेकी हमशरीक और प्यारी नज़रोंकी नाव बढ़ाते चले जाते हैं, उस नीले रंगके एक सुनसान किनारेपर एक तरहकी

पियारा—हूँ !

शुजा—औरंगज़ेब अब मुझसे लड़ेगा।

पियारा—मुमकिन है।

शुजा—और औरंगज़ेबसे अब मेरी लड़ाई होगी, तो वह लड़ाई बड़ी भारी होगी।

पियारा—इसमें क्या शक़ है !

शुजा—मुझे उसके लिए अभीसे तैयार हो जाना चाहिए।

पियारा—ज़रूरी बात है !

शुजा—लेकिन—

पियारा—मेरी भी ठीक यही सलाह है ! लेकिन—

शुजा—तुम क्या कह रहीं हो, मेरी समझमें नहीं आता।

पियारा—सच तो यह है कि उसे मैं भी बहुत अच्छी तरह नहीं समझ रही हूँ।

शुजा—जाने दो, तुमसे सलाह माँगना ही बेकार है।

पियारा—बिलकुल !

शुजा—लड़ाईका मामला तुम क्या समझोगी ?

पियारा—मैं क्या समझूँगी !

शुजा—लेकिन इधर और एक मुश्किल आ पड़ी है।

पियारा—वह क्या ?

शुजा—मुहम्मदने तो मुझे साफ़ लिख दिया है कि वह मेरी लड़कीसे शादी नहीं करेगा।

पियारा—ठीक तो है; वह कैसे करेगा !

शुजा—क्यों नहीं करेगा ? मेरी लड़कीसे उसकी मँगनी पक्की हो गई है। अब बदलनेसे कैसे काम चल सकता है !

पियारा—या अल्लाह, सचमुच कैसे काम चल सकता है !

शुजा—लेकिन, अब वह ब्याह करनेको राज़ी नहीं है।

पियारा—ठीक तो है, कैसे राज़ी होगा !

शुजा—लिखा है, मैं अपने बापके दुश्मनकी लड़कीसे शादी नहीं करूँगा।

पियारा—कैसे करेगा !

शुजा—लेकिन इधर इससे मेरी लड़कीको बड़ा सदमा पहुँचेगा।

पियारा—वह तो पहुँचेगा ही ! क्यों न पहुँचेगा !

शुजा—मैं क्या करूँ, कुछ समझमें नहीं आता।

पियारा—मेरा भी यही हाल है।

शुजा—अब क्या किया जाय ?

पियारा—हाँ, क्या किया जाय !

शुजा—तुमसे कोई मतलबकी बात पूछना बेकार है।

पियारा—समझ गये।—कैसे समझ गये ! हाँजी, कैसे समझ गये ! समझदार हो !

शुजा—अब क्या करूँ ? औरंगज़ेबसे लड़ाई ! उसके साथ उसका बेटा मुहम्मद है। सोचनेकी बात है। इसीसे सोच रहा हूँ। तुम क्या देती हो ?

पियारा—प्यारे, मेरा कहा सुनोगे ? सुनो तो कहूँ।

शुजा—कहो, सुनूँगा।

पियारा—तो सुनो। मैं कहती हूँ, लड़नेकी ज़रूरत नहीं है।

शुजा—क्यों ?

पियारा—सल्तनत लेकर क्या होगा ? हमें किस चीज़की कमी है ? यह बंगालकी हरी-भरी धरती,—तरह तरहके फूलों, चिड़ियों और तियोंकी बहार। किसकी सल्तनत ! मैं तुमको अपने दिलके तख्तपर र पूज रही हूँ; उसके आगे तख्ते-ताऊस क्या चीज़ है ! जब हम इस ऊपरवाले बरामदेमें खड़े होते हैं, एक दूसरेके गलेसे गला लगा होता हाथमें हाथ होता है,—हम तरह तरहकी चिड़ियोंकी बोलियाँ सुनते दूरतक फैली हुई वह गंगाकी धारा देखते हैं,—दूरतक फैले हुए नीले ानके ऊपर हम दोनों एक दूसरेकी हमशरीक और प्यारी नज़रोंकी नाव चले जाते हैं, उस नीले रंगके एक सुनसान किनारेपर एक तरहकी

खामोशी और खुशीकी फ़र्ज़ी जगह मानकर, उसमें एक ख्वाबेग़फलतके कुंजमें बैठकर, एक दूसरेकी तरफ़ एकटक देखते हैं,—दिलसे दिल मिलनेका मज़ा लूटते हैं,—तब क्या तुम्हें यह अहसास नहीं होता प्यारे, कि यह सल्तनत कोई चीज़ नहीं है ? प्यारे, यह लड़ाई अच्छी नहीं। हो सकता है कि हमारे पास जो नहीं वह भी हम न पावें, और जो है वह भी चला जाय !

शुजा—इससे तो तुमने और भी सोचमें डाल दिया। सोचते सोचते मेरा सिर फिर ही रहा था, उसपर,—नहीं बल्कि दाराकी हुकूमत मैं मान भी सकता था; औरंगज़ेबकी,—अपने छोटे भाईकी—हुकूमत, कभी मंज़ूर न करूँगा। नहीं—कभी नहीं। (प्रस्थान)

पियारा—तुमसे कुछ कहना बेकार है। तुम बहादुर हो।—सल्तनतके लिए शायद तुम लड़ते भी नहीं, मगर लड़नेके लिए लड़ोगे। तुमको मैं खूब पहचानती हूँ, लड़ाईका नाम सुनकर तुम नाच उठते हो।

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—दिल्लीका शाही दरबार

समय—प्रातःकाल

[सिंहासनपर औरंगज़ेब बैठे हैं। उनके पास मीरजुमला, शायस्ताखाँ इत्यादि सेनापति, मंत्रीगण, जयसिंह, और शरीर-रक्षक लोग उपस्थित हैं। सामने राजा जसवंतसिंह खड़े हैं।]

जसवन्त०—जहाँपनाह, मैं आया था सुल्तान शुजाके विरुद्ध युद्ध करनेमें आपको अपनी सेनासे सहायता देने। पर यहाँ आकर अब यह मेरा विचार बदल गया,—अब सहायता देनेको जी नहीं चाहता। मैं आज ही जोधपुर लौटा जा रहा हूँ।

औरंग०—महाराज जसवन्तसिंह, आपने नर्मदाकी लड़ाईमें मुरादकी मददकी थी, मगर इसके लिए मैं आपसे नाखुश नहीं हूँ। खैरख्वाहीका सुबूत मिलनेपर हम महाराजको अपना दियानतदार दोस्त समझेंगे।

जसवन्त०—जहाँपनाह प्रसन्न हों या अप्रसन्न, इससे जसवन्तसिंहका कुछ बनता-बिगड़ता नहीं। और मैं आज इस दरबारमें जहाँपनाहसे दयाकी भीख माँगने नहीं आया हूँ।

औरंग०—तो फिर महाराजाके यहाँ आनेका और क्या मतलब है?

जसवन्त०—मैं आपसे एक बार यह पूछने आया हूँ कि किस अपराधसे हमारे दयालु सम्राट् शाहजहाँ क़ैद हैं, और किस अधिकारसे आप उनके,—अपने पिताके—रहते उनके सिंहासनपर बैठे हैं?

औरंग०—इसकी कैफ़ियत क्या आज मुझे महाराजको देनी होगी?

जसवन्त०—दें न दें, आपकी इच्छा, मैं केवल आपसे पूछने आया हूँ।

औरंग—किस मतलबसे?

जसवन्त०—जहाँपनाहका उत्तर सुनकर मैं अपना कर्तव्य निश्चित करूँगा।

औरंग०—कैसे? अगर मैं कैफ़ियत न दूँ तो?

जसवन्त०—तो समझूँगा कि देनेके लिए जहाँपनाहके पास कुछ कैफ़ियत ही नहीं है।

औरंग०—आप जो चाहे समझें; उससे हमारा कुछ नफ़ा-नुक़सान नहीं। औरंगज़ेब खुदाके सिवा और किसीके आगे अपने कामोंकी कैफ़ियत नहीं देता।

जसवन्त०—अच्छी बात है। तो खुदाके आगे ही कैफ़ियत दीजिएगा।

(जानेको उद्यत होना)

औरंग०—ठहरिए राजा साहब!—मैं कैफ़ियत न दूँगा, तो आप क्या करेंगे?

जसवन्त०—भरसक बादशाह शाहजहाँको क़ैदसे छुड़ानेकी चेष्टा करूँगा। बस। छुड़ा सकूँगा या नहीं, यह दूसरी बात है; किन्तु अपना कर्तव्य मैं अवश्य करूँगा।

औरंग०—आप बग़ावत करेंगे?

जसवन्त०—बगावत ! सम्राट्का पक्ष लेकर युद्ध करनेका नाम विद्रोह नहीं है। विद्रोह किया है आपने। हो सकेगा तो मैं विद्रोहीको दंड दूँगा।

औरंग०—राजा साहब, अब तक मैं इम्तिहान ले रहा था कि आपकी हिम्मत कितनी है। पहले सुना था, पर इस वक्त देख रहा हूँ कि आप बड़े ही निडर हैं।—राजा साहब, हिन्दोस्तानका बादशाह औरंगज़ेब जोधपुरके राजा जसवंतसिंहकी दुश्मनीसे नहीं डरता। अगर आप चाहेंगे, तो मैदाने जंगमें और एक बार औरंगज़ेबको पहचान लेंगे।—मालूम हो गया, नर्मदाकी लड़ाईमें औरंगज़ेबको आपने अच्छी तरह नहीं पहचाना !

जसवन्त०—जहाँपनाह, नर्मदाके युद्धमें ? आप उस विजयकी बड़ाई करते हैं ? जसवंतसिंहने दया-धर्मका विचार करके आपकी थकी हुई निर्बल सेनापर आक्रमण नहीं किया। नहीं तो मेरी सेनाकी केवल फूँकहीमें औरंगज़ेब और उनकी सेना रुईकी तरह उड़ जाती। इतनी दयाके बदलेमें जसवन्तसिंह औरंगज़ेबकी दगाबाजीके लिए तैयार न था। यही उसका अपराध है।—जहाँपनाह, आज आप उसी जीतकी बड़ाई कर रहे हैं ?

औरंग०—महाराजा जसवन्तसिंह, खबरदार ! औरंगज़ेबकी सब्रकी भी हद है ! खबरदार !

जसवन्त०—सम्राट्, आँखें किसे दिखाते हैं ? आँखें दिखाकर आप जयसिंह जैसे आदमीको काबूमें कर सकते हैं। जसवंतसिंह की प्रकृति और ही है,—समझ लीजिएगा। जसवंतसिंह आपकी लाल लाल आँखोंको आपके तोपके गोलोंकी ही तरह तुच्छ समझता है।

मीरजुमला—राजा साहब, यह कैसी बात है ?

जसवन्त०—चुप रहो मीरजुमला ! राजा राजाकी लड़ाईमें जंगली गीदड़को क्या अधिकार है कि वह उनके बीचमें पड़े ? हममेंसे अभी कोई मरा नहीं। तुम्हारी बारी युद्धके बाद आती है,—तुम और यह शायस्ताखाँ—

(शायस्ताखाँ और मीरजुमलाका तलवार खींचना और 'खबरदार काफ़िर !' कहना)

शायस्ता०—जहाँपनाह, हुक्म हो !

(औरंगज़ेबका इशारेसे मना करना)

जसवन्त०—अच्छी जोड़ी मिली है,—मीरजुमला और शायस्ताखाँ,—मन्त्री और सेनापति। दोनों नमकहराम हैं। जैसा मालिक, वैसा नौकर।

शायस्ता०—देखिए तो इस काफ़िरकी मजाल जहाँपनाह,—कि हिन्दोस्तानके बादशाहके सामने—

जसवन्त०—कौन भारतका सम्राट् है ?

शायस्ता०—हिन्दोस्तानके बादशाह ग़ाज़ी आलमगीर !

[बुर्का डाले हुए जहानाराका प्रवेश]

जहानारा—झूठ बात है। हिन्दोस्तानका बादशाह औरंगज़ेब नहीं है। हिंदोस्तानके बादशाह शाहजहाँ हैं।

मीरजुमला—कौन है यह औरत ?

जहानारा—कौन है यह औरत ? यह औरत है बादशाह शाहजहाँकी लड़की जहानारा। (बुर्का उलटकर) क्यों औरंगज़ेब, तुम्हारा चेहरा एकाएक ज़र्द क्यों पड़ गया ?

औरंग०—बहन, तुम यहाँ कहाँ ?

जहानारा—मैं यहाँ क्यों आई, यह बात औरंगज़ेब, आज इस तख्तपर मजेसे बैठकर इन्सानकी आवाज़में पूछनेकी ताब तुममें है ? औरंगज़ेब, मैं यहाँ आई हूँ बादशाहसे बग़ावत करनेके तुम्हारे जुर्मकी नालिश करने।

औरंग०—किससे ?

जहानारा—खुदासे ! खुदा नहीं है, यह तुमने सोच रक्खा है, औरंगज़ेब ?

औरंग०—मैं यहाँ बैठकर उसी खुदाकी फ़क़ीरी कर रहा हूँ !

जहानारा—चुप रहो। खुदाका पाक नाम अपनी ज़बानसे न लो ! ज़बान जल जायगी। बिजली और तूफान, भूचाल और बाढ़, आग और मरी ! तुम सब लाखों बेगुनाह औरत-मर्दोंके घर उजाड़कर तोड़-फोड़कर, बहाकर, जलाकर, तबाह करके चले जाते हो, सिर्फ़ ऐसे ही लोगोंका कुछ नहीं कर सकते ?

औरंग०—मुहम्मद, इस पागल औरतको यहाँसे ले जाओ। यह दरबार है, पागलखाना नहीं। मुहम्मद!

जहानारा—देखूँ, इस दरबारमें किसकी मजाल है जो बादशाह शाहजहाँकी लड़कीके बदनपर हाथ लगावे।—वह चाहे औरंगज़ेबका लड़का हो या वज़ाते खुद शैतान।

औरंग०—मुहम्मद, ले जाओ।

मुहम्मद—मुआफ़ कीजिए अब्बाजान, मेरी इतनी मजाल नहीं।

जसवन्त०—बादशाहज़ादीके साथ किये हुए ऐसे बर्तावको हम नहीं सह सकते।

और सब—कभी नहीं।

औरंग०—सच है! गुस्सेमें कैसा अन्धा हो गया था कि अपनी बहनसे, बादशाह शाहजहाँकी बेटीसे, ऐसा बर्ताव करनेका हुक्म दे रहा था। बहन, महलमें जाओ। इस आम दरबारमें, सैकड़ों बुरी नज़रोंके सामने खड़ा होना मुनासिब नहीं,—बादशाह शाहजहाँकी लड़कीको यह ज़ेबा नहीं देता। तुम्हारी जगह महलसरा है।

जहानारा—औरंगज़ेब, यह मैं जानती हूँ। लेकिन जब भारी भूचालमें इमारतें गिर पड़ती हैं,—महलसरायें चूरचूर हो जाती हैं—तब जिन औरतोंको कभी सूरज-चाँदने भी नहीं देखा, वे भी बिना किसी लिहाज़के खुली सड़कपर आकर खड़ी हो जाती हैं। आज हिन्दुस्तानकी वही हालत है। आज एक भारी ज़ुल्मसे एक सल्तनतकी इमारत मिसमार हो रही है। इस वक़्त वह पिछला दस्तूर क़ायम नहीं रह सकता। आज जिस बेइंसाफ़ी, जिस उथल-पुथल, जिस भारी ज़ुल्म और शैतानियतका तमाशा हिंदोस्तानमें हो रहा है, वह शायद कभी कहीं नहीं हुआ। इतना बड़ा गुनाह, इतना बड़ा फ़रेब, आज धरमके नामपर चल रहा है; और ये भेड़ें आँखें बंद किये वही देख रही हैं। हिंदोस्तानके आदमी क्या आज सिर्फ़ चाबुककी चोटपर चलनेके ही आदी हो गये हैं? बुराइयोंके बहावमें क्या इंसाफ़, ईमान, इंसानियत,—इंसानके

ोंके खयालात,—सब बह गये ? इस वक़्त क्या खुदग़र्ज़ोंका ही राज है ?
से ही सबने अपना धरम-करम मान लिया है ? क्या यही मुनासिब है ?
ालारो, वज़ीरो, मुसाहिबो, मैं यह जानना चाहती हूँ कि तुमने किस बूते-
ादशाह शाहजहाँकी ज़िन्दगीमें ही उनके तख्तपर उनके नालायक बेटे
ाबको बिठला दिया है ?

औरंगज़ेब—मेरी बहन अगर यहाँसे नहीं जाना चाहतीं, तो आप सब
ाहर चले जाइए। बादशाहज़ादीकी इज़्ज़त बचाइए।

(सब बाहर जाना चाहते हैं।)

जहानारा—ठहरो। मेरा हुक्म है, ठहरो। मैं यहाँ तुम्हारे पास बेकार
हीं आई हूँ। मैं अपना कोई दुख भी तुम्हें सुनाने नहीं आई। मैं
ढ़े बापके लिए ही औरतकी शर्म हया और पर्देकी इज़्ज़तको लात
आई हूँ। सुनो।

सब—फ़र्माइए।

जहानारा—मैं एक दफ़ा तुम्हारे रूबरू खड़े होकर तुमसे पूछने आई हूँ
। अपने उस बहादुर, रहमदिल, गरीबपरवर बादशाह शाहजहाँको
हो ? या, इस दग़ाबाज, बापसे बग़ावत करनेवाले लुटेरे, शैतान औरं-
ो ?—याद रक्खो, अभी धरम दुनियासे उठ नहीं गया। अभी चाँद
ूरज निकलते हैं। अभी बाप-बेटेका रिश्ता माना जाता है। आज
क ही दिनमें, एक ही आदमीके पापसे खुदाका बनाया क़ायदा उलट
? यह नहीं हो सकता। ताक़तको क्या इतना घमंड हो गया है कि
फ़तहयाबीका डंका परस्तिशकी जगहके पाक अमनको लूट लेगा ?
की क्या ऐसी मजाल हो गई है कि वह बे-रोक-टोक मुहब्बतरहम-
ी छातीके ऊपरसे अपनी गाड़ीके खूनसे तर पहिए चलाता चला
? —बोलो।—तुम औरंगज़ेबसे डरते हो ? औरंगज़ेब क्या है ?
दोनों हाथोंमें कितनी ताक़त है ? तुम्हीं उसकी ताक़त हो। तुम
तो उसे तख्तपर बैठा सकते हो; और चाहो उसे तख्तसे उतारकर

कीचड़में लुटा सकते हो। तुम अगर बादशाह शाहजहाँको अब भी चाहते हो, शेरको बूढ़ा समझकर उसे लात मारना नहीं चाहते, तुम अगर इन्सान हो, तो मिलकर बलंद आवाज़से कहो, 'जय बादशाह शाहजहाँकी जय' देखोगे, औरंगज़ेब खौफ़के मारे आप ही तख्त छोड़ देगा।

सब—बादशाह शाहजहाँकी जय।

जहानारा—अच्छा तो—

औरंग०—(सिंहासनसे उतरकर) अच्छी बात है। मैंने तख्त छोड़ दिया। मुसाहिबो, अब्बाजान बीमार हैं और सल्तनतका काम नहीं कर सकते। अगर वह कर सकनेके क़ाबिल होते, तो दक्खिनसे मेरे यहाँ आनेकी ज़रूरत नहीं थी। मैंने बादशाह शाहजहाँके हाथसे सल्तनतका काम नहीं लिया,—दाराके हाथसे लिया है। अब्बा पहलेकी तरह सुखसे आरामके साथ आगरेके महलमें हैं। आप लोग अगर यह चाहते हो कि दारा बादशाह हो, तो कहिए, मैं उनको बुलाये लेता हूँ। दारा क्यों, अगर महाराजा जसवन्तसिंह बैठना चाहें, अगर वे या महाराज जयसिंह या और कोई सल्तनतके कामकी जिम्मेवारी लेनेको तैयार हो तो मुझे कुछ उज्र नहीं है। एक तरफ़ दारा, एक तरफ़ शुजा और एक तरफ़ मुराद है। इन दुश्मनोंको सिरपर रखकर कोई तख्तपर बैठना चाहे, बैठे। मुझे यक़ीन था कि आप लोगोंकी रायसे और कहनेसे मैं यहाँ तख्तपर बैठा हूँ। आप लोग यह न समझें कि तख्त मेरे लिए इनाम है। यह मेरे लिए एक तरहकी सज़ा है। मैं इस वक़्त तख्तपर नहीं बारूदकी ढेरपर बैठा हूँ। इसके सिवा इसी तख्तकी बज़हसे मैं मक्के जानेका सबाब नहीं हासिल कर पाता। आप लोग अगर चाहें कि दारा इस तख्तपर बैठे, हिन्दोस्तानमें राजाके बिना फिर ऊधम मचे—धरमका नाश हो, तो मैं अभी मक्के शरीफ़का सफ़र करता हूँ। वह तो मेरे लिए बड़े सुखकी बात है। बोलो—

(सब चुप हो रहते हैं।)

औरंग०—यह लो, मैंने अपना ताज तख्तके आगे रख दिया। मैं इस

तख्तपर बैठा हूँ आज—बादशाह के नाम पर—लेकिन वह भी बहुत दिनोंके लिए नहीं। राजमें अमन-चैन क़ायम करके, दाराके बे-सिलसिले कामोंको सिलसिलेसे ठीक और सहल करके, फिर आप जिसे कहें उसे बादशाहत देकर मैं मक्के जाना चाहता हूँ। यहाँ बैठे रहनेपर भी मेरा खयाल उधर ही है। वह मेरे जागतेका खयाल और सोतेका ख्वाब है। मैं उसी पाक जगहके खयालमें डूबा रहता- आप लोग अगर यही चाहें, तो मैं आज ही सल्तनतकी जिम्मेदारी छोड़कर मक्के चला जाऊँ। वह तो मेरे लिए बड़ी खुशक़िस्मती है। मेरे लिए आप लोग कुछ फ़िक्र न करें। आप लोग अपनी तरफ़ खयाल करके कहिए—जुल्म चाहते हैं या अमन? कहिए। मैं आप लोगोंकी मर्ज़ीके खिलाफ़ बादशाहत करना पसन्द नहीं करता; और आपकी मर्ज़ी होनेपर भी खड़े खड़े दाराके मनमाने जुल्म न देख सकूँगा। कहिए, आप लोगोंकी क्या मर्ज़ी है?—चलो मुहम्मद, मक्के चलनेके लिए तैयार हो जाओ।—बोलिए, आप लोगोंकी क्या मर्ज़ी है?

सब—जय बादशाह औरंगज़ेबकी जय।

औरंग०—अच्छी बात है, आप लोगोंका इरादा मालूम हो गया। अब आप लोग बाहर जायँ। मेरी बहनकी—शाहजहाँ बादशाहकी बेटीकी—बेइज्जती होना ठीक नहीं।

(औरंगज़ेब और जहानाराके सिवा सब जाते हैं)

जहानारा—औरंगज़ेब!

औरंग०—बहन!

जहानारा—खूब!—मुझसे तारीफ़ किये बिना नहीं रहा जाता। अबतक ताज्जुबसे चुप थी; तुम्हारी चालबाज़ीका तमाशा देख रही थी, जब होश आया तो देखा, तुम बाज़ी मार ले गये।—खूब!

औरंग०—मैं वायदा करता हूँ, अल्लाहकी क़सम खाता हूँ, जबतक मैं बादशाह हूँ तब तक तुमको और अब्बाको किसी बातकी कमी न होने पावेगी।

जहानारा—फिर कहती हूँ—खूब!

तीसरा अङ्क

पहला दृश्य

स्थान—खेजुवामें औरंगज़ेबका डेरा

समय—रात्रि

(औरंगज़ेब एक चिट्ठी लिये देख रहे हैं ।)

औरंग०—किश्त हाथीकी चाल । अच्छा—नहीं । उठती किश्तसे मेरी बाज़ी जाती रहेगी लेकिन—देखूँ—ऊँहूँ !—अच्छा यह हाथीकी किश्त दबा लेगी । उसके बाद यह किश्त । यह प्यादा—उसके बाद यह किश्त ! कहाँ जाओगे !—मात ! (उत्साहके साथ) मात (टहलते हैं ।)

[मीरजुमलाका प्रवेश]

औरंग०—वज़ीर साहब, हम इस जंगमें जीत गये ।

मीरजु०—जहाँपनाह, कैसे ?

औरंग—पहले आप तोपें चलावेंगे । उसके बाद मैं हाथियोंको लेकर उस चौकन्नी फौज़पर टूट पड़ूँगा । उसके बाद, मुहम्मदकी घुड़सवार फौज़ हमला करेगी । इन्हीं तीन किश्तोंसे दुश्मन मात हो जायगा ।

मीरजु०—और जसवन्तसिंह ?

औरंग०—उसपर मुझे अभी एतबार नहीं है । उसे अपनी आँखोंके सामने ही रखना होगा—हमारी और शुजाकी फौज़ोंके बीचमें; जिसमें वह हमें कुछ नुकसान न पहुँचा सके । मैं और मुहम्मद, दोनों उसके इधर-उधर रहेंगे । दुश्मनोंका हमला होगा खासकर जसवन्तसिंहकी राजपूत-फौज़के ऊपर । वे लड़ते खूब हैं । अगर उसमें कोताही करेंगे, तो पीछे तुम्हारी तोपोंकी बाढ़से काम लिया जायगा । हमें फ़तह ज़रूर मिलेगी ।—कल सबेरे तैयार रहना ।—इस वक़्त जा सकते हो ।

मीरजु०—जो हुक्म। (प्रस्थान)

औरंग०—जसवन्तसिंह!—यह खाली इम्तिहान है।

[मुहम्मदका प्रवेश]

औरंग०—मुहम्मद, तुम्हारी जगह है सामने, जसवन्तसिंहकी दाहिनी तरफ़। तुम सबके पीछे हमला करना। सिर्फ़ तैयार रहना। यह देखो नक़शा।

[मुहम्मद देखता है।]

औरंग०—समझे?

मुहम्मद—हाँ अब्बाजान।

औरंग०—अच्छा जाओ।—कल तड़के! (मुहम्मदका प्रस्थान)

औरंग०—शुजाकी एक लाख फौज गँवार है। मालूम होता है, ज्यादह तकलीफ़ न उठानी पड़ेगी। एक दफ़ा हलचल डालनेसे ही काम हो जायगा—यह लो, महाराज जसवन्तसिंह आ गये।

[दिलदारके साथ जसवन्तसिंहका प्रवेश और कोर्निश करना]

औरंग०—मैंने आपको बुला भेजा है। मैंने खूब सोचकर सामने ही रखना मुनासिब समझा है।

जसवन्त०—मुझे?

औरंग०—क्यों, इसमें कुछ उज्र है?

जसवन्त०—नहीं, मुझे कुछ आपत्ति नहीं है।

औरंग०—आप कुछ पसोपेश कर रहे हैं?

जसवन्त०—शाहजादे मुहम्मदके आगे रहनेकी बात थी।

औरंग०—मैंने राय बदल दी है। वह आपके दाहिने रहेगा।

जसवन्त०—और मीरजुमला?

औरंग०—आपके पीछे। मैं आपकी बाईं तरफ़ रहूँगा।

जसवन्त०—ओः समझ गया। जहाँपनाह मुझे सन्देहकी दृष्टिसे देखते हैं।

औरंग०—महाराज खुद होशियार हैं। महाराजके साथ होशियारीकी चाल चलना बेकार है। महाराजको मैं साथ लाया हूँ, उसका सबब यही है कि मेरी ग़ैरहाज़िरीमें आप आगरेमें बलवा न करा दें।—आप शायद यह अच्छी तरह जानते होंगे।

जसवन्त०—नहीं, इतना मैंने नहीं सोचा था। जहाँपनाह, मुझे अपने चतुर होनेका घमंड था। किन्तु मैं देखता हूँ, इस बातमें मैं जहाँ-पनाहके आगे बच्चा ही हूँ।

औरंग०—अब आपका क्या इरादा है ?

जसवन्त०—जहाँपनाह, राजपूत लोग विश्वासघात करना नहीं जानते। परंतु आप लोग—कमसे कम आप—उन्हें विश्वासघातकी राहपर चलानेकी चेष्टा कर रहे हैं। मगर जहाँपनाह, सावधान ! इस राजपूत जातिको अपना शत्रु बनाकर बिगाड़िएगा नहीं। मित्रतामें राजपूतके बराबर कोई मित्र नहीं और शत्रुतामें राजपूत जैसा भयंकर शत्रु भी नहीं।—सावधान !

औरंग०—राजा साहब, औरंगज़ेबके सामने भौंहोंमें बल डालनेसे कोई फायदा नहीं। जाइए। मेरा यही हुक्म है। इसीके मुताबिक काम कीजिएगा। नहीं तो—आप जानते हैं औरंगज़ेबको !

जसवन्त०—जानता हूँ और आप भी जानते हैं जसवंतसिंहको। मैं किसीका नौकर या ताबेदार नहीं हूँ। मैं इस आज्ञाका पालन नहीं करूँगा।

औरंग०—राजा साहब यक़ीन कीजिएगा, औरंगज़ेब कभी किसीको मुआफ़ नहीं करता। समझ बूझकर काम कीजिएगा !

जसवन्त०—और आप भी निश्चय जानिए कि जसवंतसिंह कभी किसीसे नहीं डरता। सोच समझकर काम कीजिएगा !

औरंग०—यह भी क्या मुमकिन है !—जसवंतसिंह !

जसवंत०—औरंगज़ेब !

औरंग०—अगर मैं तुम्हें क़ैद कर लूँ, तुम्हें कौन बचाएगा ?

जसवंत—यह तलवार। समझ लो, इस दुर्दिनमें भी महाराज जसवंत-सिंहके एक इशारेसे तीस हज़ार राजपूतोंकी तलवारें एक साथ सूर्यकी किरणों-में चमक उठती हैं और इस गए गुजरे समयमें भी राजपूत राजपूत ही हैं। (प्रस्थान)

औरंग०—निशाना चूक गया। जरा आगे बढ़ गया। इस राजपूतोंकी क़ौमको अच्छी तरह पहचान नहीं सका। उनमें इतनी शान है ! इतना घमंड है ! नहीं पहचान सका।

दिलदार०—पहचानोगे कैसे जहाँपनाह आप ? आप चालबाजीकी दुनियामें रहते हैं। आप देखते आ रहे हैं सिर्फ़ धोखेबाजी, खुशामद, नमक-हरामी। उन्हें काबू करना आपके बायें हाथका खेल है। लेकिन यह एक जुदा ही ढंगकी दुनिया है। इस दुनियाके लोग जानसे बढ़कर शानको समझते हैं।

औरंग०—हूँ, देखूँ।—अब भी अगर कुछ इलाज़ कर सकूँ। लेकिन जान पड़ता है, अब मर्ज़ लाइलाज़ हो गया है, हिकमत काम नहीं कर सकती ! (प्रस्थान)

दिलदार०—दिलदार ! तुम घुसे थे सुई होकर—अब कहीं कुल्हाड़ी होकर न निकलो, मुझे यही डर है। पहले सबक लेने वाला ! उसके बाद मसखरा ! उसके बाद राज-काजके ढंगोंका जानकार ! उसके बाद शायद दानिशमंद (दार्शनिक)—उसके बाद ?

(बातें करते-करते औरंगज़ेब और मीरजुमलाका फिर प्रवेश)

औरंग०—सिर्फ़ यह देखते रहना कि कुछ नुकसान न पहुँचा सके।

मीर०—जो हुक्म।

औरंग०—उसकी आँखें बहुत सुर्ख हो गई थीं। एकदम जान का खौफ़ नहीं है। राजपूतोंकी क़ौम ही ऐसी है।

मीर०—मैंने देखा है जहाँपनाह, एक तोपसे बढ़कर एक राजपूत खौफ़नाक होता है।

औरंग०—देखना, खूब होशियार रहना।

मीर०—जो हुक्म।

औरंग०—ज़रा मुहम्मदको मेरे पास भेज देना—नहीं, मैं ही उसके डेरेमें जाता हूँ। (प्रस्थान)

मीर०—इस जंगमें औरंगज़ेब जैसे घबराये हुए हैं, वैसे पिछले किसी जंगमें नहीं घबराये। भाई-भाईकी लड़ाई है—इसीसे शायद यह बात है!—ओः! भाई-भाईका झगड़ा है—कैसा कुदरती कानूनके खिलाफ़ काम है! कैसे कड़े जीका काम है?

दिल०—और कैसा जोश दिलानेवाला है! यह नशा सब नशोंसे बढ़कर है। वज़ीरसाहब, यह किसी तरह मेरी समझमें नहीं आता कि दुश्मनी बढ़ानेके लिए इंसानने क्यों इतने मज़हब बनाये—जब घर हीमें ऐसे बड़े-बड़े दुश्मन मौजूद हैं। क्योंकि भाईके-बराबर दुश्मन कोई नहीं है!

मीर०—क्यों?

दिल०—यह देखिए, वज़ीरसाहब, हिंदू और मुसलमान, इनका एक दूसरेसे क्या मेल मिलता है? पहले खुदाके दिये हुए चेहरेको ही लीजिए, उसे खींच-तानकर जहाँ तक बदला गया वहाँ तक बदल डाला। मुसलमान रखते हैं दाढ़ी सामने,—हिंदू रखते हैं चोटी पीछे (वह भी सामने न रखेंगे) मुसलमान पश्चिमको मुँह करके नमाज पढ़ते हैं, हिंदू लोग पूरब को मुँह करके पूजा-पाठ करते हैं। ये लाँग नहीं लगाते, वे लगाते हैं। ये दाहिनी तरफसे लिखते हैं, वे बाईं तरफ़से लिखते हैं—लिखते हैं कि नहीं?

मीर०—लिखते हैं।

दिल०—तब भी यह कहना पड़ेगा कि हिंदू लोग मुसलमानोंकी अमलदारीमें एक तरहसे सुखसे हैं। वे और सब कुछ मान सकते हैं, लेकिन अपने किसी भाईकी हुकूमत नहीं मान सकते!

(मीरजुमलाका हास्य)

दिल०—(जाते जाते) क्यों ठीक है न?

मीर०—(जाते जाते) हाँ ठीक है।

दूसरा दृश्य

स्थान—खेजुवामें शुजाका डेरा

समय—संध्या

[शुजा एक नक़शा देख रहे हैं। पियारा फूलोंकी माला हाथमें लिये हुए गाती हुई प्रवेश करती है।]

ग़ज़ल

सुबहसे मैंने ये बैठे-बैठे, बनाई माला है जान मेरी।
डालूँ तुम्हारे गलेमें आओ, सुहाई माला है जान मेरी॥
सुबहसे मैंने नहीं किया कुछ, लगा हुआ जी इसीमें था बस।
बकुल-तले बैठकर निराले, बनाई माला है जान मेरी॥
सुना रहा तान था पपीहा, कहीं छिपा डालियोंमें बैठा।
उसीमें होकर मगन वहींपर, बनाई माला है जान मेरी॥
हवासे हिलती थीं डालियाँ सब, खुशीसे ज्यों झूमने लगी थीं।
वही खुशी ले यहाँ हूँ आई, बनाई माला है जान मेरी॥
सुबहकी जैसी हँसी छिटककर, सुनहली रंगत पड़ी चमनमें।
उसीमें मैंने निहाल होकर, बनाई माला है जान मेरी॥
न सिर्फ़ है फूल इसमें प्यारे, हवाका गाना चमनका खिलना,
खुशी सुबहकी मिलाके मैंने, बनाई माला है जान मेरी॥
सभीसे बढ़कर हँसी तुम्हारी, मिली है इसमें, इसीसे इसको
गलेमें पहनो, तुम्हारे कारन बनाई माला है जान मेरी॥

(माला शुजाके गलेमें डालती है।)

शुजा—(हँसकर) पियारा, यह क्या मेरे लिए जयमाल है ? मैंने तो अभी फ़तहयाबी नहीं हासिल की।

पियारा—इससे क्या होता है ! मेरे नज़दीक तुम सदा फ़तहयाब हो। तुम्हारी मुहब्बतके क़ैदखानेमें मैं क़ैद हूँ। तुम मेरे मालिक हो, मैं तुम्हारी ज़र-ख़रीद लौंडी हूँ। क्या हुक्म है ? (घुटने टेकती है।)

शुजा—यह तो तुमने एक बड़े मज़ेका नया ढंग निकाला।—अच्छा जाओ क़ैदी, मैंने तुमको रिहाई दी।

पियारा—मैं रिहाई नहीं चाहती, मुझे यह गुलामी ही पसन्द है।

शुजा—सुनो। मैं एक सोचमें पड़ा हूँ।

पियारा—वह सोच है क्या ? देखूँ, अगर मैं उसको मिटानेकी कुछ तरकीब कर सकूँ।

शुजा—(युद्धका नक़शा दिखाकर) देखो पियारा, यहाँपर मीरजुमला की तोपें हैं, यहाँपर मुहम्मदके पाँच-हजार सवार हैं, और इस जगहपर खुद औरंगज़ेब है।

पियारा—कहाँ ? मैं तो सिर्फ़ एक कागज़ देख रही हूँ। और तो कुछ भी नहीं देख पड़ता।

शुजा—इस वक़्त इसी तरह है। लेकिन इस लड़ाईके वक़्त कौन कहाँपर रहेगा—यह कहा नहीं जा सकता।

पियारा—कुछ कहा नहीं जा सकता।

शुजा—औरंगज़ेबका दस्तूर यह है कि जैसे ही उसकी तरफ़ तोपके गोले बरसाये जाते हैं, ठीक वैसे ही वह घोड़ा दौड़ाए आकर हमला करता है।

पियारा—हाँ, तब तो यह मामूली या सहल बात नहीं है।

शुजा—तुम कुछ नहीं समझतीं।

पियारा—जान गये !—कैसे जान गये ? हाँ—बताओ न; किस तरह जान गये ? ताज़्जुब है, बिलकुल ठीक जान गये।

शुजा—मेरी फ़ौज क़वायद नहीं जानती। अगर जसवन्तसिंहको मिला सकूँ—एक दफ़ा लिखकर देखूँगा। लेकिन अच्छा,—तुम क्या कहती हो ?

यारा—मैंने तुमसे कहना सुनना छोड़ दिया है।

ा—क्यों ?

यारा—तुमसे कुछ कहो, तो तुम उसे कभी सुनते नहीं। मैं तुमको
रह पहचानती हूँ। तुम जो ठान लेते हो वह ठान लेते हो। मुझसे
पूछते ज़रूर हो, लेकिन अपने खिलाफ़ राय सुनते ही चिढ़ जाते हो।

ा—वह—हाँ जो चाहो समझो।

यारा—इसीसे मैं पतिव्रता हिन्दू औरतकी तरह हूँ-हाँ करके टाल

ा—सच है। कुसूर मेरा ही है। मैं सलाह माँगता ज़रूर हूँ,
सलाह न होनेसे चिढ़ जाता हूँ।—तुमने ठीक कहा। लेकिन
रनेकी कोई तदबीर नहीं है ?

यारा—नहीं। सुधारनेकी कोई तदबीर होती, तो मैं तुम्हें सुधारती।
इसका जतन नहीं करती। मौज़से गाना गाती हूँ।

ा—गाना ही गाओ। तुम्हारा गाना एक तरहकी शराब है।
ओं और तकलीफ़ोंको दूर कर देता है। कड़ी वारदातोंको दुनियासे
जाता है। तब मुझे जान पड़ता है, जैसे एक सुरकी झनकार मुझे
है। यह आसमान, वह दुनिया, कुछ नहीं देख पड़ता। गाओ—
ई होगी। बहुत देर है। जो होना है वही होगा। गाओ।

यारा—तो वह गाना सुननेके लिए पहले इस पूरे चाँदकी चाँदनीमें
बीयतको नहला लो। अपनी ख्वाहिशके फूलोंपर मुहब्बतका चन्दन
ो—उसके बाद मैं गाना गाऊँ—और तुम अपने वे फूल मेरे
ढ़ाओ !

ा—हाः हाः हाः ! तुमने खूब कहा—हालाँकि मैं तुम्हारी इस
ठीक तौरसे रस नहीं ले सका।

यारा—चुप। मैं गाना गाऊँ, तुम सुनो। पहले इस जगहपर सहारा
तरह बैठो। उसके बाद, हाथको इस जगह इस तरह रक्खो।

उसके बाद, आखें मूँदो—जैसे ईसाई लोग इबादतके वक़्त आँखें मूँदते हैं—हालाँकि मुँहसे कहते हैं कि "या खुदा, हमें अँधेरेसे रोशनीमें ले चल"—लेकिन असलमें खुदाने जितनी रोशनी दी है, आँख मूँदकर उससे भी हाथ धो बैठते हैं।

शुजा—हाः हाः हाः ! तुम बहुत-सी बातें करती हो, लेकिन जब इन बगला-भगतोंका ठट्ठा उड़ाती हो, तब वह जैसा मीठा लगता है—क्योंकि मैं कोई धरम ही नहीं मानता।

पियारा—'क़वायद' की ग़लती है। 'जैसा' कहनेपर उसके साथ ज़रूर एक 'वैसा' कहना चाहिए।

शुजा—दारा हिंदू-धरमका तरफ़दार है—बना हुआ है। औरंगज़ेब कट्टर मुसलमान है—वह भी ढोंगी है। मुराद भी मुसलमान है—कट्टर नहीं है—पर ढोंगी है।

पियारा—और तुम कोई भी धरम नहीं मानते—तुम भी बने हुए हो।

शुजा—कैसे ?—मैं किसी धरमका दिखावा नहीं करता। मैं साफ़ साफ़ कहता हूँ कि मैं बादशाह होना चाहता हूँ।

पियारा—तुम्हारा यही ढोंग है।

शुजा—ढोंग कैसे है ? मैं दाराकी हुकूमत माननेको राज़ी था। लेकिन औरंगज़ेब और मुरादकी हुकूमत नहीं मान सकता। मैं उनका बड़ा भाई हूँ।

पियारा—ढोंग है—बड़ा भाई भी होना ढोंग है !

शुजा—कैसे ? मैं पहले जो पैदा हुआ था।

पियारा—पहले पैदा होना भी ढोंग है और पहले पैदा होनेमें तुम्हारी बहादुरी भी कुछ नहीं है। उसकी वजहसे तुम तख़्तपर ज़्यादह दावा नहीं कर सकते।

शुजा—क्यों ?

पियारा—हमारा बावर्ची रहमतउल्ला तुमसे बहुत पहले पैदा हुआ होगा, तो फिर तख़्तपर तुमसे बढ़कर उसका दावा है।

शुजा—वह तो बादशाहका बेटा नहीं है ?

पियारा—बादशाहका बेटा बननेमें कितनी देर लगती है ?

शुजा—हाः हाः हाः ! तुम इसी तरहकी बहस करोगी ? नहीं, तुम गाना गाओ—अगर हो सके तो।

पियारा—सुनो। लेकिन खूब मन लगाकर सुनो—(गाती है।)

ठुमरी

मन बाँध लिया किस बंधनमें, दिलदार दिलारा साँवरिया।
मैं जा न सकूँ उसे तोड़ कहीं, मुझे क़ैद किया मुझे मोह लिया॥मन०
दिलचस्प छिपी हुई बेड़ी है ये, यह क़ैद है प्यारी प्रान-प्रिया।
चले जानेमें पैर रुके, न बढ़े, बिरहाकी कथा कसकावै हिया॥मन०
मिलनेकी हँसी खुशी और वही एक प्यारमें सब दुख दूर किया।
इस क़ैदमें राहत चाहतकी मिलती है मुझे सुख पाए जिया॥मन०

शुजा—पियारा, खुदाने तुमको क्यों बनाया था ? यह रूप, यह तबियत, यह मसखरापन, यह गाना; ऐसी एक नायाब अजीब चीज़ खुदाने इस सुख्त दुनियामें क्यों पैदा की ?

पियारा—तुम्हारे लिए प्यारे !

तीसरा दृश्य

स्थान—अहमदाबाद, दाराका डेरा

समय—रात

दारा—ताज़्जुब है ! जो दारा एक दिन सिपहसालारों और राजा-महाराजाओंपर हुक्म चलाता था, वह एक जगहसे दूसरी जगह भागता हुआ आज दूसरेके दरवाज़ेपर रहमका तालिब है; और उसके दरवाज़ेपर, जो औरंगज़ेब और मुरादका ससुर है। मैंने कभी नहीं सोचा था कि मेरी इतनी तनज़्ज़ुली होगी।

नादिरा—क्या शाहज़ादे सुलेमानकी कुछ खबर पाई है ?

दारा—उसकी खबर वही एक है। राजा जयसिंह उसे छोड़कर मय फ़ौजके औरंगज़ेबसे मिल गये हैं। बेचारा शाहज़ादा कुछ बचे हुए अपने साथियोंको लिये—उन्हें फ़ौज नहीं कह सकते—हरिद्वारके रास्ते मेरे पास लाहौर आ रहा था। राहमें औरंगज़ेबकी फ़ौजके कुछ सिपाहियोंने उसका पीछा किया और उसे वे श्रीनगर (काश्मीर) के किनारेतक खदेड़ ले गये। सुलेमान इस वक़्त श्रीनगरके राजा पृथ्वीसिंहके यहाँ पड़ा हुआ अपनी जान बचा रहा है। क्यों नादिरा, रो रही हो?

नादिरा—नहीं।

दारा—नहीं, रोओ। कुछ तसल्ली हो जायगी! हाय मैं अगर रो भी सकता।

नादिरा—फिर औरंगज़ेबसे लड़ाई करोगे ?

दारा—करूँगा। जबतक इस तनमें जान है, औरंगज़ेबकी हुकूमत कभी न मानूँगा। लड़ूँगा। वह मेरे बूढ़े बापको क़ैद करके आप तख्तपर बैठा है। मैं जबतक अब्बाको छुड़ा न सकूँगा, लड़ूँगा।—नादिरा, सिर क्यों झुका लिया? मेरा यह इरादा शायद तुमको पसंद नहीं है।--क्या करूँ—

नादिरा—नहीं प्यारे, तुम्हारी राय ही मेरी राय है। तुम्हारी मर्ज़ी ही मेरी मर्ज़ी है। मगर—

दारा—मगर ?

नादिरा—प्यारे, हमेशा यह खटका, यह सफ़र, यह भागना किस-लिए है ?

दारा—क्या करूँ बताओ? जब मेरे पाले पड़ी हो तब सहना ही पड़ेगा।

नादिरा—मैं अपने लिए नहीं कहती मालिक। मैं तुम्हारे ही लिए कहती हूँ। ज़रा आईनेमें अपना चेहरा देखो प्यारे, यह हड्डियोंका ढाँचा रह गया है। ये सफेद बाल और उदास फीकी नज़र—

तैयारी कर रहा हूँ। इस थोड़ी-सी फ़ौजको लेकर औरंगज़ेबसे लड़ सकना ग़ैरमुमकिन है; इसीसे और फ़ौज जमा कर रहा हूँ।

दारा—किस तरह ?

शाहन०—महाराजा जसवन्तसिंहसे मददकी माँग की है।

दारा—उन्होंने मदद देना मंजूर कर लिया है ?

शाहन०—कर लिया है।—कोई डर नहीं है शाहज़ादा साहब, आइए—आप आज मेरे मेहमान हैं। आप बादशाहके बड़े बेटे हैं। आप उनके पसंद किये हुए वालिए-मुल्क हैं। मैं एक बूढ़ा आदमी होनेपर भी शाही खान्दानका ईमानदार खादिम हूँ। बूढ़े बादशाहके लिए मैं जंग करूँगा। फ़तह न मिलेगी, जान तो दे सकूँगा! बूढ़ा हुआ हूँ, एक सवाब करके आक़बत तो बना लूँ!

दारा—तो आप मुझे सहारा देते हैं ?

शाहन०—सहारा शाहज़ादे, आजसे मेरा घर-बार सब आपका है। मैं शाहज़ादेका गुलाम हूँ।

दारा—आप वली अल्लाह (महात्मा) हैं।

शाहन०—शाहज़ादे साहब, मैं वली नहीं, एक मामूली आदमी हूँ। और आज जो मैं कर रहा हूँ, उसे मैं कोई ग़ैर मामूली काम नहीं समझता। शाहज़ादे साहब, मेरी इतनी उम्र आई है—मैं ज़ोर देकर कह सकता हूँ कि जान कर मैंने कभी कोई अधरम नहीं किया। लेकिन साथ ही अच्छे काम भी ज़्यादह नहीं किये। आज अगर मौक़ा हाथ लगा है, तो एक अच्छे कामको क्यों जाने दूँ ?

(दोनोंका प्रस्थान)

[जोहरतउन्निसाका फिर प्रवेश]

जोहरत—मैं इतनी नाचीज़, निकम्मी और नाकाम हूँ! अब्बाके किसी काम नहीं आती, सिर्फ़ एक बोझ हूँ!—हायरे निकम्मी औरतोंकी जात। मा-बापकी यह हालत देखती हूँ, पर कुछ कर नहीं सकती। बीच बीचमें

सिर्फ़ गर्म आँसू बहाती हूँ।—लेकिन मैं चाहे जो हो, कुछ करूँगी, कुछ पहाड़की चोटीसे कूदनेकी तरह दिलेरीका और क़त्लकी तरह ख़ौफ़नाक काम होगा। देखूँ।

चौथा दृश्य

स्थान—काश्मीर। राजा पृथ्वीसिंहका आराम-बाग़

समय—संध्या

[सुलेमान अकेला टहल रहा है।]

सुलेमान—इलाहाबादसे भागकर आखिर इस दूर पहाड़ी मुल्क काश्मीर-में आना पड़ा। अब्बाको मदद देनेके लिए निकला। कुछ न कर सका।—यह मुल्क बड़ा ही खूबसूरत और अच्छा है।—जैसे एक जमा हुआ गाना—एक मुसव्विरका खींचा हुआ ख्वाब, एक खुमारीसे भरा हुआ हुस्न—। गोया बहिश्तकी एक हूर आसमानसे उतर सैर करनेसे थकके, पैर फैला बर्फ़के पहाड़का (हिमालयका) सहारा लेकर, बाईं हथेलीपर गाल रक्खे हुए, नीले आसमानकी तरफ़ ताक रही है।—यह गानेकी आवाज़ कैसी सुनाई देती है! (दूरपर गाना सुन पड़ता है।)

सुलेमान—यह गानेकी आवाज़ तो धीरे धीरे पास ही आती जाती है।—वे एक सजी हुई नावपर बैठी हुई कई औरतें खुद डाँड़ चलाती हुई इधर ही आ रही हैं।—कैसा अच्छा, कैसा मीठा गाना है!

[एक सजे हुए बजरेपर श्रृंगार किए हुए स्त्रियोंका प्रवेश और गाना]

बिहाग—तिताला

समय सब यों ही बीता जाय।
आवेगा संग कौन हमारे, आये सो आ जाय॥ समय०॥
छोटा बजरा सजा हमारा, हिलता डुलता जाय।
जुही चमेलीके हारोंका हिलना रहा लुभाय॥ समय०॥

फहराती रेशमी पताका धीमी हवा सुहाय।
नदिया भीतर बालम बजरा हिलता डुलता जाय॥ समय०॥
प्रेमी नये मुसाफिर सारे नये प्रेमको पाय।
मगन उसीमें लगन लगायें हिये न प्रेम समाय॥ समय०॥
मुँहमें हँसी लँसी आँखोंमें रही खुमारी छाय।
बहते जाते प्रेम-पंकमें दुनिया दूर बहाय॥ समय०॥
पश्चिमका आकाश देखिए सन्ध्याकाल सुहाय।
यह लाली अनुराग सरीखी जीमें रही समाय॥ समय०॥
मधुर स्वप्न-सा उधर चाँद वह देख पड़े छबि छाय।
उमँग भरी नदिया लहराती कल-धुनि रही सुनाय॥ समय०॥
सीतल मंद सुगंध पवनमें बंसी-धुनि सरसाय।
छुटे फुहारा हर्ष-हँसीका लीजे गले लगाय॥ समय०॥

१ स्त्री—ऐ सुन्दर नौजवान, आप कौन है?

सुले०—मैं दारा शिकोहका लड़का सुलेमान हूँ।

१ स्त्री—बादशाह शाहजहाँके लड़के दारा शिकोह!—उनके बेटे हैं आप?

सुले०—हाँ, मैं उनका बेटा हूँ।

१ स्त्री—और मैं कौन हूँ, यह तुमने नहीं पूछा सुलेमान?—मैं काश्मीरकी मशहूर नाचने-गानेवाली राजाकी प्यारी रंडी हूँ। ये मेरी सहेलियाँ हैं!—आओ, हमारे साथ इस नावपर।

सुले०—तुम्हारे साथ? हाय बदनसीब औरत, किसलिए?

१ स्त्री—सुलेमान, तुम इतने नन्हें नादान नहीं हो। तुम हमा पेशेको तो जानते हो?

सुले०—जानता हूँ। जानता हूँ, इसीसे तुमपर मुझे इतना तरस है। यह रूप, यह ज़वानी क्या पेशेकी चीज़ है? रूप तन है, मुहब्बत उसकी ज़ान है। ऐ औरत, बेज़ानके तनको लेकर मैं क्या करूँगा?

१ स्त्री—क्यों ? हम क्या प्यार-मुहब्बत करना नहीं जानतीं ?

सुले०—जानोगी कहाँसे बताओ ! जिन्होंने हुस्नको बाज़ारकी चीज़ बना रक्खा है, जो अपनी हँसीतक ख़रीददारके हाथ बेचती हैं, वे प्यार करेंगी किस तरह ? प्यार तो सिर्फ़ देना ही चाहता है—वह सखी (दानी) का ही सुख है—भला उस सुखको तुम किस तरह समझ सकोगी मैया !

१ स्त्री—तो हम क्या कभी किसीको प्यार नहीं करतीं ?

सुले०—करती हो—तुम प्यार करती हो—ज़रदोज़ी पगड़ीको, हीरेकी अँगूठीको, कामदार जूतेको, हाथीदाँतकी छड़ीको। तुम प्यार कर सकती हो—धुँघराले बालोंको, बड़ी-बड़ी आँखोंको, ख़ूबसूरत चेहरेको, लाल-लाल होठोंको। मेरा यह ख़ूबसूरत चेहरा और गोरा रंग देखा है, या मैं बादशाहका पोता हूँ—यह सुना है, इसीसे शायद आशिक़ हो गई हो। यह तो प्यार नहीं है। प्यार होता है दो दिलोंमें।—जाओ मैया !

२ स्त्री—राजा साहब आ रहे हैं।

१ स्त्री—आज ऐसे बेवक़्त ?—चलो।—ऐ ज़वान ! तुम इसका फल पाओगे।

सुले०—क्यों ख़फ़ा होती हो मैया ! तुम लोगोंसे मुझे नफ़रत या दुश्मनी नहीं है। सिर्फ़ तरस आता है।— (गाते गाते स्त्रियोंका प्रस्थान)

सुले०—कैसे ताज्जुबकी बात है।—यह हूरोंका हुस्न, यह आँखोंकी चमक, यह अदा, यह कोयलका गला—इतना ख़ूबसूरत—मगर इतना गंदा !

(टहलता है)

[श्रीनगरके राजा पृथ्वीसिंहका प्रवेश]

राजा—शाहज़ादे, अफ़सोस !

सुले०—क्यों राजा साहब ?

राजा—मैंने तुम्हें विपत्तिमें निराश्रय देखकर आश्रय दिया था; और भर-सक सुखसे रक्खा था तुम्हारे लिए मैंने औरंगज़ेबकी सेनासे युद्ध भी किया

सुले०—राजा साहब, मैंने कभी इससे इनकार नहीं किया।

राजा—इस समय भी शायस्ताखाँ बादशाहकी ओरसे—तुम्हें पकड़वा देनेके लिए—बहुत कुछ कह सुन रहे थे—लालच दिखा रहे थे । मैं तब भी राज़ी नहीं हुआ ।

सुले०—मैं आपका हमेशा अहसानमन्द रहूँगा ।

राजा—मगर तुम ऐसे ओछे, खोटे और बदमाश हो, यह मैं न जानता था ।

सुले०—यह क्या राजा साहब !

राजा—मैंने तुम्हें अपने महलके बाहरके बाग़में टहलनेके लिए छोड़ दिया था । तुम वहाँसे भीतर आरामबाग़में घुसकर मेरी रखैलसे हँसी दिल्लगी करोगे, यह मुझे मालूम न था ।

सुले०—राजा साहब, आपको धोखा हुआ ।

राजा—तुम सुन्दर, नौजवान, शाहज़ादे हो । मगर इसीसे इस—

सुले०—राजा साहब, मैं—

राजा—जाओ शाहज़ादे ! सफ़ाई देना बेकार है ।

(दोनोंका दो ओर प्रस्थान)

पांचवां दृश्य

स्थान—प्रयाग, औरंगज़ेबका डेरा

समय—रात

[औरंगज़ेब अकेले]

औरंग०—कैसे जीवटका आदमी यह राजा जसवंतसिंह है ! खेजुवाके मैदाने-जंगमें पिछली रातको मेरी बेगमोंके डेरों तकको लूटकर एक बाढ़की तरह मेरी फ़ौज़के ऊपरसे चला गया !—ताज्जुब ! जो हो शुजासे इस लड़ाईमें जीत गया ।—लेकिन उधर फिर काली घटा उठ रही है । और एक आँधी आवेगी । शाहनवाज़ और दारा । साथ जसवंतसिंह भी है । खतरेकी जगह है । अगर—नहीं, वह न करूँगा । इस जयसिंहकी मार्फ़त ही करना होगा ।—यह लो, राजा साहब आ ही गये ।

[जयसिंहका प्रवेश]

जय०—जहाँपनाहने मुझे याद किया है ?

औरंग०—हाँ, मैं आपकी राह देख रहा था। आइए—ओः शिद्दतकी गर्मी पड़ रही है !

जय०—बड़ी गर्मी है।

औरंग०—मेरे बदनसे जैसे आगकी चिनगारियाँ निकल रही हैं।—आपकी तबीयत तो अच्छी है ?

जय०—जहाँपनाहकी मेहरबानीसे बंदा बहुत अच्छा है।

औरंग०—देखिए राजा साहब, मैं कल सबेरे दिल्लीको लौटूँगा, आप भी मेरे साथ लौटेंगे न ?

जय०—जैसी आज्ञा हो—

औरंग०—मैं चाहता हूँ, आप मेरे साथ चलें।

जय०—जो आज्ञा, मैं आठों पहर तैयार हूँ। जहाँपनाहकी आज्ञाका पालन करनेहीमें मुझे आनंद है।

औरंग०—सो जानता हूँ राजा साहब। आप जैसा दोस्त इस दुनियामें मुश्किलसे मिलेगा। आपको मैं अपना दाहिना हाथ समझता हूँ।

(जयसिंह सलाम करते हैं।)

औरंग०—राजा साहब, बड़े अफ़सोसकी बात है कि महाराज जसवन्तसिंह मेरा डेरा और रसद लूट कर ही चुप नहीं हैं। वे बाग़ी शाहनवाज़ और दाराके साथ मिल गये हैं।

जय०— उनकी मूर्खता है।

औरंग०—मैं अपने लिए अफ़सोस नहीं करता। राजा साहब ही अपनी शामत आप बुला रहे हैं।

जय०—बड़े दुःखकी बात है।

औरंग०—खासकर आप उनके जिगरी दोस्त हैं। आपकी ख़ातिर मैंने उनकी गुश्ताख़ी मुआफ़ की। यहाँ तक कि मैं उनकी लूट-पाटको भी

मुश्राफ़ करनेके लिए तैयार हूँ—सिर्फ़ आपके लिहाज़से—अगर वे अब भी चुप होकर बैठ जायँ।

जय०—मैं क्या एक दफ़ा उनसे मिलकर कहूँ ?

औरंग०—कहनेसे अच्छा होगा। मुझे आपके लिए फ़िक्र है। वे आपके दोस्त हैं, इसीलिए मैं उन्हें अपना दोस्त बनाना चाहता हूँ। उन्हें सज़ा देनेमें मुझे बड़ी तकलीफ़ होगी।

जय०—अच्छा, मैं उनसे मिलकर कहूँ ?

औरंग०—हाँ कहिएगा। और यह भी जता दीजिए कि अगर वे इस लड़ाईमें किसीकी तरफ़ न होंगे तो आपकी खातिर उनके सब कुसूर मुआफ़ कर दूँगा, और उन्हें गुजरातका सूबा तक देनेको तैयार हूँ—सिर्फ़ आपकी खातिर।

जय०—जहाँपनाह उदार हैं। मैं उन्हें ज़रूर राज़ी कर सकूँगा।

औरंग०—देखिए, वे आपके दोस्त हैं। आपका फ़र्ज़ है उन्हें बचाना।

जय०—ज़रूर।

औरंग०—तो अब आप जाइए राजासाहब। दिल्ली रवाना होनेकी तैयारी कीजिए।

जय०—जो आज्ञा। (प्रस्थान)

औरंग०—'सिर्फ़ आपकी खातिर।'—ढोंग तो बुरा नहीं रहा ! यह राजपूतोंकी क़ौम बहुत सीधी और ज़रासी फैयाज़ी दिखानेसे क़ाबूमें आजानेवाली होती है।—मैं इस फ़नको भी मश्क़ कर रहा हूँ।—बड़ा खौफ़नाक यह मेल है।—शाहनवाज़ और जसवन्तसिंह—लेकिन मैं यहाँपर खटका खाता हूँ इस अपने लड़के मुहम्मदसे। उसका चेहरा—(गर्दन हिलाना) कम बोलता है। मेरे बारेमें बेएतबारीका बीज न जाने किसने उसके जीमें बो दिया है। क्या जहानाराने ऐसा किया है ?—वह लो, मुहम्मद आ ही गया।

[मुहम्मदका प्रवेश]

मुहम्मद—अब्बा, आपने मुझे बुला भेजा है ?

औरंग०—हाँ, मैं कल दिल्लीको लौट रहा हूँ। तुम शुजाका पीछा करना। मीरजुमलाको तुम्हारी मददके लिए छोड़े जाता हूँ।

मुह०—जो हुक्म अब्बा।

औरंग०—अच्छा जाओ।—खड़े हो! इस बारेमें कुछ कहना है?

मुह०—नहीं अब्बा, आपका हुक्म ही काफ़ी है।

औरंग०—तो फिर?

मुह०—मेरी एक अर्ज़ है अब्बाजान!

औरंग०—क्या?—चुप क्यों हो गये? कहो बेटा!

मुह०—बहुत दिनसे पूछ-पूछ कर रहा हूँ। अब यह शक अपने दिलमें दबाकर रखना दुश्वार हो गया है। बेअदबी मुआफ़ हो।

औरंग०—कहो।

मुह०—अब्बा, बादशाह शाहजहाँ क्या क़ैद हैं?

औरंग०—नहीं, कौन कहता है?

मुह०—तो फिर वे क़िलेके महलमें क्यों रोक रक्खे गये हैं?

औरंग०—इसकी ज़रूरत आ पड़ी है।

मुह०—और छोटे चाचा-उन्हें भी इस तरह क़ैद रखनेकी ज़रूरत है?

औरंग०—हाँ।

मुह०—और बाबाजानकी मौजूदगीमें आपके तख्तपर बैठनेकी भी ज़रूरत है?

औरंग०—हाँ बेटा।

मुह०—अब्बा! (इतना ही कहकर सिर झुका लेता है)

औरंग०—बेटा, सल्तनतके मुआमले बड़े टेढ़े होते हैं। इस उम्रमें तुम उनको नहीं समझ सकोगे। इसकी कोशिश मत करो।

मुह०—अब्बाजान, धोखेसे भोले भाईको क़ैद करना, मुहब्बत करने-वाले मेहरबान बापको तख्तसे उतारना, और दीनकी दुहाई देकर इस तख्तपर बैठना—इसे अगर राजनीति कहते हैं, तो वह राजनीति मेरे लिए नहीं है

औरंग०—मुहम्मद, तुम्हारी तबीयत क्या कुछ खराब है ? ज़रूर ऐसी बात है !

मुह०—(काँपती हुई आवाज़में) नहीं अब्बा, फ़िलहाल मुझ जैसा तन्दुरुस्त आदमी शायद हिन्दोस्तानमें और न होगा।

औरंग०—फिर !— (मुहम्मद चुप रहता है

औरंग०—बेटा, मेरे ऊपर तुम्हारे दिलमें जो एतबार था, उसे किसने डिगा दिया ?

मुह०—खुद आपने। अब्बाजान, जब तक मुमकिन था, मैं आँख मूँदकर आपपर एतबार करता रहा। लेकिन अब ग़ैर-मुमकिन है। शकका ज़हर मेरी रग-रगमें फैल गया है।

औरंग०—यही तुम्हारी सआदतमंदी है !—हो सकता है।— चिराग़के तले ही अँधेरा होता है।

मुह०—सआदतमंदी !—अब्बाजान, सआदतमंदी क्या आज मुझे आपसे सीखनी होगी ? सआदतमंदी !—आपने अपने बूढ़े बापको क़ैद करके जो तख्त छीन लिया है, उसी तख्तको मैंने सआदतमंदीके खयालसे लात मार दी है। सआदतमंदी ! अगर सआदतमंद न होता, तो आज दिल्लीके तख्तपर औरंगज़ेब न बैठते, बैठता यही मुहम्मद।

औरंग०—यह तो जानता हूँ बेटा, इसीसे ताज्जुब कर रहा हूँ।— इस सआदतमंदीको न गँवाना बेटा !

मुह०—ना, अब मुमकिन नहीं है। बापका लिहाज़ और सआदत-मंदी बहुत बड़ी और बहुत ही पाक चीज़ है। लेकिन उससे बढ़कर भी कोई ऐसी चीज़ है, जिसके आगे बाप-मा-भाई सब छोटे हो जाते हैं।

औरंग०—मैं कहता हूँ बेटा, सआदतमंदी न गँवाना। देखो, आगे चलकर यह सल्तनत तुम्हारी ही होगी।

मुह०—अब्बा, मुझे आप सल्तनतका लालच दिखा रहे हैं ? मैं आपसे कह चुका हूँ कि अपने फ़र्ज़का खयाल करके मैंने तख्त-ताजको लात मार

दी । बाबाजान उस दिन यही सल्तनतका लालच दिखा रहे थे, आज आप फिर उसी सल्तनतका लालच दिखा रहे हैं। हाय ! दुनियामें सल्तनत क्या ऐसी बेशक़ीमत चीज़ है ? और तमीज़ क्या ऐसी सस्ती है ? सल्तनतके लिए तमीज़को (विवेकको) लात मार दूँ ? अब्बा, आपने तमीज़के खिलाफ़ जो सल्तनत हासिल की है, वह सल्तनत क्या आक़बतमें आपके साथ जायगी ?—लेकिन अगर आप तमीज़को न छोड़ते, तो वह आपके साथ जाती ।

औरंग०—मुहम्मद !

मुह०—अब्बा !

औरंग०—इसके क्या माने ?

मुह०—इसके माने यह हैं कि मैंने आपके लिए सब गँवा दिया—आज आपको भी अपने भीतर खोजकर नहीं पाता—शायद आपको भी मैंने गँवा दिया । आज मुझ जैसा कंगाल कौन है !—और आपने—आपने यह हिन्दोस्तानकी सल्तनत ज़रूर पाई है ।—लेकिन इससे बढ़कर सल्तनत गँवा दी ।

औरंग०—वह सल्तनत कौन-सी है ?

मुह०—मेरी सआदतमंदी !—वह कैसा रतन, वह कैसी दौलत थी—जिसे आपने खो दिया, यह आज आपकी समझमें नहीं आता । जान पड़ता है, एक दिन समझमें आ जायगा ।　　　　(प्रस्थान)

[औरंगज़ेब धीरे धीरे दूसरी ओर जाते हैं]

छठा दृश्य

स्थान—जोधपुरका महल

समय—दोपहर

[जसवन्तसिंह और जयसिंह]

जय०—मगर इस रक्तपातसे आपको लाभ ?

जसवन्त०—लाभ ? लाभ कुछ भी नहीं ।

जय०—तो इस वृथा रक्तपातकी क्या ज़रूरत है, जब यह निश्चय है कि इस युद्धमें औरंगज़ेबकी ही जय होगी ?

जसवंत०—कौन जाने !

जय०—क्या आपने औरंगज़ेबको किसी युद्धमें हारते देखा है ?

जसवन्त०—नहीं । औरंगज़ेब वीर पुरुष है, इसमें संदेह नहीं । उस दिन मैंने नर्मदा-युद्धके बीच उसे घोड़ेपर सवार देखा था। उस दृश्यको मैं इस जीवनमें कभी न भूलूँगा। वह मौन था, उसकी दृष्टि तीक्ष्ण और भौंहोंमें बल पड़े हुए थे। उसके चारों ओर तीर, गोले, बरस रहे थे, पर उधर उसका ध्यान ही न था। मैं उस समय विद्वेषके कारण जल रहा था, मगर मन ही मन उसे साधुवाद दिये बिना भी मुझसे नहीं रहा गया। औरंगज़ेब वीर है।

जय०—फिर ?

जसवंत०—मैं नर्मदा-युद्धके अपमानका बदला चाहता हूँ।

जय०—औरंगज़ेबके डेरे लूटकर तो आपने उसका बदला चुका लिया।

जसवन्त०—नहीं, यथेष्ट नहीं हुआ। क्योंकि उस रसदकी कमीका पूरा करना औरंगज़ेबको क्या खलेगा। अगर लूटकर चला न आता, शुजासे मिल जाता, तो खेजुवाके युद्धमें शुजाकी हार न होती । अथवा आगरेमें आकर बादशाह शाहजहाँको क़ैदसे छुड़ा देता, तब भी एक बात थी । बड़ा धोखा हो गया।

जय०—पर इससे आपको क्या लाभ होता ? बादशाह दारा हों, शुजा हों, या औरंगज़ेब ही हों—आपका क्या ?

जसवन्त०—बदला। मैं उन सबको विष-दृष्टिसे देखता हूँ । परन्तु सबसे अधिक विष-दृष्टिसे देखता हूँ—इस शठ औरंगज़ेबको।

जय०—फिर खेजुवाके युद्धमें आपने उनका पक्ष क्यों लिया था ?

जसवन्त०—उस दिन दिल्लीके शाही दरबारमें उसकी सब बातोंपर मैंने विश्वास कर लिया था। उसने एकाएक ऐसा बढ़िया ढोंग रचा, ऐसा स्वार्थ-त्यागका अभिनय किया, ऐसी हृदयकी दीनता प्रकट की कि मैं अचम्भेमें आ गया। मैंने सोचा, यह क्या ! मेरी जन्मकी धारणा, मेरा प्रकृतिगत विश्वास

क्या सब भूल ही है ! ऐसे त्यागी, महत्, उदार, धार्मिक, पुरुषको मैंने अपनी कल्पनासे पापी समझ रखा था ! ऐसा जादू फेर दिया कि सबसे पहले मैं ही 'जय औरंगज़ेबकी जय' कहकर चिल्ला उठा । उसकी उस दिनकी वह जय—नर्मदाके या खेजुवाके युद्धसे भी अद्भुत है । किन्तु उस खेजुवाकी युद्ध-भूमिमें फिर असली औरंगज़ेब देख पड़ा—वही कपटी, शठ, कुचक्री औरंगज़ेब नज़र आया ।

जय०—महाराज, खेजुवाके मैदानमें आपसे रूखा बर्ताव करनेके कारण बादशाहको बड़ा पछतावा है । ऐसा अपराध कभी कभी सबसे हो जाता है । बादशाहको पीछेसे यथार्थ ही पश्चात्ताप हुआ था ।

जसवन्त०—राजा साहब, आप मुझसे इसपर विश्वास करनेके लिए कहते हैं ?

जय०—मगर वह बात जाने दीजिए; बादशाह उसके लिए आपसे क्षमा भी नहीं चाहते और क्षमा-प्रार्थना भी करवाना नहीं चाहते । वे समझते हैं, आपके पिछले आचरणसे उस अन्यायका बदला चुक गया । वे आपकी सहायता नहीं चाहते । वे चाहते हैं कि आप दाराका भी पक्ष न लीजिए और औरंज़ेगबका भी पक्ष न लीजिए । इसके बदलेमें वह आपको गुजरातका सूबा दे देंगे । आप एक कल्पित अपमानका बदला लेनेमें अपनी शक्तिका क्षय करके मोल लेंगे, औरंगज़ेबकी शत्रुता और हाथ समेटे अलग बैठ रहनेसे उसके बदलेमें पावेंगे, एक बड़ा भारी सूबा गुजरात । छाँट लीजिए। अपना सर्वस्व देकर अगर शत्रुता खरीदना चाहते हैं, तो खरीदिए । यह महज़ रोज़गारकी बात है, सिर्फ़ बेचना-खरीदना है ।—देख लीजिए ।

जसवन्त०—मगर दारा—

जय०—दारा आपके कौन हैं ? वे भी मुसलमान हैं, औरंगज़ेब भी मुसलमान है । आप अगर अपने देशके लिए युद्ध करने जाते तो मैं कुछ कहता ही नहीं । मगर दारा आपके कौन हैं ? आप किस लिए राजपूत जातिका रक्तपात करने जा रहे हैं ? दाराकी ही अगर विजय हो, तो उससे आपका क्या लाभ है, आपकी जन्मभूमिका ही क्या लाभ है ?

दारा—आज अगर मेरा यह चेहरा तुम्हें नापसन्द हो; तो मैं क्या कर सकता हूँ।

नादिरा—मैं क्या यही कह रही हूँ ?

दारा—औरतोंका स्वभाव ही यही है।—तुम्हारा क्या ! तुम सिर्फ़ सिफ़ारिश, फ़र्माइश और नालिश कर सकती हो। तुम हम लोगोंके सुखमें रुकावट और दुखमें बोझ हो।

नादिरा—(भर्राई हुई आवाज़से) प्यारे, सचमुच क्या यही बात है ? (हाथ पकड़ती है।)

दारा—जाओ, इस वक़्त तुम्हारा यह मिनमिनाना अच्छा नहीं लगता। (हाथ छुड़ाकर चल देता है)

नादिरा—(कुछ देरतक आँखोंमें रूमाल लगाये रहकर विषादके गम्भीर स्वरमें) मेरे रहीम ! बस अब और नहीं।—यहींपर पर्दा गिराकर यह खेल ख़त्म कर दो। सल्तनत गँवाई, महलोंके ऐश छोड़कर चली आई, रास्तेमें धूप सही, सर्दी सही, सोई नहीं, खाना नहीं खाया,—इसी तरह बहुत-से दिन गुज़ारने पड़े और रातें काटनी पड़ीं, सब हँसते हँसते सह लिया, क्योंकि शौहरका प्यार बना हुआ था। लेकिन आज (कण्ठरोध), बस अब नहीं ! अब नहीं ! सब सह सकती हूँ, सिर्फ़ यही नहीं सह सकती। (रोती है)

[सिपरका प्रवेश]

सिपर—अम्मी, यह क्या ? तुम रो रही हो अम्मीजान !

नादिरा—नहीं बेटा, मैं रोती नहीं। ओः सिपर ! सिपर ! (रोती है।)

सिपर—(पास आकर नादिराके गलेमें हाथ डालकर आँखोंसे रूमाल हटाता है) अम्मी, रोती क्यों हो ? किसने तुम्हें चोट पहुँचाई है ? मैं उसे कभी मुआफ़ न करूँगा —मैं उसे—

(इतना कहकर सिपर नादिराके गलेसे लिपटकर छातीमें सिर रखकर रोता है। नादिरा उसे छातीसे लगा लेती है।)

[जोहरतउन्निसाका प्रवेश]

जोहरत—यह क्या !—अम्मी रो क्यों रही है सिपर ?

।—उन्हें यहाँ ले आओ सिपर!

(बाँदीके साथ सिपरका प्रस्थान)

।—देखूँ, शायद यहाँ सहारा मिल जाय।

[शाहनवाज़ और सिपरका प्रवेश]

नवाज़—शाहज़ादे साहब, तसलीम।

।—बन्दगी सुल्तान साहब,

नवाज़—जहाँपनाहने मुझे याद किया है?

।—हाँ सुल्तान साहब, मैंने आपसे मिलनेकी ख्वाहिश की थी।

न०—क्या हुक्म है?

।—हुक्म सुल्तान साहब, वह दिन अब नहीं रहा। आज आज़िज़ी

। माँगने आया हूँ। हुक्म देगा अब—औरंगज़ेब।

न०—औरंगज़ेब! उसका हुक्म मेरे लिए नहीं है।

।—क्यों सुलतान साहब, आज तो औरंगज़ेब हिन्दुस्तानका बाद-

न०—हिन्दुस्तानका बादशाह औरंगज़ेब! जो फ़क़ीरी और

रीका मस्नुई चेहरा लगाकर बूढ़े बापके खिलाफ़ बग़ावत करता है,

इब्बतका चेहरा लगाकर भाईको क़ैद करता है, दिखावटी दीनका

कर तख्तपर बैठता है—वह बादशाह है? मैं एक अँधे-लूले-

उस तख्तपर बैठाकर उसे बादशाह मानकर कोर्निश करनेको

लेकिन औरंगज़ेबको नहीं।

—यह क्या सुलतान साहब! औरंगज़ेब आपका दामाद है।

न०—औरंगज़ेब अगर मेरा दामाद न होकर मेरा बेटा होता

टा अकेला ही होता, तो भी मैं उसे छोड़ देता। अधरम और

ज़िन्दगी रहते मैं कभी कुबूल नहीं कर सकता!

०—तब आपने क्या तै किया है?

न०—मैं शाहज़ादे दाराकी तरफ़से लड़ूँगा। पहलेहीसे उसकी

नादिरा—ना जोहरत, मैं रोती नहीं हूँ।

जोहरत—अम्मी, तुम्हारी आँखोंमें आँसू तो मैंने कभी नहीं देखे। चाँदनीकी तरह हँसी हमेशा तुम्हारे ओठोंमें बसी रहती थी। भूखकी तकलीफ़में, नींद न आनेकी बेचैनीमें; बुरे दिनोंमें सच्चे दोस्तकी तरह हँसी तुम्हारे होठोंसे लगी ही रहती थी। आज यह क्या है अम्मी?

नादिरा—यह सदमा ज़बानसे कहा नहीं जा सकता जोहरत, आज मेरे खुदाने मुझसे मुँह फेर लिया।

[दाराका फिर प्रवेश]

दारा—नादिरा, मुझे मुआफ़ करो, मुझसे कुसूर हुआ। बाहर जाते ही मुझे होश आया। नादिरा—(नादिराका जोरसे रोना)

दारा—नादिरा, मैं अपना कुसूर कुबूल करता हूँ, मुआफ़ी माँगता हूँ। तब भी—छिः! नादिरा, अगर तुम जानतीं, अगर समझ सकतीं कि दिन रात मेरे ज़िगरमें कैसी आग सुलगा करती है तो—तो तुम मेरे इस बर्तावसे बुरा न मानतीं।

नादिरा—और प्यारे, अगर तुम जानते कि मैं तुम्हें कितना प्यार करती हूँ तो तुम, इतने सख्त न हो सकते।

सिपर—(अस्फुट स्वरमें) मैं तुमको देवताकी तरह मानता हूँ अब्बा!

(जोहरतका प्रस्थान)

नादिरा—नहीं बेटा, तुम्हारे अब्बाने मुझे कुछ नहीं कहा। मैं ही ज़रा ज़्यादह तुनुक-मिज़ाज हूँ—मेरा ही कुसूर है!

[बाँदीका प्रवेश]

बाँदी—बाहर एक साहब आपसे मिलनेके लिए खड़े हैं, खुदावन्द!

दारा—कौन है?

बाँदी—मालूम हुआ कि गुजरातके सूबेदार हैं।

दारा—सूबेदार आये हैं?

नादिरा—मैं भीतर जाती हूँ। (प्रस्थान)

जस०—तो आइए हम देशके लिए युद्ध करें। मेवाड़के राणा राजसिंह, बीकानेरके राजा, आप, और मैं, ये चारों जने मिलकर मुगलोंके राज्यको एक फूँकसे उड़ा दे सकते हैं,—आइए।

जय०—उसके बाद सम्राट कौन होगा?

जस०—क्यों, राणा राजसिंह।

जय०—मैं औरंगज़ेबकी अधीनता स्वीकार कर सकता हूँ, मगर राजसिंहका प्रभुत्व नहीं मान सकता।

जस०—क्यों राजा साहब?—वे अपनी जातिके हैं, इसलिए?

जय०—अवश्य। अपनी जातिके दुर्वचन नहीं सहूँगा। मैं किसी ऊँची प्रवृत्तिका ढोंग नहीं रचता। संसार मेरे निकट एक बाज़ार है। जहाँ कम दामोंमें अधिक माल पाऊँगा वहीं जाऊँगा। औरंगज़ेब कम दामोंमें अधिक दे रहा है। इस निश्चितको छोड़कर मैं अनिश्चितके लिए प्रयत्न करना नहीं चाहता।

जस०—!—अच्छा राजा साहब, आप जाकर विश्राम करें। मैं सोच समझकर उत्तर दूँगा।

जय०—अच्छी बात है। सोचकर देखिएगा,—यह केवल संसारमें बेचने खरीदनेका मामला है। और हम स्वाधीन राजा न हो सकें, राजभक्त प्रजा तो हो सकते हैं! राजभक्ति भी धर्म है। (प्रस्थान)

जस०—हिन्दू-साम्राज्य,—कविका स्वप्न है हिन्दुओंका हृदय बहुत ही सूखा, बिल्कुल ठंडा पड़ गया है। अब उसमें परस्पर जोड़ नहीं लग सकता। 'स्वाधीन राजा न हो सकें, राजभक्त प्रजा तो हो सकते हैं।' ठीक कहा जयसिंह, किसके लिए युद्ध करने जाऊँ? दारा मेरा कौन है?—नर्मदा-युद्धका बदला खेजुवाके युद्धमें ले ही लिया है।

[महामायाका प्रवेश]

महामाया—महाराज, इसको बदला कहते हैं? मैं अबतक आड़में खड़ी हुई तुम्हारे इस पौरुषहीन, समभार काँटेके पलड़ोंके ऐसे, आन्दोलनको देख रही थी। वाह! खूब! अच्छा समझ लिया कि बदला चुका लिया। इसे बदला कहते हैं महाराज? औरंगज़ेबके पक्षमें होकर उसके डेरे लूटकर

भागनेका नाम बदला है ? इसकी अपेक्षा तो वह हार अच्छी थी। यह हारके ऊपर पापका बोझ है। राजपूत जाति विश्वासघात कर सकती है, यह तुमने ही दिखलाया।

जस०—महामाया, लूट करनेके पहले मैंने औरंगजेबका पक्ष छोड़ दिया था।

महामाया—और उसके पीछे उसके डेरे लूट लिये ?

जस०—युद्ध करते करते लूट की है, डकैती नहीं की।

महा०—इसे युद्ध कहते हैं ?—धिक्कार है !

जस०—महामाया, तुम्हारे निकट इसके सिवा क्या और कोई बात ही नहीं ? दिन रात तुम्हारी तीखी झिड़कियाँ सुननेके लिए ही मैंने तुमसे ब्याह किया था ?

महा०—और नहीं तो क्यों ब्याह किया था ?

जस०—क्यों ! विचित्र प्रश्न है !—लोग ब्याह किसलिए करते हैं ?

महा०—हाँ, किस लिए ? संभोगके लिए ? विलास-वासनाको चरितार्थ करनेके लिए ? यही बात है ?—यही बात है ?

जस०—(कुछ इधर उधर करके) हाँ,—एक तरहसे यही कहना पड़ेगा।

महा०—तो फिर एक वेश्या क्यों न रख ली ?

जस०—जान पड़ता है, आँधी आ गई !

महा०—महाराज, जो तुम केवल अपनी पशु-प्रवृत्तिको चरितार्थ करना चाहते हो, तो उसका स्थान कुलकामिनीका पवित्र अन्तःपुर नहीं है, उसका स्थान वेश्याका सुसज्जित नरक है। वहीं जाओ। तुम रुपया दोगे, वह रूप देगी। तुम उसके पास लालसाके मारे जाओगे, और वह तुम्हारे पास आवेगी पापी पेटकी लालसाकी मारी ! स्वामी और स्त्रीका सम्बन्ध वैसा नहीं है !

जस०—फिर ?

महा०—स्वामी और स्त्रीका सम्बन्ध प्रेमका सम्बन्ध है। जो प्रेम प्रियतमको दिन दिन नज़रोंसे नहीं गिराता, दिन दिन और भी प्यारा बनाता

रा—उन्हें यहाँ ले आओ सिपर!

(बाँदीके साथ सिपरका प्रस्थान)

रा—देखूँ, शायद यहाँ सहारा मिल जाय।

[शाहनवाज़ और सिपरका प्रवेश]

हनवाज़—शाहज़ादे साहब, तसलीम।

रा—बन्दगी सुल्तान साहब,

हनवाज़—जहाँपनाहने मुझे याद किया है?

रा—हाँ सुल्तान साहब, मैंने आपसे मिलनेकी ख्वाहिश की थी।

हन०—क्या हुक्म है?

रा—हुक्म सुल्तान साहब, वह दिन अब नहीं रहा। आज आज़िज़ी

ख माँगने आया हूँ। हुक्म देगा अब—औरंगज़ेब।

हन०—औरंगज़ेब! उसका हुक्म मेरे लिए नहीं है।

रा—क्यों सुलतान साहब, आज तो औरंगज़ेब हिन्दुस्तानका बाद-

हन०—हिन्दुस्तानका बादशाह औरंगज़ेब! जो फ़क़ीरी और रवरीका मस्नुई चेहरा लगाकर बूढ़े बापके खिलाफ़ बग़ावत करता है, मुहब्बतका चेहरा लगाकर भाईको क़ैद करता है, दिखावटी दीनका गाकर तख्तपर बैठता है—वह बादशाह है? मैं एक अँधे-लूले-को उस तख्तपर बैठाकर उसे बादशाह मानकर कोर्निश करनेको, लेकिन औरंगज़ेबको नहीं।

रा—यह क्या सुलतान साहब! औरंगज़ेब आपका दामाद है।

हन०—औरंगज़ेब अगर मेरा दामाद न होकर मेरा बेटा होता बेटा अकेला ही होता, तो भी मैं उसे छोड़ देता। अधरम और को ज़िन्दगी रहते मैं कभी कुबूल नहीं कर सकता!

रा०—तब आपने क्या तै किया है?

हन०—मैं शाहज़ादे दाराकी तरफ़से लड़ूँगा। पहलेहीसे उसकी

जस०—तो आइए हम देशके लिए युद्ध करें। मेवाड़के राणा राजसिंह, बीकानेरके राजा, आप, और मैं, ये चारों जने मिलकर मुगलोंके राज्यको एक फूँकसे उड़ा दे सकते हैं,—आइए।

जय०—उसके बाद सम्राट् कौन होगा?

जस०—क्यों, राणा राजसिंह।

जय०—मैं औरंगज़ेबकी अधीनता स्वीकार कर सकता हूँ, मगर राजसिंहका प्रभुत्व नहीं मान सकता।

जस०—क्यों राजा साहब?—वे अपनी जातिके हैं, इसलिए?

जय०—अवश्य। अपनी जातिके दुर्वचन नहीं सहूँगा। मैं किसी ऊँची प्रवृत्तिका ढोंग नहीं रचता। संसार मेरे निकट एक बाज़ार है। जहाँ कम दामोंमें अधिक माल पाऊँगा वहीं जाऊँगा। औरंगज़ेब कम दामोंमें अधिक दे रहा है। इस निश्चितको छोड़कर मैं अनिश्चितके लिए प्रयत्न करना नहीं चाहता।

जस०—।—अच्छा राजा साहब, आप जाकर विश्राम करें। मैं सोच समझकर उत्तर दूँगा।

जय०—अच्छी बात है। सोचकर देखिएगा,—यह केवल संसारमें बेचने खरीदनेका मामला है। और हम स्वाधीन राजा न हो सकें, राजभक्त प्रजा तो हो सकते हैं! राजभक्ति भी धर्म है। (प्रस्थान)

जस०—हिन्दू-साम्राज्य,—कविका स्वप्न है हिन्दुओंका हृदय बहुत ही सूखा, बिल्कुल ठंडा पड़ गया है। अब उसमें परस्पर जोड़ नहीं लग सकता। 'स्वाधीन राजा न हो सकें, राजभक्त प्रजा तो हो सकते हैं।' ठीक कहा जयसिंह, किसके लिए युद्ध करने जाऊँ? दारा मेरा कौन है?—नर्मदा-युद्धका बदला खेजुवाके युद्धमें ले ही लिया है।

[महामायाका प्रवेश]

महामाया—महाराज, इसको बदला कहते हैं? मैं अबतक आड़में खड़ी हुई तुम्हारे इस पौरुषहीन, समभार काँटेके पलड़ोंके ऐसे, आन्दोलनको देख रही थी। वाह! खूब! अच्छा समझ लिया कि बदला चुका लिया। इसे बदला कहते हैं महाराज? औरंगज़ेबके पक्षमें होकर उसके डेरे लूटकर

भागनेका नाम बदला है ? इसकी अपेक्षा तो वह हार अच्छी थी। यह हारके ऊपर पापका बोझ है। राजपूत जाति विश्वासघात कर सकती है, यह तुमने ही दिखलाया।

जस०—महामाया, लूट करनेके पहले मैंने औरंगज़ेबका पक्ष छोड़ दिया था।

महामाया—और उसके पीछे उसके डेरे लूट लिये?

जस०—युद्ध करते करते लूट की है, डकैती नहीं की।

महा०—इसे युद्ध कहते हैं?—धिक्कार है!

जस०—महामाया, तुम्हारे निकट इसके सिवा क्या और कोई बात ही नहीं? दिन रात तुम्हारी तीखी झिड़कियाँ सुननेके लिए ही मैंने तुमसे ब्याह किया था?

महा०—और नहीं तो क्यों ब्याह किया था?

जस०—क्यों! विचित्र प्रश्न है!—लोग ब्याह किसलिए करते हैं?

महा०—हाँ, किस लिए? संभोगके लिए? विलास-वासनाको चरितार्थ करनेके लिए? यही बात है?—यही बात है?

जस०—(कुछ इधर उधर करके) हाँ,—एक तरहसे यही कहना पड़ेगा।

महा०—तो फिर एक वेश्या क्यों न रख ली?

जस०—जान पड़ता है, आँधी आ गई!

महा०—महाराज, जो तुम केवल अपनी पशु-प्रवृत्तिको चरितार्थ करना चाहते हो, तो उसका स्थान कुलकामिनीका पवित्र अन्तःपुर नहीं है, उसका स्थान वेश्याका सुसज्जित नरक है। वहीं जाओ। तुम रुपया दोगे, वह रूप देगी। तुम उसके पास लालसाके मारे जाओगे, और वह तुम्हारे पास आवेगी पापी पेटकी लालसाकी मारी! स्वामी और स्त्रीका सम्बन्ध वैसा नहीं है!

जस०—फिर?

महा०—स्वामी और स्त्रीका सम्बन्ध प्रेमका सम्बन्ध है। जो प्रेम प्रियतमको दिन दिन नज़रोंसे नहीं गिराता, दिन दिन और भी प्यारा बनाता

जाता है, जो प्रेम अपनी चिन्ताको भूल जाता है, और अपने देवताके चरणोंमें अपनी बलि देता है, जो प्रेम प्रातःकालके सूर्यकी किरणोंकी तरह जिसके ऊपर पड़ता है उसीको चमका देता है, उज्ज्वल बना देता है, गंगाके जलकी तरह जिसके ऊपर पड़ता है उसीको पवित्र कर देता है, देवताके वरदानकी तरह जिसके ऊपर बरसता है उसीको भाग्यशाली बना देता है, यह वही प्रेम है। यह स्थिर शांत, और आनन्दमय है, क्योंकि यह स्वार्थ-त्यागहीका रूपान्तर है।

जस०—महामाया, तुम मुझसे क्या वैसा ही प्रेम करती हो?

महा०—हाँ, तुम्हारे गौरवको गोदमें लेकर मैं मर सकती हूँ। उस गौरवके लिए मुझे इतनी चिंता-इतना आग्रह है कि उस गौरवको मलिन होते देखनेके पहले मैं चाहती हूँ कि अन्धी हो जाऊँ। राजपूत जातिके गौरव, मारवाड़के गौरवका तुम्हारे हाथों गला घोंटा जाय, इसके पहले ही मैं मरना चाहती हूँ। मैं तुमसे इतना प्रेम करती हूँ।

जस०—महामाया!

महा०—आँख उठाकर देखो,—यह धूप पड़नेसे चमकती हुई पर्वतमाला, दूरपर ये बालूके ढेर। आँख उठाकर देखो,—यह पहाड़ी नदी लहरा रही है, जैसे सौंदर्य झिलमिला रहा है। आँख उठाकर देखो, देखो यह नीले रंगका आकाश, जैसे वह अपनी नीलिमा निचोड़कर दिखा रहा है। यह उल्लुओंका शब्द सुनो। साथ ही साथ सोचो, इस जगहपर एक दिन देवोंका निवास था। मारवाड़ और मेवाड़, दोनों वीरताके युग्म बालक हैं महत्त्वके आकाशमें बृहस्पति और शुक्र ग्रहके समान चमक रहे हैं। धीरे धीरे उस महिमाका महासमारोह मेरे सामनेसे चला जा रहा है। आओ चारणोंके बालको, गाओ वही गान।

जस०—महामाया!

महा०—बोलो नहीं। यह इच्छा जब मेरे मनमें आती है, तब मुझे जान पड़ता है कि यह मेरा पूजाका समय है। घंटा-शंख बजाओ, बोलो नहीं।

जस०—अवश्य ही इसे कोई मानसिक रोग हो गया है।

(धीरे-धीरे प्रस्थान)

महा०—कौन हो तुम सुन्दर, सौम्य, शांत,—जो मेरे आगे आकर खड़े हो गये ! (चारणोंके बालकोंका प्रवेश) गाओ बालको, वही जन्मभूमि-का गाना गाओ !

ग़ज़ल सोहनी—ताल धमार

देश ऐसा खोजनेंसे भी न पाओगे कहीं।
श्रेष्ठ सबसे जन्मभूमि, इसे भुलाओगे नहीं ॥
अन्न-धन फूलों फलोंसे है भरी धरती हरी।
देशभक्तो, श्रेय भी उत्कर्ष पाओगे यहीं।
स्वप्नसे तैयार त्यों स्मृतिसे घिरा यह देश है।
है यही सर्वस्व, इसको तुम गँवाओगे नहीं।
चन्द्र-सूर्य प्रकाश, ऋतुओंका प्रभाव प्रसन्नता।
हैं कहाँ ? ये खूबियाँ, ऐसी न पाओगे कहीं ॥
खेलती ऐसी बिजलियाँ श्याम मेघोंमें कहाँ ?
पक्षियोंके शब्द ऐसे तुम सुना दोगे कहीं ॥
हैं पवित्र नदी कहाँ इतनी, पहाड़ विचित्र ही ?
इतने खेत हरे भरे हमको दिखा दोगे कहीं ?
फूल पेड़ोंमें विचित्र प्रकारके फूला करें।
बोलते पक्षी विविध हर कुंजमें रहते यहीं ॥
भाइयोंका नेह ऐसा ही मिलेगा किस जगह ?
प्यार माका बापका ऐसा न पाओगे कहीं ॥
जननि, तेरे श्री चरण रखकर हृदयमें अन्तको।
मर सकें हम जन्महीकी भूमिके ऊपर यहीं ॥

———

चौथा अङ्क

पहला दृश्य

स्थान—टाँड़ेमें शुजाका महल

समय—संध्या

(पियारा गा रही है)

क़व्वाली

किसने सुनाया सजनी, यह श्याम नाम मुझको।
भूला है उस घड़ीसे दुनियाका काम मुझको॥
कानोंकी राह जाकर, मनमें रहा समाकर।
बेचैन भी बनाकर भाता मुदाम मुझको॥ किसने०॥
इस नाममें सखी, बस इतना मधुर भरा रस।
छुटता न मुँहसे, भाया तकियाकलाम मुझको॥ किसने०॥
मैं रट रही हूँ उसको, उसमें समा रही हूँ।
कैसे मिलेगा, बोलो, आराम श्याम मुझको॥ किसने०॥

[शुजाका प्रवेश]

शुजा—सुनती हो पियारा, इस आखिरी लड़ाईमें भी दाराने औरंगज़ेबसे शिकस्त खाई।

पियारा—शिकस्त खाई न!

शुजा—औरंगज़ेबके ससुर शाहजादे दाराकी तरफ़से लड़े, और लड़ाईमें मारे गये,—कहो कैसी बात सुनाई?

पियारा—इसमें खास बात क्या हुई?

शुजा—खास बात नहीं हुई? बूढ़ा सिपाही अपने दामादके खिलाफ़ लड़कर मारा गया—सिर्फ़ फ़र्ज़के लिए।—सुभान अल्लाह!

पियारा—इसके लिए मैं 'क्या बात है!' तक कहनेको तो तैयार हूँ,

पर इसके आगे नहीं बढ़ सकती।

शुजा—जसवन्तसिंह अगर इस मर्तबा अपनी फ़ौज लेकर दाराकी मदद करता,—लेकिन नहीं मदद की। दाराको मदद देना मंजूर करके पीछे क़ौलसे फिर गया।

पियारा—ताज्जुबकी बात है!

शुजा—इसमें ताज्जुब क्या है पियारा? इसमें ताज्जुबकी कोई बात नहीं है।

पियारा—नहीं है, क्यों? मैं समझी, शायद है, इसीसे ताज्जुब कर रही थी।

शुजा—राजा जसवन्तने खेजुवाकी लड़ाईमें जिस तरहकी दग़ाबाज़ी की थी, इस मर्तबा दाराको भी ठीक उसी तरहका धोखा दिया है। इसमें ताज्जुब ही क्या है!

पियारा—और क्या,—मैं ताज्जुब कर रही हूँ—

शुजा—फिर ताज्जुब!

पियारा—ना ना। यह नहीं। पहले पूरा हाल तो सुन लो।

शुजा—क्या?

पियारा—मैं यह सोचकर ताज्जुब कर रही हूँ कि पहले क्या सोचकर ताज्जुब कर रही थी!

शुजा—ताज्जुब अगर करो, तो ताज्जुब होनेकी एक बात हुई है।

पियारा—वह क्या?

शुजा—वह यह कि औरंगज़ेबका बेटा मुहम्मद मेरी लड़कीके लिए अपने बापको छोड़कर मुझसे आ मिला है। क्या सोचकर वह ऐसा कर रहा है?

पियारा—इसमें ताज्जुब क्या है! मुहब्बतमें पड़कर लोग इससे भी बढ़कर सख़्तीके काम कर डालते हैं। चाहके लिए लोग दीवारें फाँद गये हैं, छतोंसे कूद पड़े हैं, दरिया तैर गये हैं, आगमें फाँद पड़े हैं, ज़हर खाकर मर गये हैं। यह तो एक महज मामूली बात है। बापको छोड़ दिया तो क्या

बड़ा भारी काम किया ? यह तो सभी करते हैं, मैं इसके लिए ताज्जुब करनेको तैयार नहीं।

शुजा—लेकिन—नहीं;—यह एक बड़ा भारी ताज्जुब है। जो चाहे सो हो, लेकिन मुहम्मदने और मैंने मिलकर औरंगज़ेबकी फ़ौजको बंगालसे मार भगाया है।

पियारा—इस लड़ाईके सिवा तुम्हारे पास क्या और कोई ज़िक्र ही नहीं है ? मैं जितना तुम्हें भुला रखना चाहती हूँ, उतना ही तुम उसी बातको छेड़ते हो।

शुजा—एक तो जंगमें यों ही बड़ा भारी मज़ा है और इसके सिवा—

[बाँदीका प्रवेश]

बाँदी—जहाँपनाह, एक फ़क़ीर हाज़िर होना चाहता है।

पियारा—कैसा फ़क़ीर है,—लंबी दाढ़ी है ?

बाँदी—हाँ सरकार, वह कहता है, बड़ी ज़रूरत है, अभी मिलना चाहता हूँ।

शुजा—अच्छा, यहीं ले आ। पियारा, तुम भीतर जाओ।

पियारा—अच्छी बात है, तुम मुझे भगाये देते हो।—लो, मैं जाती हूँ।

(प्रस्थान)

शुजा—जा, यहाँ उसे भेज दे। (बाँदीका प्रस्थान)

शुजा—पियारा एक हँसीका फ़ौवारा—एक बे-मतलबकी बातोंका दरिया है। इसी तरह वह मुझे जंगकी फ़िक्रोंसे बहला रखती है—

[दिलदारका प्रवेश]

दिलदार—शाहज़ादा साहब, तसलीम। आपके नामका एक खत है।

(पत्र देना)

शुजा—(पत्र लेकर खोलकर पढ़कर) यह क्या ! तुम कहाँसे आये हो ?

दिल०—क्या खतमें दस्तखत नहीं हैं शाहज़ादा साहब ?—चेहरा देखनेसे ही शाहज़ादेकी अक़्लमंदीका पता चलता है। खूब चाल चली।

शुजा—क्या चाल ?

दिल०—शाहज़ादेने शुजाकी लड़कीसे शादी करके,—ओः,—खूब तदबीर की है। सामनेसे तीर मारनेके बनिस्बत पीछेसे,—ओः औरंगज़ेबका बेटा ही तो ठहरा।

शुजा—पीछेसे तीर मारेगा कौन?

दिल०—डर क्या है,—मैं क्या यह बात सुल्तान शुजासे कहने जाता हूँ! यह खत उन्हें कभी भूलकर दिखा न दीजिएगा शाहजादा साहब—

शुजा—अरे वाह, मैं ही तो सुल्तान शुजा हूँ। मुहम्मद तो मेरा दामाद है!

दिल०—हाँ! चेहरा तो आपका अच्छे नवजवानके जैसा है। सुनिए—ज़्यादह चालाकी न करिएगा। आप अगर मुहम्मद हैं तो मैं जो कह रहा हूँ सो समझ ही रहे होंगे। और,—अगर सुल्तान शुजा हैं, तो जो मैं कह रहा हूँ उसका एक हर्फ़ भी सच नहीं है।

शुजा—अच्छा, तुम इस वक्त जाओ। इसकी तदबीर मैं अभी करता हूँ,—तुम जाकर आराम करो, जाओ।

दिल०—जो हुक्म। (प्रस्थान)

शुजा—यह तो बड़ी उलझनका मामला दरपेश है। बाहरी दुश्मनोंके मारे ही नाकमें दम है। उसके ऊपर औरंगज़ेब, तुमने घरमें भी दुश्मन लगा दिए! लेकिन जाओगे कहाँ! अभी हाथों-हाथ तदबीर करता हूँ। तक़दीरसे यह खत मेरे हाथ पड़ गया।—लो, यह मुहम्मद आ रहा है।

[मुहम्मदका प्रवेश]

शुजा—मुहम्मद!—पढ़ो यह खत।

मुह०—(पढ़कर) यह क्या! यह क्या! यह किसका खत है?

शुजा—तुम्हारे वालिदका! दस्तखत नहीं देखते? तुमने खुदाको गवाह करके उसे खत लिखा था कि तुमने अपने बापकी जो मुखालिफ़त की है उसके एवज़में अपने ससुर—यानी मुझको धोखा देकर औरंगज़ेबको खुश करोगे।

मुह०—मैंने अब्बाको कोई खत नहीं लिखा है। यह जाली खत है।

शुजा—मुझे यक़ीन नहीं आता । मैं एतबार नहीं कर सकता । तुम आज इसी घड़ी मेरे घरसे चले जाओ ।

मुह०—यह क्या ? कहाँ जाऊँ ?

शुजा—अपने बापके पास ।

मुह०—लेकिन मैं क़सम खाता हूँ—

शुजा—नहीं, बहुत हो चुका ।—मैं सामनेकी लड़ाईमें हारूँ या जीतूँ, यह अलग बात है । अपने घरमें दुश्मनको,—आस्तीनमें साँपको—नहीं पाल सकता ।

मुह०—मैं—

शुजा—मैं कुछ सुनना नहीं चाहता । जाओ, अभी जाओ ।

(मुहम्मदका प्रस्थान)

शुजा—हाथों हाथ तदबीर कर दी । औरंगज़ेबने बड़ी भारी चाल खेली थी,—मगर जायगा कहाँ ! वह लो, पियारा फिर आ गई ।

[पियाराका प्रवेश]

शुजा—पियारा, पकड़ लिया ।

पियारा—किसे ?

शुजा—मुहम्मदको । साहबज़ादेने मुझपर फन्दा डाला था । तुमसे मैं अभी कह रहा था न कि यह बड़े ताज्जुबकी बात है । इस वक्त सब हाल खुल गया । पानीकी तरह साफ़ हो गया ।—उसे घरसे निकाल दिया ।

पियारा—किसे ?

शुजा—मुहम्मदको ।

पियारा—यह क्यों ?

शुजा—बाहर दुश्मन,—घरमें दुश्मन,—शाबास भैया—खूब अक्लमन्दीकी थी !—मगर चाल चल न सकी । मैंने पकड़ लिया ।—यह देखो खत ।

पियारा—(पत्र पढ़कर) तुम्हारा दिमाग़ खराब हो गया है । हकीमको दिखाओ ।

शुजा—क्यों ?

पियारा—यह जाली,—झूठा खत है। समझ नहीं सके ? औरंगज़ेब-का फ़रेब। इतना भी नहीं समझ सकते ?

शुजा—नहीं, यह अच्छी तरह समझमें नहीं आया।

पियारा—यही अक़्ल लेकर तुम चले हो औरंगज़ेबसे भिड़ने ! दहीके धोखे कपास खा गये ! मुझसे एक दफ़ा पूछा भी नहीं ! दामादको निकाल दिया ! चलो, अब चलकर लड़की और दामादको समझायें।

शुजा—यह खत जाली है !—ऐसी बात ! कहाँ, यह तो तुमने नहीं कहा था।—खैर, होशियार रहना अच्छी ही बात है।

पियारा—इसीसे दामादको निकाल दिया ?

शुजा—बेशक, बड़ी भारी भूल हो गई, यही कहना चाहिए।—खैर, सुनो, एक तदबीर करता हूँ। लड़कीको उसके साथ किये देता हूँ और मुनासिब तौरसे जहेज़ भी दिये देता हूँ। देकर लड़कीको उसकी ससुराल भेजता हूँ। इसमें कुछ ऐब नहीं है। डर क्या है—चलो, चलकर दामादको यही समझावें। यही कहकर उसे बिदा कर दें।

पियारा—लेकिन बिदा क्यों कर दोगे ?

शुजा—वक्त खराब है। होशियार रहना अच्छा है। समझती नहीं हो।—चलो, चलकर समझावें। (दोनों जाते हैं)

दूसरा दृश्य

स्थान—ज़िहनखाँके घरमें दाराके रहनेका कमरा

समय—रात

[सिपर और जोहरत खड़े हैं।]

जोहरत—सिपर !

सिपर—क्या ?

जोहरत—देखते हो ?

सिपर—क्या ?

जोहरत—कि हम लोग यों जंगली जानवरोंकी तरह एक जंगलसे दूसरे-

जंगलमें मारे मारे फिरते हैं; रास्तेके कंगालोंकी तरह एक आदमीके दरवाज़े-पर लात खाकर दूसरेके दरवाज़े पेट-भर खानेके लिए जाते हैं।-देखते हो ?

सिपर—देखता हूँ। लेकिन चारा क्या है ?

जोहरत—चारा क्या है ? मर्द हो तुम !--बेधड़क कह रहे हो कि चारा क्या है ! मैं अगर मर्द होती, तो इसकी तदबीर करती।

सिपर—क्या तदबीर करतीं ?

जोहरत—(छुरा निकालकर) यही छुरा लेकर लुटेरे दग़ाबाज़ औरंगज़ेबकी छातीमें घुसेड़ देती।

सिपर—खून !!!

जोहरत—हाँ खून; चौंक पड़े ?—खून। लो यह छुरा, दिल्ली जाओ। तुम बच्चे हो, तुमपर किसीको शक न होगा—जाओ।

सिपर—कभी नहीं। खून नहीं करूँगा।

जोहरत—डरपोक ! देखते हो—माँ मर रही है ! देखते हो—अब्बाजान पागल हो गये हैं ! बैठे बैठे यह सब देखते रहोगे ?

सिपर—क्या करूँ !

जोहरत—डरपोक ! बुज़दिल !

सिपर—मैं बुज़दिल नहीं हूँ जोहरत, मैं मैदाने जंगमें अब्बाके पास हाथीपर बैठकर लड़ा हूँ। मुझे जान जानेका डर नहीं है। लेकिन खून नहीं करूँगा।

जोहरत—अच्छी बात है। (प्रस्थान)

सिपर—बहन, यह गुस्सा बेकार है। कोई चारा नहीं है। (प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

स्थान—नादिराका कमरा

समय—रात

[पलंगपर नादिरा पड़ी है। पास दारा है,
दूसरी तरफ़ सिपर और जोहरत हैं।]

दारा—नादिरा, दुनियाने मुझे छोड़ दिया—खुदाने मुझे छोड़ दिया। सिर्फ़ तुमने मेरा साथ नहीं छोड़ा। लेकिन अब तुम भी मुझे छोड़ चलीं!

नादिरा—मेरे लिए तुमने बहुत मुसीबतें झेली हैं प्यारे!—और—

दारा—नादिरा, दुखकी जलनसे पागल होकर मैंने तुमको बहुत सख्त बातें कही हैं।

नादिरा—प्यारे, मुसीबतमें तुम्हारा साथ देना ही मेरे लिए बड़ी फ़ख्र-की बात है। उसीकी याद साथ लेकर मैं दूसरी दुनियाको जाती हूँ—सिपर-बेटा! बेटी जोहरत! मैं जाती हूँ—

सिपर—तुम कहाँ जाती हो अम्मी?

नादिरा—कहाँ जाती हूँ, यह मैं नहीं जानती। मगर जिस जगह जाती हूँ वहाँ शायद कोई रंज या मुसीबत नहीं है—भूख-प्यासकी तकलीफ़ नहीं है-दुख-दर्द-बीमारी नहीं है-लड़ाई झगड़ा और डाह नहीं है।

सिपर—तो हम भी वहीं चलेंगे अम्मी,-चलो अब्बा,अब नहीं सहा जाता।

नादिरा—अब तुम्हें कोई तकलीफ़ नहीं उठानी पड़ेगी बेटा! तुम ज़िहनखाँके घरमें आ गये हो। अब कुछ दुख न मिलेगा।

सिपर—यह ज़िहनखाँ कौन है अब्बा?

दारा—मेरा एक पुराना दोस्त।

नादिरा—तुम्हारे अब्बाने दो मर्तबा उसकी जान बचाई है। वह तुम्हारी तकलीफ़ें रफ़ा करेगा और मदद देगा।

सिपर—लेकिन मैं उसे कभी प्यार न कर सकूँगा।

दारा—क्यों सिपर ?

सिपर—उसका चेहरा—उसकी नज़र, नेकीका नमूना नहीं है। अभी वह एक नौकरसे न जाने क्या फुसफुस कह रहा था—और मेरी तरफ़ ऐसी चोरकी-सी नज़रसे देख रहा था कि मुझे बड़ा खौफ़ मालूम हुआ—मुझे बड़ा खौफ़ मालूम हुआ अम्मी! मैं दौड़कर तुम्हारे पास चला आया।

दारा—सिपर सच कहता है नादिरा! मैंने ज़िहनके चेहरेपर एक तरहकी ऐयारीकी झलक देखी है, उसकी आँखोंमें एक खूनी चमक देखी है, उसकी धीमी आवाज़से कभी कभी जान पड़ता है कि वह एक छुरेपर धार रख रहा है। उस दिन जब वह मेरे पैरोंपर गिरकर अपनी जान बचानेके लिए गिड़गिड़ा रहा था, तब वह चेहरा और ही था, और आजका चेहरा और ही है। यह नज़र, यह आवाज़ यह ढंग—बिलकुल नया है!

नादिरा—तब भी तुमने दो मर्तबा उसकी जान बचाई है। वह इन्सान ही तो है, साँप तो नहीं है ?

दारा—इन्सानका एतबार मुझे नहीं रहा नादिरा, मैंने देखा है कि इंसान साँपसे भी बढ़कर जहरीला और पाजी है। मगर कभी कभी—क्यों, नादिरा, बहुत तकलीफ़ हो रही है ?

नादिरा—नहीं, कुछ नहीं। मैं तुम्हारे पास हूँ। तुम्हारी मुहब्बत-आमेज़ नज़रसे मेरी सब तकलीफ़ मिटी जाती है। लेकिन अब देर नहीं है—तुम्हारे हाथमें सिपरको सौंपे जाती हूँ—देखना!—बच्चे सुलेमानसे मुलाकात न हो सकी ?—खुदा!—(मृत्यु)

दारा—नादिरा! नादिरा!—नहीं, सब ठंडा हो गया—चली गई!

सिपर—अम्मी! अम्मी!

दारा—चिराग़ गुल हो गया।

(जोहरत दोनों हाथोंसे कलेजा थामकर एकटक ऊपरकी तरफ़ देखती है।)

[चार सिपाहियोंके साथ ज़िहनखाँका प्रवेश]

दारा—कौन हो तुम ? इस वक़्त इस जगहको नापाक करने आये हो ?

ज़िहन०—गिरफ़्तार कर लो।

दारा—क्या ? मुझे गिरफ़्तार करोगे ज़िहनखाँ ?

सिपर—(दीवारसे तलवार उतारकर) किसकी मज़ाल है ?

दारा—सिपर, तलवार रख दो। यह बहुत ही पाक घड़ी है। यह बहुत ही पाक जगह है। अभी तक नादिराकी रूह यहाँ मौजूद है—दुनियाके सुख-दुखसे बिदा होनेके पहले वह सबको नज़र-भर देख लेना चाहती है। अभी तक बहिश्तसे हूरें उसे वहाँ ले जानेके लिए आकर नहीं पहुँचीं। उसे सदमा न पहुँचाओ—उसे परेशान न करो—मुझे गिरफ्तार करना चाहते हो ज़िहनखाँ ?

ज़िहन०—हाँ शाहज़ादे साहब !

दारा—नादिरा, तुम सुन तो नहीं रही हो ? सुन पाओगी तो नफ़रतसे तुम्हारी लाश काँप उठेगी ! तुम्हें खुदापर बड़ा भरोसा था !

ज़िहन०—इन्हें गिरफ्तार कर लो। अगर ये रुकावट डालें, तो तलवारसे काम लेनेमें भी मत चूको।

दारा—मैं रुकावट नहीं डालता। मुझे बाँधो। मुझे कुछ भी ताज्जुब नहीं है। मैं इसी तरहके किसी सुलूककी उम्मेद कर रहा था। और कोई होता तो शायद और तरहके सलूकका उम्मेदवार होता। और होता तो शायद सोचता कि यह कितनी बड़ी नमकहरामी है, जिसे मैंने दो दफ़ा बचाया है वही मुझे पहले अपने पास रख कर पीछे धोखा दे,—यह कितना बड़ा पाजीपन है ! लेकिन मैं यह नहीं सोचता। मैं जानता हूँ कि दुनियाके सब अच्छे खयालात गुनाहके खौफसे ज़मीनमें सिर डाले फूट-फूट कर रो रहे हैं, ऊपरकी तरफ आँख उठा कर देखनेकी भी वे हिम्मत नहीं कर सकते। मैं जानता हूँ, इस वक्त दुनियाका धरम है खुदग़र्ज़ी, ढंग है फरेब, पूजा है खुशामद, फ़र्ज़ है जुआचोरी। ऊँचे ख़यालात अब बहुत पुराने हो गये हैं। शाइस्तगीकी (सभ्यता) की रोशनीमें धरमका अँधेरा दूर हो गया है। वह पुराना धरम जो कुछ बाक़ी है, वह शायद किसानोंकी झोंपड़ियोंमें, कोल भील वग़ैरहके गँवारपनमें है।— हाँ ज़िहनखाँ, मुझे गिरफ्तार करो।

सिपर—तो मुझे भी गिरफ्तार करो।

ज़िहन०—तुमको भी न छोड़ूँगा शाहज़ादे साहब, बादशाह सलामतसे खूब इनाम पाऊँगा।

दारा—पाओगे क्यों नहीं! इतनी बड़ी नमकहरामीकी कीमत न पाओगे, यह भी कहीं हो सकता है!—खूब दौलत पाओगे। मैं तुम्हारे उस खुश चेहरेको अभीसे देख रहा हूँ। यह कैसी खुशीकी बात है! जब मरना, अपने साथ लेते जाना।

ज़िहन०—देर क्यों कर रहे हो गिरफ्तार करो।

दारा—गिरफ़्तार करो।—नहीं, यहाँ नहीं, बाहर चलो। इस बहिश्त-को दोज़ख मत बनाओ। इतने बड़े कुदरती कानूनके खिलाफ काम यहाँ!—ऐ ज़मीन!—तू इतना सह सकती है! चुपचाप सह रही है—खुदा! तुम दोनों हाथोंको समेटे यह सब देख रहे हो! चलो ज़िहनखाँ, बाहर चलो।

(सब जाना चाहते हैं)

दारा—ठहरो, एक बात कह जाऊँ, ज़िहनखाँ, मानोगे? इस देवीकी लाशको लाहौर भेज देना और वहीं शाही खानदानके कब्रिस्तानमें इसे गड़वा देना। ऐसा कर सकोगे? मैंने दो मर्तबा तुम्हारी जान बचाई है, इसीसे यह भीख तुमसे माँग रहा हूँ। नहीं तो इसके लिए भी तुमसे नहीं कह सकता।—मेरा कहा करोगे?

ज़िहन०—जो हुक्म शाहज़ादे साहब! यह काम न करूँगा तो मालिक औरंगज़ेब नाराज होंगे।

दारा—तुम्हारे मालिक औरंगज़ेब!—हूँ, मुझे कुछ भी रंज नहीं है।—चलो—(फिर कर) नादिरा!—

(इतना कह कर दारा फिर कर सहसा नादिराकी लाशके पास घुटने टेकते और दोनों हाथोंसे मुँह ढँक लेते हैं।)

दारा—(उठ कर) चलो ज़िहनखाँ।

(सब बाहर जाते हैं। सिपर नादिराकी लाशपर गिर कर रोता है।)

दारा—(रूखे स्वरसे) सिपर!

(भयसे सिपर चुप हो जाता है। तब बाहर जाता है।)

चौथा दृश्य

स्थान—जोधपुरका महल

समय—सन्ध्या

महा०—महाराज,अभागे दारासे कृतघ्नता करनेके पुरस्कारमें गुजरातका सूबा पाकर सन्तुष्ट हैं न ?

जस०—महामाया, उसमें मेरा क्या अपराध है ?

महा०—ना । अपराध क्या है ?—यह तुम्हारा बड़ा भारी सम्मान है, बड़ा भारी गौरव है !

जस०—गौरव सही, लेकिन इसमें अन्याय भी मुझे कुछ नहीं देख पड़ता । दाराकी सहायता करना या न करना मेरी इच्छाकी बात है। दारा मेरे कौन हैं ?

महा०—और कोई नहीं, केवल प्रभु !

जस०—प्रभु !—किसी समय थे; आज कोई नहीं हैं ।

महा०—सच तो है ! आज दारा भाग्यके चक्रके फेरमें नीचे पड़े हैं, भाग्यकी लांछना और धिक्कार सह रहे हैं, आज उनके साथ तुम्हारा क्या सम्बन्ध है ! दारा उस समय तुम्हारे स्वामी थे जब वे पुरस्कार दे सकते थे !

जस०—मुझे ?

महा०—हाय महाराज ! 'थे' इसका क्या कुछ मूल्य ही नहीं है ? बीते समयको क्या एकदम मिटा सकते हो ? वर्तमानसे क्या उसे एकदम अलग कर सकते हो ? एक दिन जो तुम्हारे दयालु प्रभु थे, उनका आज तुम्हारे निकट क्या कुछ भी मूल्य नहीं है ?—धिक्कार है !

जस०—महामाया, तुम्हारा मेरे साथ तर्क करनेका,—ज़बान लड़ानेका संबन्ध नहीं है। मैं जो उचित समझता हूँ कर रहा हूँ । मैं तुमसे उपदेश नहीं चाहता ।

महा०—उपदेश क्यों चाहोगे ? युद्धमें हार कर लौट आकर,विश्वासघातक होकर लौट आकर, तुम चाहते हो मेरी भक्ति ! क्यों ?—

जस०—यह मैं क्या तुमसे कुछ उचितसे बहुत अधिक चाहता हूँ महामाया ?

महा०—नहीं, तुम्हारा यह दावा सम्पूर्ण रूपसे स्वाभाविक है ! क्षत्रिय वीर हो तुम,—तुमने सारी क्षत्रिय जातिका अपमान किया है !—तुम नहीं जानते, सारा राजपूताना आज तुमको धिक्कार रहा है ! लोग कहते हैं कि औरंगज़ेबका ससुर शाहनवाज दाराकी ओर होकर अपने दामादसे लड़ा,—उसने प्रसन्नतापूर्वक मृत्युको गलेसे लगाया और तुम दाराको आशा देकर पीछेसे कायरोंकी तरह अलग हटकर खड़े हो गये ! हाय स्वामी, क्या कहूँ, तुम्हारे इस अपमानसे मेरी नस नसमें तो जैसी आगकी लहरें दौड़ रही हैं, पर वह अपमान तुम्हें स्पर्श भी नहीं करता ! बेशक आश्चर्यकी बात है !

जस०—महामाया—

महा०—बस—जाओ, अपने प्रभु औरंगज़ेबके पास जाओ।

(क्रोधसे प्रस्थान)

जस०—अच्छा !—यही होगा। इतना !—अच्छा, यही होगा।

(प्रस्थान)

पांचवां दृश्य

स्थान—क़िलेका शाही महल

समय—रात्रि

[शाहजहाँ और जहानारा]

शाह०—अब और क्या बुरी खबर है बेटी, अब और क्या बाक़ी है ?—मेरा दारा शिकस्त खाकर इधर उधर भागा भागा फिर रहा है। शुजाने जंगली आराकानके राजाके यहाँ पनाह ली है, मुराद ग्वालियरके क़िलेमें क़ैद है और क्या बुरी खबर दे सकती हो बेटी ?

जहा०—अब्बा, यह मेरी बदनसीबी है कि मैं ही रोज़ाना बुरी खबरें लेकर आपके पास आती हूँ। लेकिन क्या करूँ अब्बा, बदनसीबी अकेली नहीं आती।

शाह०—कहो क्या खबर है ?

जहा०—अब्बा, भैया दारा गिरफ़्तार हो गया ।

शाह०—गिरफ़्तार हो गया !—कैसे गिरफ्तार हो गया ?

जहा०—ज़िहनखाँने धोखा देकर गिरफ़्तार करा दिया ।

शाह०—ज़िहनखाँ !—ज़िहनखाँ ! क्या कहती है जहानारा, ज़िहनखाँने ?

जहा०—हाँ अब्बा !

शाह०—क़यामतका दिन क्या बहुत जल्द आनेवाला है ?

जहा०—सुना है, परसों दारा और उसके बेटे सिपरको एक बूढ़े हाथीकी नंगी पीठपर बैठाकर दिल्लीभरमें घुमाया गया है। वे मैले सादे कपड़े पहने थे। उनकी हालत देखकर कोई ऐसा न था, जो रो न दिया हो।

शाह०—तो भी, इनमेंसे कोई दाराको छुड़ानेके लिए नहीं दौड़ा ? सिर्फ़ काठके पुतलोंकी तरह खड़े खड़े सब लोग देखते ही रहे ? वे सब क्या पत्थरके बने हुए थे ?

जहा०—नहीं, पत्थर भी गरम हो उठता है। वे कीच हैं। औरंगज़ेबकी गोलियों और बन्दूकोंका खौफ़ सबपर ग़ालिब है। मानों किसी जादूगरने उन-पर जादू डाल रक्खा है। कोई भी सिर उठानेकी हिम्मत नहीं करता। रोते सो भी छिपकर,—कहीं औरंगज़ेब देख न ले !

शाह०—उसके बाद ?

जहा०—उसके बाद औरंगज़ेबने खिज़राबादमें एक गंदे और तंग मकानमें दाराको क़ैद कर रक्खा है।

शाह०—और सिपर और जोहरत ?

जहा०—सिपरने अपने बापका साथ नहीं छोड़ा। जोहरत इस वक्त औरंगज़ेबके महलमें है।

शाह०—तू जानती है, औरंगज़ेबने दाराको क़ैद कर रक्खा है ? वह उससे क्या सुलूक करेगा ?

जहा०—क्या करेगा, यह तो नहीं जानती। लेकिन,—लेकिन—

शाह०—क्यों जहानारा, काँप क्यों उठी ?

जहा०—अगर वही करे तो अब्बा ?

शाह०—क्या ! क्या जहानारा !—मुँह क्यों ढँक लिया ! वह,—वह भी क्या मुमकिन है !—भाई भाईको क़त्ल करेगा !

जहा०—चुप !—वह किसके पैरोंकी आहट है ! सुन लिया उसने !—अब्बा, आपने यह क्या किया ! क्या किया !

शाह०—क्या किया ?

जहा०—वह बात कह डाली !—अब बचनेकी कोई सूरत नहीं रही !

शाह०—क्यों ?

जहा०—शायद औरंगज़ेब दाराका खून न करता। शायद इतने बड़े गुनाहकी और बेरहमीकी बात उसे सूझती ही नहीं। लेकिन वह बात आपने उसे सुझा दी !—क्या किया ! क्या किया ! सब सत्यानाश कर दिया !

शाह०—औरंगज़ेब तो यहाँ नहीं है, किसने सुन लिया ?

जहा०—वह नहीं है, लेकिन यह दीया तो है, हवा तो है, चिराग़ तो है ! आज सब उसीके शरीक़ हैं। आप समझते हैं यह आपका महल है। नहीं, वह औरंगज़ेबका पत्थरका ज़िगर है ! यह हवा नहीं, औरंगज़ेबकी ज़हरीली साँस है। यह चिराग़ नहीं, उस जल्लादकी नज़र है। अब्बाजान, क्या आप यह सोचते हैं कि इस महलमें, इस क़िलेमें, इस सल्तनतमें, आपका या मेरा एक भी दोस्त है ? नहीं, एक भी नहीं। सब उसके शरीक हो गये हैं। सब खुशामदी और मतलबके यार हैं। चुगलखोर हैं !—यह किसकी परछाँही है ?

शाह०—कहाँ ?

जहा०—नहीं, कोई नहीं है !--आप उधर क्या देख रहे हैं अब्बाजान ?

शाह०—कूद पड़ूँ ?

जहा०—यह क्यों अब्बा !

शाह०—देखूँ, शायद दाराको बचा सकूँ। वे लोग उसे क़त्ल करनेके

लिए जा रहे हैं और मैं यहाँ औरतोंकी तरह, बच्चोंकी तरह लाचार हूँ ! आँखोंके आगे यह सब देखकर भी खाता-पीता; सोता और अबतक ज़िन्दा हूँ। इसके लिए कुछ नहीं करता !—कूद पड़ूँ ?

जहा०—यह क्या अब्बा ! यहाँसे कूदनेपर यह तय है कि जान नहीं बच सकती ।

शाह०—मर जाऊँगा तो उससे क्या ! देखूँ अगर बचा सकूँ,—बचा सकूँ ।

जहा०—अब्बा, आप क्या अपने आपेमें नहीं हैं ? मरकर दाराकी जान कैसे बचा सकेंगे ?

शाह०—ठीक है ! ठीक है ! मैं मरकर दाराको कैसे बचा सकूँगा ? ठीक कहती है। फिर,—फिर,—अच्छा,—ज़रा तू यहाँ औरंगज़ेबको लिवा ला सकती है ?

जहा०—नहीं अब्बा, वह नहीं आवेगा । नहीं तो मैं औरत होकर भी एक मर्तबा उससे लड़कर देखती । उस दिन दरबारमें रूबरू खड़े होकर मैंने उसका मुक़ाबिला किया था, मगर कुछ कर नहीं सकी । इसी सबबसे उस दिनसे मेरे बाहर जाने-आनेपर भी सख्त निगरानी रक्खी जाती है । नहीं तो, एक दफ़ा उससे लड़ाई करके ज़रूर देखती ।

शाह०—फाँदूँ,—कूद पड़ूँ ? (कूदना चाहते हैं)

जहा०—अब्बा, आप ये क्या पागलोंकी-सी बातें कर रहे हैं !

शाह०—सच तो है ! मैं क्या पागल हुआ जा रहा हूँ ! ना ना ना, मैं पागल न होऊँगा !—या खुदा ! इस अपाहिज, बूढ़े, निहायत लाचार शाहजहाँको देख । खुदा ! तुझे तरस नहीं आता ? बेटेने बापको क़ैद कर रक्खा है,—इतनी बेइन्साफी, इतना जुल्म, ऐसी कुदरती कानूनके खिलाफ़ वारदात म देख रहे हो ? देख सकते हो ?—मैंने ऐसा क्या गुनाह किया था कि खुद मेरा ही बेटा,—ओः !—

जहा०—एक मर्तबा इस वक़्त अगर वह मेरे सामने आ जाता, तो ! (दाँत पीसती है)

शाह०—मुमताज ! तुम बड़ी खुशकिस्मत हो जो अपने बेटेकी ऐसी नालायक और सदमा पहुँचानेवाली करतूत देखनेको नहीं रहीं ! तुमने कोई बड़ा सवाब किया था, इसीसे तुम पहले चल दीं—जहानारा !

जहा०—अब्बा !

शाह०—मैं तुझे दुआ देता हूँ—

जहा०—क्या अब्बा !

शाह०—कि तेरे औलाद न हो—दुश्मनके भी औलाद न हो। (प्रस्थान)

(दूसरी ओरसे जहानाराका प्रस्थान)

छठा दृश्य

[औरंगज़ेब एक पत्र हाथमें लिये टहल रहा है]

औरंग०—यह दाराकी मौतकी सजाका हुक्मनामा है।–यह क़ाज़ीका फ़ैसला है !—मेरा कुसूर क्या है !—मैं लेकिन,—नहीं, क्यों,—यह फ़ैसला ! फ़ैसलेको क्यों रद करूँ ?—यह फ़ैसला है !

[दिलदारका प्रवेश]

दिल०—यह खून है !

औरंग०—(चौंककर) कौन !—दिलदार ! तुम इस वक्त यहाँ ?

दिल०—जहाँपनाह, मैं ठीक वक्तपर ठीक जगहपर हूँ ! देख लीजिएगा और अगर मैं यहाँपर न होता तो भी यह खून—

औरंग०—(भर्राई हुई आवाज़में) खून !—नहीं दिलदार, यह क़ाज़ीका फ़ैसला है !

दिल०—बादशाह सलामत, सच और साफ कहूँ ?

औरंग०—कहो।

दिल०—बादशाह सलामत, आप एकाएक काँप क्यों उठे ?—आपकी आवाज़ एक सूखी हवाके झोंकेकी तरह क्यों निकली ? क्यों जहाँपनाह ! सच कहूँ ?

औरंग०—दिलदार !

दिल०—सच बात कहूँ ?—आप दाराकी मौत चाहते हैं ।

औरंग०—मैं ?

दिल०—हाँ, आप !

औरंग०—लेकिन यह तो क़ाज़ीका फ़ैसला है !

दिल०—फ़ैसला ! जहाँपनाह, क़ाज़ी लोग जब दाराके लिए मौत-का हुक्म दे रहे थे, उस वक़्त वे खुदाके मुँहकी तरफ नहीं देख रहे थे । उस वक्त वे जहाँपनाहके खुश चेहरेका खयाल कर रहे थे और जोरूको गहने गढ़ानेके मनसूबे गाँठ रहे थे । फ़ैसला !—जहाँ मालिककी लाल-लाल आँखें सामने अड़ी रहती हैं, वहाँ फ़ैसला ! जहाँपनाह सोच रहे हैं कि मैंने दुनियाको खूब चकमा दिया । लेकिन दुनियाने मन ही मन सब समझ लिया, सिर्फ़ खौफ़से कुछ कहा नहीं । जोर करके आप इन्सानकी ज़बानको रोक सकते हैं, गला घोंटकर उसे मार सकते हैं, लेकिन स्याहको सफ़ेद नहीं कर सकते । दुनिया जानेगी, आगेके लोग जानेंगे कि फ़ैसलेका जाल रचकर आपने दाराका खून किया है—अपने तख्तका और ताजका खतरा दूर करनेके लिए ।

औरंग०—सचमुच !—दिलदार तुम सच कह रहे हो ! तुमने आज दाराकी जान बचाई ! तुमने मेरे बेटे मुहम्मदको मुझे लौटा दिया और आज मेरे भाई दाराको बचाया ! जाओ—शायस्ताखाँको भेज दो !

(दिलदारका प्रस्थान)

औरंग०—दारा जिये । मुझे अगर उसके लिए तख्त देना पड़े, तो दूँगा । इतना बड़ा अज़ाब—जाने दो, यह मौतका हुक्मनामा फाड़ डालूँ—(फाड़ना चाहता है) नहीं, अभी नहीं, शायस्ताखाँके सामने इसे फाड़कर अपनी नेकीका सबूत दूँगा ।—वह लो, शायस्ताखाँ आ गये ।

[शायस्ताखाँ और ज़िहनखाँका प्रवेश और कोर्निश करना]

औरंग०—शायस्ताखाँ, क़ाज़ियोंने अपने फ़ैसलेमें भाई दाराको मौतकी सज़ा दी है !

ज़िहन०—यही क्या वह हुक्मनामा है ?—मुझे दीजिए खुदावन्द, मैं अपने हाथसे यह हुक्म तामील कर लाऊँ। क़ाफ़िरको अपने हाथसे मौतकी सज़ा देनेके लिए मेरे हाथोंमें खुजली आ रही है। मुझे—

औरंग०—लेकिन मैंने दाराको मुआफ़ी दे दी है।

शायस्ता०—यह क्या जहाँ[illegible] —ऐसे दुश्मनको मुआफ़ी !—अपने दुश्मनको मुआफ़ी !

औरंग०—मैं जानता हूँ। इसीसे तो मुआफ़ करना मेरे लिए फ़ख्र-की बात है।

शायस्ता०—जहाँपनाह, इस फ़ख्रके खरीदनेमें आपको अपना तख्त तक बेचना पड़ेगा।

औरंग०—जिन हाथोंकी ताक़तसे इस तख्तपर क़ब्ज़ा किया है, उन्हीं हाथोंकी ताक़तसे उसकी हिफ़ाजत भी करूँगा।

शायस्ता०—जहाँपनाह, एक बड़ी भारी आफ़तको सिरपर बनाये रख-कर ज़िन्दगी-भर सल्तनत करनी पड़ेगी। आप जानते हैं, सारी रिआया और फ़ौज दिलसे दाराकी तरफ़दार है। उस दिन दाराकी हालत देखकर सब लोग बच्चोंकी तरह रो रहे थे और जहाँपनाहको गालियाँ दे रहे थे। अगर वे एक दफ़ा भी मौक़ा पावें—

औरंग०—कसे ?

शायस्ता०—जहाँपनाह आठोंपहर कुछ दाराकी निगरानी न कर सकगे। जहाँपनाह किसी दिन सफ़रमें गये और फ़ौजके सिपाहियोंने मौक़ा पाकर दाराको रिहा कर दिया—तो जहाँपनाह—समझे ?

औरंग०—समझा।

शायस्ता०—इसके सिवा बूढ़े शाह भी दाराके तरफ़दार हैं और उन्हें सारी फ़ौज मानती है अपने उस्तादकी तरह, चाहती है अपने बापकी तरह।

औरंग०—हूँ। (टहलना) न होगा तो यह तख्त दे दूँगा।

शायस्ता०—तो फिर इतनी मेहनत करके यह तख्त लेनेकी क्या ज़रू-रत थी ? बापको तख्तसे उतारकर, भाईको क़ैद करके—जहाँपनाह बहुत दूर

बढ़ आये हैं ।

औरंग०—लेकिन—

ज़िहन०—खुदावन्द, दारा काफ़िर है । आप काफ़िरको मुआफ़ करेंगे ? खुदावन्द, इस दीने इस्लामकी हिफ़ाज़तके लिए ही आप आज इस तख्तपर बैठे हैं—याद रखें । दीनकी इज़्ज़त देखना आपका फ़र्ज़ है ।

औरंग०—सच है ज़िहनखाँ, मैं अपनी बेइज़्ज़ती और अपने ऊपर जुल्म सह सकता हूँ । लेकिन दीने इस्लामकी तौहीन नहीं सह सकता । क़सम खा चुका हूँ । दाराकी मौत ही उसके लायक़ सज़ा है । ज़िहनखाँ, लो यह मौतका हुक्मनामा ।—ठहरो, दस्तखत कर दूँ । (हस्ताक्षर करता है)

ज़िहन०—दीजिए, जहाँपनाह आज रातको ही दाराका कटा हुआ सिर लाकर जहाँपनाहको दिखाऊँगा—बाहर मेरा घोड़ा तैयार है ।

औरंग०—आज ही !

शायस्ता०—(मृत्युदंडका आज्ञापत्र औरंगज़ेबके हाथसे लेकर) जितनी जल्दी बला टले, उतना ही अच्छा । (ज़िहनखाँको दंडपत्र देता है)

ज़िहन०—जहाँपनाह, तस्लीम । (जाना चाहता है)

औरंग०—ठहरो, देखूँ । (दंडकी आज्ञाको लेना, पढ़ना और फिर फेर देना) अच्छा जाओ !　　　　(ज़िहनखाँका प्रस्थान)

(औरंगज़ेब फिर ज़िहनखाँकी ओर बढ़ता है, फिर लौटता है और दमभर सोचता है ।)

औरंग०—ना, ज़रूरत नहीं है !—ज़िहनखाँ ! ज़िहनखाँ ! नहीं, चला गया । शायस्ताखाँ !

शायस्ता०—खुदावन्द !

औरंग०—मैंने यह क्या किया !

शायस्ता०—जहाँपनाहने समझदारीका ही काम किया ।

औरंग०—खैर, जाने दो ।　　　　(धीरे धीरे प्रस्थान)

शायस्ता०—औरंगज़ेब ! क्या तुममें भी कुछ नेकी-बदीकी तमीज़ है ?

(प्रस्थान)

सातवां दृश्य

स्थान—खिजराबाद, एक साधारण घर।

समय—रात।

[सिपर एक पलंगपर सो रहा है। दारा अकेले जाग रहे हैं और उसकी सूरत देख रहे हैं।]

दारा—सो रहा है—सिपर सो रहा है। नींद ! सब बेचैनियोंको दूर कर देनेवाली नींद ! मेरे सिपरके सब रंज भुलाये रह।—मेरे बच्चेने सफ़रमें मेरे साथ सर्दी और गर्मीकी बड़ी बड़ी सख्तियाँ झेली हैं, उसे तू भर-सक दिलासा दे। मैं लाचार हूँ। औलादकी हिफ़ाजत करना, खाना देना, कपड़े देना—बापका काम है। सो मैं कर नहीं सका।—बेटा, तू भूखसे तड़पता था, मैं तुझे खानेको नहीं दे सका। प्याससे तेरा गला सूख रहा था, मैं तुझे पानी तक नहीं दे सका। सर्दीमें पहननेके लिए काफ़ी कपड़े तक नहीं दे सका। मुझे खुद खानेको नहीं मिला, उससे मुझे कभी वैसा सदमा नहीं पहुँचा बेटे, जैसा तेरी तकलीफ़, तेरी ग़रीबी, तेरी तौहीनीसे पहुँचा है। बच्चे, मेरे लख्ते जिगर ! मैं आज तुझे देख रहा हूँ। मुझ जान पड़ता है, दुनियामें और कोई नहीं है—सिर्फ़ तू है और मैं हूँ। मुझे इतना दुख है। मैं आज क़ैदखानेमें क़ैद हूँ, तो तेरे चेहरेको देखकर मैं सब दुख भूल जाता हूँ।

[दिलदारका प्रवेश]

दारा—कौन !—तुम !

दिल०—मैं—यह—क्या देख रहा हूँ !

दारा—तुम कौन हो ?

दिल०—मैं था पहले सुल्तान मुरादका मसखरा। अब हूँ बादशाह औरंगज़ेबका मुसाहिब

दारा— यहाँ किस मतलबसे आये हो ?

दिल०—मतलब कुछ नहीं, आपसे मुलाकात करने आया हूँ।

दारा—क्यों ऐ नौजवान, मेरी हँसी उड़ानेके लिए?—हँसो।

दिल०—नहीं शाहजादे साहब, मैं हँसने नहीं आया। और अगर हँसने भी आता तो आपकी हालत देखकर वह तानेकी हँसी गलकर आँसू बन जाती और ज़मीनपर टप-टप टपकने लगती!—यह हाल! शाहज़ादा दारा आज इस हालत में!—(भर्राई हुई आवाज़में) या खुदा!

दारा—ऐ नौजवान, यह क्या! तुम्हारी आँखोंसे आँसू गिर रहे हैं—रोते हो!—रोओ!

दिल०—नहीं, रोऊँगा नहीं! यह बहुत ही ऊँचे दर्जेका नज़्ज़ारा (दृश्य) है!—एक पहाड़ टूटा-फूटा पड़ा है, एक समंदर सूख गया है, एक सूरज फीका पड़ गया है। सारे जहानमें एक तरफ़ पैदायश और दूसरी तरफ़ तबाही हो रही है। इस दुनियामें भी वही है। यह तबाही बड़ी भारी, पाक और फ़खकी चीज़ है

दारा—तुम एक दानिशमन्द (दार्शनिक) जान पड़ते हो।

दिल०—नहीं शाहजादे साहब, मैं दानिशमन्द नहीं हूँ। मसखरा हूँ, मुसाहिब हो गया हूँ, अभी दानिशमन्दका दर्जा नहीं पा सका हूँ। अगर घास चरते चरते कभी कभी सिर उठाकर देख लेनेको दानिश कहते हों, तो मैं जरूर दानिशमन्द हूँ शाहजादे साहब,—बेवकूफ़ समझता है चिरागका जलना ही ठीक है, चिरागका बुझना ठीक नहीं है; दरख्तका उगना ही वाज़िब है, सूख जाना गैरवाज़िब है; इंसानको खुदासे आराम ही मिलना चाहिए, तकलीफ़ मिलना जुल्म है। लेकिन यह बात नहीं है, आराम और तकलीफ़ एक कानूनके दो पहलू हैं।

दारा—ऐ नौजवान, मैं यह नहीं सोचता। तो भी—तकलीफ़में कौन हँस सकता है? मरना कौन चाहता है? मैं मरना नहीं चाहता।

दिल०—शाहज़ादे साहब, आपकी मौतकी सजाका हुक्म मैं आज मंसूख करा आया हूँ। आप क़ैदसे अगर रिहाई चाहते हैं तो आइए। मेरी पोशाक पहन लीजिए—चले जाइए, कोई शक नहीं करेगा। आइए, हम दोनों आपसमें कपड़े बदल लें।

दारा—और उसके बाद तुम ?

दिल०—मैं मरना ही चाहता हूँ। मरनेमें मुझे बड़ा मज़ा मिलेगा। इस दुनियामें कोई मेरे लिए रंज करनेवाला नहीं है।

दारा—तुम मरना चाहते हो ?

दिल०—हाँ, मैं मरनेका एक अच्छा मौका ढूँढ़ रहा था। शाहजादे साहब, मरना मुझे बहुत प्यारा है। आपने मुझपर आज कैसा भारी एहसान किया, यह मैं कह नहीं सकता—

दारा—क्यों ?

दिल०—मरनेका एक अच्छा मौक़ा देकर आपने यह एहसान किया है।—आइए !

दारा—या रहीम ! यही बहिश्त है ! और क्या !—नहीं; ऐ नौजवान, मैं नहीं जाऊँगा !

दिल०—क्यों शाहजादे साहब, क्या मरनेका ऐसा अच्छा मौक़ा माँगनेपर भी मैं न पाऊँगा ? (पैर पकड़ता है)

दारा—मैं तुम्हें मरने नहीं दूँगा और ख़ासकर इस बच्चेको छोड़कर मैं कहीं न जाऊँगा।

[ज़िहनख़ाँका प्रवेश]

ज़िहन०—और कहीं जाना न पड़ेगा। यह दाराके क़त्लका हुक्म है।

दिल०—यह क्या !

ज़िहन०—शाहजादे साहब, मरनेके लिए तैयार हो जाइए, जल्लाद मौजूद है।

दिल०—तो बादशाहने राय बदल दी ?

ज़िह०—हाँ दिलदार, तुम इस वक़्त मेहरबानी करके बाहर जाओ। हम लोग अपना काम करें।

दारा—औरंगज़ेब इतनी बड़ी सल्तनतके एक कोनेमें साँस लेनेके लिए दो-तीन हाथ ज़मीन भी नहीं दे सकता ? मैं इस तंग और गन्दे मकानमें हूँ,

ोथड़ा पहने हूँ, खानेको दो सूखी और जली रोटियाँ मिलती हैं। नहीं दे सकता ?

०—ज़िहनखाँ, तुम आज ठहर जाओ, मैं बादशाहका दूसरा आता हूँ।

ा०—नहीं दिलदार, बादशाहका यही हुक्म है कि आज ही रात-का कटा हुआ सिर उन्हें ले जाकर दिखाया जाय !

—आज ही रातको ! इतनी जल्दी ! यह सिर उसे चाहिए ही ! ा नींद न आयेगी !—इस सिरकी इतनी क़ीमतका हाल मुझे नहीं था।

ा०—अगर आज ही रातको आपका सिर हम न ले जासकेंगे तो जान जायगी।

—ओह ! ज़िहनखाँ, तो फिर तुम क्या कर सकते हो, लो, मुमे ब बादशाहका हुक्म है !—आज कौन बादशाह है, कौन रिआया हो ! हँसो।

ा०—आप तैयार हैं ?

—तैयार ही हूँ और अगर मैं तैयार न होऊँ, तो उससे तुम ा बिगड़ता है ? (दिलदारसे) एक दिन इसी ज़िहनखाँने हाथ गिड़ाकर मुझसे जान बचानेके लिए कहा था और मैंने इसकी थी। आज—नसीब तेरा खेल !—खूब !

ा०—बादशाहका हुक्म ! क़ाज़ियोंका फ़ैसला ! शाहजादे साहब, सकता हूँ !

—बादशाहका हुक्म ! क़ाज़ियोंका फ़ैसला ! ठीक है, तुम क्या ो !—(दिलदारसे) जाओ दोस्त, तुमसे मेरी यह पहली और ाक़ात है।

०—कुछ न हो सका। मैं आपकी जान नहीं बचा सका, शाह-। जान पड़ता है शायद यही उस रहीमकी मर्ज़ी है। मैं कुछ

समझ नहीं सकता । लेकिन शायद इसका बड़ा भारी मतलब है । इसका एक बड़ा अंजाम है । नहीं तो इतनी बड़ी बेरहमी, इतना बड़ा गुनाह, क्या फ़िज़ूल चला जायगा ! शाहजादे साहब, आप जैसे आदमीकी कुर्बानीका मतलब ज़रूर है । खुशीके साथ खुदाका शुक्रिया अदा करते हुए आप अपनी जान दे दें ।

दारा—जरूर ही । दुःख किसलिए ? एक दिन तो जाना होगा ही । कोई दो दिन पहले गया, कोई दो दिन पीछे । मैं तैयार हूँ । तुमसे विदा होता हूँ दोस्त, तुमसे अभी घड़ी-भरकी जान-पहचान है । तुम कौन हो यह भी नहीं जानता हूँ; मगर तुम मेरे बहुत दिनोंके पुराने दोस्त हो !

दिल०—तो जाइए शाहजादे साहब, इस दुनियामें मेरी और आपकी यही आखिरी मुलाक़ात है ।

दारा—अब मुझे मारो—ज़िहनखाँ !

ज़िहन०—जल्लाद !

[दो जल्लादोंका प्रवेश । ज़िहनखाँका इशारा करना ।]

दारा—ज़रा ठहरो । एक मर्तबा—सिपर ! सिपर—नहीं । क्यों नाहक पुकारा ।

सिपर—(उठकर) अब्बा जान !—यह क्या ! ये कौन हैं अब्बा मुझे खौफ़ मालूम पड़ रहा है ।

दारा—ये मुझे मारनेके लिए आये हैं । तुमसे आखिरी मुलाक़ात करनेके लिए मैंने तुमको जगा दिया है । अब मैं जाता हूँ बच्चे ! (गलेसे लगाना) अब जाओ । ज़िहनखाँ, शायद तुम इतने बड़े शैतान नहीं हो कि मेरे बेटेके आगे मुझे क़त्ल करो । इसे दूसरे कमरेमें ले जाओ ।

ज़िहन—(एक जल्लादसे) इसे उस कमरेमें ले जा ।

सिपर—(जल्लादके पकड़नेपर) नहीं, मैं नहीं जाऊँगा । मेरे अब्बाको मारोगे ? क्यों मारोगे ? (जल्लादके हाथसे अपनेको छुड़ाकर दाराके पास आकर) अब्बा, मैं तुम्हें छोड़कर न जाऊँगा ।

(सिपर ज़ोरसे दाराके पैरोंसे लिपट जाता है)

दारा—बच्चे, मुझसे लिपटकर क्या करेगा ! पकड़कर क्या तू मुझे बचा सकेगा ? जाओ बेटा, ये मुझे क़त्ल करेंगे ! तुमसे देखा न जायगा ।

(दोनों जल्लाद अपनी आँखोंके आँसू पोंछते हैं)

ज़िहन०—ले जाओ ।

(जल्लाद सिपरको पकड़कर खींचता हुआ चलता है)

सिपर—(चिल्लाकर) नहीं, नहीं जाऊँगा । मैं नहीं जाऊँगा । (हाथ छुड़ानेकी चेष्टा करता है)

दारा—ठहरो । मैं उसे समझाये देता हूँ । फिर वह कुछ न कहेगा ।—छोड़ दो ।

(जल्लाद सिपरको छोड़ देता है और वह दाराके पास आकर खड़ा होता है ।)

दारा—(सिपरका हाथ पकड़कर) सिपर !

सिपर—अब्बा !

दारा—सिपर, मेरे प्यारे बच्चे, मुझे जाने दे । अब तक तूने इतने दुख-में भी मुझे नहीं छोड़ा ।—जाड़ेमें, धूपमें, भूख-प्यास और जागनेकी बेचैनी-में, जंगलों और रेगिस्तानोंके सफ़रमें तूने नहीं छोड़ा । मुसीबत और तकलीफ़-से अंधा होकर मैं तेरी छातीमें छुरी मारनेको तैयार हुआ, तब भी तूने मुझे नहीं छोड़ा । सफ़रमें, जंगलमें, कैदमें, जानकी तरह तू मेरे कलेजेसे लगा रहा—तूने मुझे नहीं छोड़ा । आज बेरहम बेदर्द बाप—(कण्ठावरोध हो जाता है । उसके बाद बड़े कष्टसे अपनेको सँभालकर भर्राई हुई आवाज़से) तेरा बेदर्द बाप आज तुझे छोड़े जा रहा है ।

सिपर—अब्बा, अम्मी गई—आप भी—

दारा—क्या करूँ, कोई चारा नहीं है बेटा,मुझे आज मरना ही होगा । अपनी ज़िन्दगी छोड़नेका मुझे आज उतना सदमा नहीं है जितना तुझे छोड़-नेका हो रहा है । (आँखें मूँद लेते हैं) जाओ बेटा, ये लोग मुझे कत्ल करेंगे । वह बड़ा ही खौफ़नाक नज़्ज़ारा होगा । उसे तुम न देख सकोगे ।

सिपर—अब्बा, मैं तुम्हें छोड़कर जाऊँ ?—मैं नहीं जाऊँगा।

दारा—सिपर, कभी तुमने मेरी बात नहीं टाली !—कभी तो—(आँसू पोंछना) जाओ बेटा, मेरा यह आखिरी हुक्म—मेरा यह आखिरी कहना मानो। जाओ।—मेरी बात नहीं सुनोगे ? सिपर बेटा, जाओ।

(सिपर सिर झुकाकर जानेको तैयार होता है)

दारा—सिपर ! (सिपर लौटता है)

दारा—एक मर्तबा—आ—तुझे छातीसे लगा लूँ। (छातीसे लगाना) ओः—अब जाओ बेटा !

(मन्त्र-मुग्धकी तरह सिर झुकाये एक जल्लादके साथ सिपरका प्रस्थान)

दारा—(ऊपर देखकर, छातीपर हाथ रखकर) खुदा ! पहले जनममें मैंने कौन-सा ऐसा गुनाह किया था !—ओः !—जाने दो, हो गया ! जल्लाद, अपना काम कर।

ज़िहन०—उस कमरेमें ले जाकर काम-तमाम करके ले आओ। यहाँ इसकी ज़रूरत नहीं है।

(दोनों जल्लादोंके साथ दाराका प्रस्थान)

ज़िहन०—अपनी जान बचानेवालेका कत्ल अपनी आँखोंसे नहीं देखा, अच्छा ही हुआ।—वह कुल्हाड़ेकी आवाज़—वह मारते वक्तकी आवाज़—

नेपथ्यमें—ओः ! ओः ! ओः !

ज़िहन०—लो, सब तमाम हो गया !

सिपर—(कमरेके भीतरसे) अब्बा ! अब्बा ! (दरवाज़ा तोड़नेकी चेष्टा करता है)

[दाराका कटा हुआ सिर लेकर जल्लादका प्रवेश]

ज़िहन०—दो, सिर मुझे दो। मैं इसे बादशाह सलामतके पास ले जाऊँगा।

(ठीक इसी समय द्वार तोड़कर "अब्बा ! अब्बा !" चिल्लाता हुआ सिपर प्रवेश करता है और पिताका कटा हुआ सिर देख मूर्छित होकर गिर पड़ता है।)

पांचवां अङ्क

पहला दृश्य

स्थान—दिल्लीका दरबार

समय—तीसरा पहर

[तख्ते-ताऊस (मयूरसिंहासन) पर औरंगज़ेब बैठा है, सामने मीरजुमला, शायस्ताखाँ, जसवन्तसिंह, जयसिंह, दिलेरखाँ इत्यादि उपस्थित हैं]

औरंग०—मैंने वायदेके मुताबिक राजा साहबको गुजरातका सूबा दे दिया है।

जसवन्त०—उसके बदलेमें मैं जहाँपनाहको अपनी इच्छासे अपनी सेनाकी सहायता देने आया हूँ।

औरंग०—महाराज जसवन्तसिंह, औरंगज़ेब एक दफ़ाके सिवा दुबारा किसीपर एतबार नहीं करता। लेकिन तो भी हम महाराज जयसिंहकी खातिर मारवाड़के राजाको बादशाहकी खैरख्वाह रिआया बननेका दोबारा मौक़ा देंगे।

जयसिंह—जहाँपनाहकी मेहरबानी।

जसवन्त०—जहाँपनाह, मैं समझ गया हूँ कि छल-कपटसे हो, या बल और शक्तिसे हो, जहाँपनाहने जब सिंहासनपर बैठकर साम्राज्यमें एक शान्ति स्थापित कर दी है, तब किसी तरह उस शांतिको नष्ट करना पाप है।

औरंग०—राजा साहबके मुँहसे यह बात सुनकर मैं बहुत खुश हुआ। जान पड़ता है, हम शायद राजा साहबको अपने खैरख्वाहोंमें समझ सकते हैं।

जसवंत०—निश्चय।

औरंग०—अच्छी बात है राजा साहब।—वज़ीरेआज़म, सुल्तान शुजा इस वक्त अराकानके राजाकी पनाहमें हैं न ?

मीर०—गुलाम उन्हें अराकानकी सरहदतक खदेड़कर पहुँचा आया है।

औरंग०—वज़ीरेआज़म, हम आपकी दिलेरी और हिम्मतकी तारीफ़

करते हैं। सिपहसालार, तुम शाहज़ादे मुहम्मदको ग्वालियरके क़िलेमें क़ैद कर आये ?

शायस्ता०—हाँ खुदावंद !

औरंग०—बेचारा साहबज़ादा !—लेकिन दुनिया देख ले कि मैं सबसे एक-सा बर्ताव करता हूँ ! मैं बेटे या दोस्तके साथ कोई रियायत नहीं करता।

जयसिंह—जहाँपनाह, इसमें क्या संदेह है।

औरंग०—बदक़िस्मत दाराकी मौतने हमारी सारी कामयाबीको फीका कर दिया है। लेकिन भाई-बेटे जायँ, दीनकी तरक्क़ी हो।—सिपहसालार, भाई मुराद ग्वालियरके क़िलेमें खैरियतसे है ?

शायस्ता०—हाँ खुदावंद !

औरंग०—नासमझ भाई ! तुमने अपनी खतासे सल्तनत खो दी और मैं मक्के-शरीफ़ जानेका सवाब न हासिल कर सका—खुदाकी मर्ज़ी।—दिलेरखाँ, तुमने सुलेमानको किस तरह क़ैद किया ?

दिलेर०—जहाँपनाह, श्रीनगरके राजा पृथ्वीसिंहने शाहज़ादे और उनकी फ़ौजको अपने यहाँ पनाह देनेसे इंकार कर दिया। तब शाहज़ादे हम लोगोंको छोड़नेपर लाचार हुए। इसके बाद ही मुझे जहाँपनाहका परवाना मिला था। मैंने राजासे मुलाक़ात करके जहाँपनाहके हुक्मके मुताबिक कहा कि "शाहज़ादे सुलेमान बादशाहके भतीजे हैं। बादशाह उनको अपने लड़केसे बढ़कर चाहते हैं। अगर आप शाहज़ादेको बादशाहके हाथमें सौंप देंगे, तो आपकी ईमानदारी या धरममें बट्टा नहीं लगेगा।" श्रीनगरके राजाने पहले तो शाहज़ादेको मुझे देना नामंजूर कर दिया। लेकिन दूसरे ही दिन उन्होंने शाहज़ादेको अपने यहाँसे रुखसत कर दिया। सबब कुछ समझमें नहीं आया।

औरंग०—बदनसीब शाहज़ादा ! उसके बाद ?

दिलेर०—शाहज़ादे तिब्बतके लिए रवाना हुए। लेकिन रास्ता न मालूम होनेके सबब रातभर भटककर सबेरे फिर श्रीनगरके किनारे आ गये। उसके बाद मय-फ़ौजके मैंने जाकर उन्हें गिरफ़्तार लिया कर। इसमें अगर मेरी कुछ खता हुई हो, तो खुदा मुझे मुआफ़ करें। मैं किसी खास आदमीका

नौकर नहीं हूँ, मैं बादशाहका सिपहसालार हूँ। बादशाह सलामतके हुक्मकी तामील करनेके लिए मैं लाचार था।

औरंग०—खाँ साहब, उसे यहाँ ले आइए।

दिलेर०—जो हुक्म (प्रस्थान)

औरंग०—राजा साहब, ज़िहनखाँको क्या शहरके वाशिंदोंने मिलकर मार डाला ?

जयसिंह—हाँ खुदावंद, सुना कि ज़िहनखांकी रिआयाने ही उसका खून कर डाला ?

औरंग०—खुदाने गुनहगारको ठीक सज़ा दी। वह लो, शाहज़ादा आ गया।

[शाहज़ादे सुलेमानके साथ दिलेरखाँका फिर प्रवेश]

औरंग०—आओ शाहज़ादे!—शाहज़ादे सुलेमान!—क्यों शाहज़ादे, सिर क्यों झुकाये हुए हो ?

सुले०—बादशाह—(कहते कहते रुक गये)

औरंग०—कहो शाहज़ादे, क्या कहते थे, कहो ! तुम्हें कुछ डर नहीं है। तुम्हारे अब्बाके मारनेकी ज़रूरत ही आ पड़ी थी। नहीं तो—

सुले०—जहाँपनाह, मैं आपसे कैफ़ियत नहीं तलब करता। और फ़तह-याब औरंगजेबको आज किसीके आगे कैफ़ियत देनेकी ज़रूरत भी नहीं है। कौन इन्साफ़ करेगा ? मुझे भी मार डालिए। जहाँपनाहकी छुरीमें काफ़ी धार है, उसे ज़हरमें बुझानेकी क्या ज़रूरत है !

औरंग०—हम तुम्हारी जान नहीं लेंगे। मगर—

सुले०—बादशाह सलामत, इस 'मगर' के माने मैं जानता हूँ कि आप मौतसे भी कड़ी और खौफ़नाक कोई बात करना चाहते हैं। बादशाहके दिल-में अगर एक बेरहमी और बेदर्दीका काम करनेका खयाल पैदा हो, तो दुश्म-नके लिए उससे बढ़कर और खौफ़ नहीं। लेकिन अगर बेदर्दीके दो कामोंके करनेका खयाल पैदा हो जाय, तो मैं जानता हूँ कि उनमें जो बढ़कर बेदर्दी-का काम होगा वही आप करेंगे। आपके बदला लेनेसे आपकी मेहरबानी ज्यादह खौफ़नाक है। फ़रमाइए बादशाह सलामत—'मगर'—

औरंग०—परेशान न होना शाहज़ादे !

सुले०—नहीं । और क्यों—ओः ! इन्सान इतनी सहूलियतसे बात-चीत कर सकता है, और साथ ही इतना बड़ा शैतान भी हो सकता है !

औरंग०—सुलेमान हम तुम्हें सताना नहीं चाहते । तुम्हारी अगर कुछ ख्वाहिश हो, तो कहो ! हम मेहरबानी करेंगे ।

सुले०—मैं सिर्फ़ यही चाहता हूँ कि जहाँपनाह हत्तुल-इमकान (भरसक) मुझे खूब सतायें ! अपने बापके खूनीसे मैं रत्ती-भर भी मेहरबानी नहीं चाहता । बादशाह सलामत, सोचकर देखिए, आपने क्या किया है ! अपने भाईको,—एक ही माके पेटकी औलाद, एक ही बापकी मुहब्बतकी नज़रके नीचे पले हुए एक खून-मांस,—जिससे बढ़कर दुनियामें अपना सगा कोई नहीं,—उसी भाईको आपने मरवा डाला । जो बचपनके खेलोंका साथी, जवानीमें पढ़ने लिखनेका मेहरबान साथी—जिसकी तरफ़ अगर कोई टेढ़ी आँखसे देखता तो वह देखना आपके कलेजेमें तीरकी तरह लगता—जिसे चोटसे बचानेके लिए आपको अपनी छाती आगे कर देनी वाजिब थी—उसे—उसे आपने क़त्ल करवा डाला ! और ऐसा भाई—आप कहते तो यह सल्तनत वह आपको एक मुट्ठी धूलकी तरह उठाकर दे सकते थे, उन्हों-ने आपसे कभी कोई बुरा बर्ताव या आपकी कोई बुराई नहीं की । उनकी खता यही थी कि सब लोग उन्हें चाहते थे—ऐसे भाईको आपने क़त्ल करवा डाला । हश्रके दिन जब उनका सामना होगा, तब क्या आप उनकी तरफ़ आँख उठाकर देख सकेंगे ?—खूनी ! ज़ालिम !—शैतान ! तुम्हारी मेहर-बानी ? तुम्हारी मेहरबानीको मैं नफ़रतसे लात मारता हूँ ।

औरंग—अच्छा तो वही हो । मैं तुम्हारे लिए मौतकी सज़ाका हुक्म देता हूँ ।—ले जाओ । (सिंहासनसे उतरता है) अल्लाहका नाम लो सुलेमान ।

[बालकके वेषमें तेज़ीसे जोहरत-उन्निसाका प्रवेश]

जोहरत—अल्लाहका नाम लो औरंगज़ेब ! (बन्दूक तानकर गोली चलाना चाहती है ।)

सुले०—यह कौन ? जोहरत-उन्निसा ! ! (जोहरतका हाथ पकड़ लेता है ।)

जोहरत—छोड़ दो—छोड़ दो । कौन हो तुम ? इस गुनहगारको मैं आज मार डालूँगी । छोड़ दो—छोड़ दो ।

सुले०—यह क्यों जोहरत ! सब्र करो—खूनका एवज़ खून नहीं है । अज़ाबसे सबाबकी जड़ नहीं जमती । मैं चाहता, तो सामने लड़कर इसे मार डालता । लेकिन क़त्ल—बड़ा भारी गुनाह है ।

जोहरत—डरपोक नामर्दो ! बापके नालायक बेटो !—चले जाओ ! मैं अपने बापके खूनका बदला लूँगी ! छोड़ दो—यह—बना हुआ, लुटेरा, खूनी—

(मूर्छित हो जाती है ।)

औरंग०—ऐ दिलेर और नेक शाहजादे—जाओ, तुम्हें न मारूँगा । शायस्ताखाँ, इसे ग्वालियरके क़िलेमें ले जाओ ।—और दाराकी बेटीको मेरे अब्बाके पास आगरेके क़िलेमें पहुँचा दो ।

दूसरा दृश्य

स्थान—अराकानका राजमहल

समय—रात

[शुजा और पियारा]

शुजा—कौन जानता था कि तक़दीर हमें खदेड़कर आखिर इस जंगली अराकानके राजाकी पनाह लेनेको मजबूर करेगी ?

पियारा—और यही कौन जानता है कि यहाँसे खदेड़कर कहाँ ले जायगी ?

शुजा—जंगली राजाने क्या अफ़वाह उड़ा दी है, जानती हो ?

पियारा—क्या ? ज़रूर कोई अजीब बात होगी । जल्द बताओ, क्या अफ़वाह उड़ा दी है ? सुननेके लिए मेरी जान निकली जा रही है ।

शुजा—उस पाजीने अफ़वाह उड़ा दी है कि मैं इन चालीस सवारों-को लेकर अराकान जीतने आया हूँ ।

पियारा—तुम्हारा एतबार ही क्या ! मैंने सुना है, बख्तियार खिलजी-ने सिर्फ़ सत्रह सवारोंसे बंगाल फ़तह कर लिया था ।

शुजा—ग़ैरमुमकिन है । ज़रूर किसीने दुश्मनीसे ऐसे ही गप उड़ा दी है । मैं यक़ीन नहीं कर सकता ।

पियारा—इससे क्या होता है !

शुजा—पियारा, राजाने क्या हुक्म दिया है, जानती हो ? राजाने हमें कल सवेरे चले जानेके लिए हुक्म दिया है ।

पियारा—कहाँ ? ज़रूर उसने हमारे लिए किसी खूब अच्छी आबो-हवाकी जगहमें रहनेका बन्दोबस्त कर दिया होगा ।

शुजा—पियारा, क्या तुम कभी भूलकर भी ऐसी सख्त वारदातोंकी दुनियामें क़दम न रक्खोगी ? इसमें भी दिल्लगी !

पियारा—इसमें शायद दिल्लगीकी बात करना अच्छा नहीं । पर यह पहले ही कह देते ।—अच्छा लो, मैं संजीदगी (गंभीरता) इख्तियार करती हूँ ।

शुजा—हाँ, जी लगाकर सुनो । और एक बात सुनोगी ? अगर सुनोगी तो आँखें बाहर निकल आवेंगी, गुस्सेसे गला रुँध जायगा, रगोंसे आगकी चिनगारियाँ निकलने लगेंगी ।

पियारा—अरे बाप रे !

शुजा—अच्छा कहता हूँ—सुनो ।—वह पाजी हमें पनाह देनेकी क़ीमत क्या चाहता है, जानती हो ? वह तुम्हें चाहता है । क्या सन्नाटेमें आ गई !—अब करो दिल्लगी !

पियारा—ज़रूर । मेरी नज़रमें राजाकी इज़्ज़त बढ़ गई ।—वह राजा बेशक समझदार है ।

शुजा—पियारा, ऐसी बातें न करो । मैं पागल हो जाऊँगा । यह तुम्हारे नज़दीक दिल्लगी हो सकती है, लेकिन मेरे नज़दीक यह जिगरके टुकड़े टुकड़े कर देनेवाली तलवार है ।—पियारा, तुम जानती हो, तुम मेरी कौन हो ?

पियारा—जान पड़ता है, बीबी हूँ ।

शुजा—नहीं । तुम मेरी सल्तनत, इज़्ज़त, हशमत, सब कुछ, दीन-

दुनिया और आक़बत भी हो! सल्तनत नहीं पाई—लेकिन अब तक कभी उसका खयाल नहीं हुआ।—आज हुआ।

पियारा—क्यों?

शुजा—जो मेरे लिए जीने मरनेका सवाल है, उसीको लेकर तुम दिल्लगी कर रही हो।

पियारा—नहीं, यह बहुत ज़्यादती है। दूसरा ब्याह तो बहुत लोग करते हैं, लेकिन तुम्हारी तरह किसीकी बरबादी नहीं हुई होगी।

शुजा—नहीं। मैं समझ गया।—तुम सिर्फ़ मुँहसे दिल्लगी करती हो। लेकिन भीतर ही भीतर कुढ़ी मरी जाती हो। तुम्हारे मुँहमें हँसी और आँखोंमें आँसू है।

पियारा—जान लिया!—नहीं तो। किसने कहा कि मेरी आँखोंमें आँसू हैं? यह लो (आँखें पोंछती है), अब नहीं हैं।

शुजा—अब क्या करना चाहती हो?

पियारा—मुझे बेच डालो।

शुजा—पियारा, अगर तुम मुझे चाहती हो तो यह ज़हरभरी दिल्लगी रहने दो। सुनो, मैं क्या करूँगा, जानती हो?

पियारा—ना।

शुजा—मैं भी नहीं जानता।—औरंगज़ेबके पास जाऊँ?—नहीं, उससे मरना अच्छा। क्या, तुम तो कुछ कहती नहीं पियारा!

पियारा—सोचती हूँ।

शुजा—सोचो।

पियारा—(दमभर सोचकर) लेकिन लड़के लड़की?

शुजा—क्या?

पियारा—कुछ नहीं।

शुजा—मैं क्या करूँगा, जानती हो?

पियारा—ना।

शुजा—समझमें नहीं आता। खुदकुशी (आत्महत्या) करनेको जी

चाहता है।—लेकिन तुमको छोड़कर मरा भी नहीं जाता।

पियारा—और अगर मैं भी साथ चलूँ?

शुजा—सुखसे मर सकता हूँ।—नहीं, मेरे लिए तुम क्यों मरोगी!

पियारा—ना। वही हो। कल सबेरे हम निकाले हुए न जायँगे, कल जंग होगी। इन चालीस सवारोंको लेकर ही इस राज्यपर हमला करो; हमला करके बहादुरोंकी तरह मरो। मैं तुम्हारे पास खड़ी होकर मरूँगी। और लड़की लड़के—उम्मेद है, वे अपनी इज़्ज़त आप रखेंगे। क्या कहते हो?

शुजा—अच्छा—लेकिन उससे फ़ायदा क्या होगा?

पियारा—इसके सिवा चारा क्या है। तुम्हारे जानेपर मुझे कौन बचाएगा? और तुम अबतक बहादुरोंकी तरह ज़िन्दा रहे हो, बहादुरोंकी ही तरह मरो। इस जंगली राजाको ऐसी गन्दी बात मुँहसे निकालनेकी काफ़ी सज़ा दो।

शुजा—अच्छी बात है। तो कल हम दोनों पास-पास खड़े होकर मरेंगे।—पियारा, हमारी इस ज़िन्दगीके मिलनेकी यही आखिरी रात है! तो आज हँसो, बातें करो, गाओ—जिससे अब तक तुम मुझे छाये हुए—घेरे हुए रहती थीं!—एक मर्तबा, आखिरी मर्तबा देख लूँ, सुन लूँ! अपना सितार छेड़ो! गाओ—बहिश्त इस दुनियामें उतर आवे। सितारकी झन-कार और तानसे आसमानको गुँजा दो। अपने हुस्नसे एक दफ़ा इस अँधेरेको दबा दो। अपनी मुहब्बतसे मुझे ढँक लो। ठहरो, मैं अपने सवारोंसे कह आऊँ। आज रातभर न सोऊँगा।

पियारा—मौत!—वही हो! मौत—जहाँ इस दुनियाकी सब उम्मीदों और ख्वाहिशोंका खातमा है, सुख-दुखका अन्त है; मौत—जो गहरी नींद यहाँ खुलती नहीं, जिस अँधेरेमें कभी सबेरा नहीं होता, जो बेहोशी और खामोशी कभी जाती नहीं। मौत!—बुरी क्या है, एक दिन तो होगी ही। तो दिन रहते ही हाथ-पैर चलते ही—मरना अच्छा। आज यह रूप, बुझते हुए चिरागकी लौकी तरह, उजली चमकसे जल उठे; यह गाना बलन्द आवाज़से आसमानपर चढ़कर सितारोंकी दुनियाको लूट ले; आराम आजका

आफ़तकी तरह हिल उठे; खुशी दुखकी तरह रो उठे, सारी ज़िन्दगी एक प्यारके बोसेमें खत्म हो जाय।—आज हमारे ऐशकी आखिरी रात है।

(प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

स्थान—आगरेका शाही किला

समय—रात

[बाहर आँधी, पानी और बिजली। शाहजहाँ और जोहरतउन्निसा]

शाह०—किसकी मज़ाल है कि दाराका खून करे ? मैं बादशाह शाहजहाँ खुद उसका पहरा दे रहा हूँ। किसकी मज़ाल है ?—औरंगज़ेब ?—नाचीज़ है!—मैं अगर आँखें लाल करूँ, तो औरंगज़ेब डरसे काँप उठेगा! मैं अगर कहूँ आँधी उठे, तो आँधी उठेगी, अगर कहूँ बिजली गिरे, तो बिजली गिरेगी। (बादल गरजता है।)

जोहरत—ओः कैसा बादल गरज रहा है। बाहर ज़मीन-आसमान पानी वगैरहमें जंग छिड़नेसे हलचल मची हुई है और भीतर इन आधे पागल बाबाजानके दिलमें भी वैसी हलचल मची हुई है! (मेघका गरजना) ओः फिर!

शाह०—हथियार लो, हथियार लो! तलवार, भाला, तीर, कमान लेकर दौड़ो! वे आ रहे हैं, वे आ रहे हैं!—लड़ूँगा। जंगी बाजे बजाओ। झंडा खड़ा करो! वे आ रहे हैं।—दूर हो, खूनके प्यासे शैतानके गुलाम!—मुझे नहीं पहचानता! मैं बादशाह शाहजहाँ हूँ! हटकर खड़ा हो!

जोहरत—बाबाजान, जोशमें न आइए। चलिए, आपको सुला आऊँ।

शाह०—ना। मेरे हटते ही वे दाराको मार डालेंगे।—पास न आना। खबरदार—

जोहरत०—बाबाजान!

शाह०—पास न आना। तुम लोगोंकी साँसमें ज़हर है,—वह साँस बँधे हुए गंदे पानीकी हवासे भी बढ़कर ज़हरीली है, सड़ी हड्डीसे भी बढ़कर

बदबूदार ... हता हूँ, आगे क़दम न बढ़ाना।

जोहरत—बाबाजान, रात ज़्यादह बीत गई है। सोने चलिए।

[जहानाराका प्रवेश]

जहा०—कैसा पुरदर्द नज़्ज़ारा है! बे-बापकी लड़की औलादके गममें पागल हुए बुड्ढेको तसल्ली दे रही है! मगर उसके ही कलेजेमें धकधक करके आग जल रही है। कैसा पुरदर्द और पुरअसर नज़्ज़ारा है!—देख जाओ औरंगज़ेब! अपनी करतूत देख जाओ!

जोहरत—फूफी, तुम उठ क्यों आई?

जहा०—बादलोंके गरजनेसे आँख खुल गई!—अब्बाजान फिर पागलोंकी तरह बक रहे हैं?

जोहरत—हाँ फूफी।

जहा०—दवा दी है?

जोहरत—दी है। लेकिन, मालूम नहीं इस बार होश आनेमें देर क्यों हो रही है।

शाह०—किसने किया! किसने किया!

जोहरत—क्या बाबाजान!

शाह०—खून! खून! वह खून निकल रहा है! तमाम फर्श भीग गया।—देखूँ! (दौड़कर दाराके कल्पित रुधिरको अपने दोनों हाथोंमें मलकर) अभीतक गर्म है, धुआँ उठ रहा है।

जहा०—अब्बा, इतनी रात बीत गई, अभीतक आप नहीं सोये?

शाह०—औरंगज़ेब! मेरी तरफ देखकर हँस रहा है? हँस!—नहीं पाजी! तुझे सज़ा दूँगा! खड़ा रह खूनी! हाथ जोड़कर खड़ा हो!—क्या!—मुआफ़ी माँगता है? मुआफ़ी!—मुआफ़ी नहीं दी जा सकती। तूने सोचा था, मैं अपना लड़का समझकर तुझे मुआफ़ कर दूँगा?—ना! तुझे भूसीकी आगमें जलानेका हुक्म देता हूँ।—जाओ, ले जाओ।

जहा०—अब्बा, सोने चलिए।

जोहरत—आइए बाबाजान। (हाथ पकड़ती है)

शाह०—क्या मुमताज ! तुम उसकी तरफ़से माफ़ी माँगती हो ! नहीं, मैं मुआफ़ नहीं करूँगा। मैंने उसे उसके जुर्मकी सज़ा दी है। उसने दाराका खून किया है।

जहा०—नहीं अब्बा, खून नहीं किया। चलकर सोइए।

शाह०—खून नहीं किया ? खून नहीं किया ?—सच, खून नहीं किया ? तो फिर मैंने क्या देखा ! ख्वाब ?

जहा०—हाँ अब्बा, ख्वाब।

शाह०—तब भी अच्छा है ! लेकिन यह बड़ा बुरा ख्वाब था। अगर सच हो !—क्यों जोहरत ! रो रही है !—तो क्या वह ख्वाब नहीं है ? ख्वाब नहीं है ? ओ-हो-हो-हो-हो-!　　(मेघका गरजना)

जोह०—यह क्या हो रहा है बाहर ! आजकी रात ही क्या क़यामतकी रात है ?—सब पागल हो उठे हैं,—पानी, आग, हवा, आसमान, ज़मीन,—सब पागल हो उठे हैं।—ओः कैसी खौफ़नाक रात है !

शाह०—यह सब क्या जहानारा ?

जहा०—अब्बा, रात ज़्यादह हो गई है। सोइए। आप पागल तो हैं नहीं।

शाह०—नहीं, मैं पागल नहीं हूँ। समझ गया, समझ गया।—जहानारा, बाहर यह सब क्या हो रहा है ?

जहा०—बाहर एक क़यामत हो रही है। वह सुनिए अब्बाजान,—बादल गरज रहा है ! वह सुनिए,—पानी ज़ोरसे बरस रहा है ! वह सुनिए,—हवाकी हुमक ! बारबार बिजली चमक रही है। पानीका सोता मानो उमड़ चला है। आँधी उस पानीको ज़मीनपर तीरकी तरह पहुँचा रही है।

शाह०—करो पाजियो ! खूब ऊधम करो, खूब शैतानी करो। यह ज़मीन चुपचाप सह लेगी। इसने तुम्हें पैदा ही क्यों किया था ! इसने तुम्हें अपनी गोदमें पाल-पोसकर इतना बड़ा क्यों किया था ! तुम सयाने हुए हो, अब क्यों मानोगे !—जिसने जैसा किया वैसा फल पाया। करो पाजियो ! क्या करेगी वह ? ढेरके ढेर आगके शोले उगलेगी ? उगले। वे

शोले आसमानमें जाकर दूने ज़ोरसे उसीकी छातीपर पड़ेंगे और उसे जला देंगे। वह समंदरमें लहरें उठाकर गुस्सेसे फूल उठेगी ? फूल उठे। वे लहरें उसीकी छातीपर लंबी साँसोंकी तरह बेकार हो-होकर रह जायँगी। भीतर रुकी हुई भापसे (गर्मीसे) वह भूचालमें हिल उठेगी ? लेकिन डर नहीं है। उससे खुद उसीकी छाती फट जायगी, तुम्हारा वह कुछ न कर सकेगी।— अपाहिज़ बुढ़िया ! वह बेचारी क्या कर सकती है ? सिर्फ़ अनाज दे सकती है, पानी दे सकती है, फूल फल दे सकती है। और कुछ नहीं कर सकती। करो, उसके ऊपर ज़ुल्म करो। उसकी छातीको सितमके कुल्हाड़ोंसे चीरते चले जाओ, वह कुछ न कर सकेगी !—करो पाजियो !—मैया ! एक दफ़ा गरज उठ सकती हो मैया ? क़यामतकी आवाज़से, सैकड़ों सूरजोंकी तरह जलकर फटकर, चौ-चीर होकर इस खाली आसमानमें छिटक जा सकती हो मैया ? देखूँ, वे कहाँ रहते हैं ? (दाँत पीसता है)

जहा०—अब्बा, इस बेकार गुस्सेसे क्या होगा ! चलिए, सोइए।

शाह०—सच बेटी,—बेकार है ! बेकार है ! बेकार है ! (मेघगर्जन)

जोहरत—ओः कैसी रात है फूफी ! ओः कैसी खौफ़नाक है !

शाह०—जी चाहता है जहानारा, इस रातकी आँधी पानी और अँधेरेमें एक बार खूब तेज़ीसे दौड़ूँ और ये सफ़ेद बाल नोचकर, इस हवामें उड़ाकर, इस बरसातमें बहा दूँ। जी चाहता है कि अपनी छाती खोलकर बिजलीके आगे कर दूँ। जी चाहता हैं कि यहाँसे अपनी रूह निकालकर खुदाको दिखाऊँ। वह फिर गरज रहा है ! बादल ! तुम बार बार क्यों बेकार गरज़ रहे हो ? अपनी चोटसे ज़मीनकी छातीके टुकड़े-टुकड़े कर सकते हो ? अँधेरे ! कैसा अँधेरा है !—तू सूरज और तारोंको एकदम निगलकर नेस्तोनाबूद कर सकता है ?

जहा०—वह फिर !—

तीनों—ओः कैसी रात है !

चौथा दृश्य

स्थान—ग्वालियरका क़िला

समय—सवेरा

[सुलेमान और मुहम्मद]

सुले०—सुना मुहम्मद, फ़ैसलेमें चचाको मौतकी सजा दी गई है !

मुह०—फ़ैसलेमें नहीं भाई, फ़ैसलेका ढोंग रचकर। सिर्फ़ बाक़ी थे यही चचा, आज उनका भी खात्मा हुआ।

सुले०—मुहम्मद, तुम्हारे ससुर सुल्तान शुजाकी मौत कैसे हुई ?

मुह०—ठीक मालूम नहीं। कोई कहता है, वे मय बीबीके दरियामें गये। कोई कहता है, वे मय बीबीके लड़कर मरे और लड़की-लड़कोंने खुदकुशी (आत्महत्या) कर ली।

सुले०—तो उनके खानदानमें कोई नहीं रह गया ?

मुह०—नहीं।

सुले०—तुम्हारी बीबीने सुना है ?

मुह०—सुना है। वह कल रात-भर रोती रही; सोई नहीं।

सुले०—मुहम्मद, तुम्हें इतना बड़ा रंज है, सह सकते हो ?

मुह०—और तुम्हें यह बड़ा आराम है ! माँ-बापसे मिलने निकले थे मगर उनसे मुलाक़ात भी नहीं हुई।

सुले०—फिर उसी बातकी याद दिला रहे हो ! मुहम्मद, तुम इतने संगदिल हो !—तुम्हारे अब्बाने क्या तुम्हें यहाँ मुझे इसी तरह जलानेके लिए भेजा है ? तुम्हें तो मुझे बहलाना और तसल्ली देना चाहिए।

मुह०—भाई साहब, अगर इस कलेजेका खून देनेसे तुम्हें कुछ भी तसल्ली हो, तो कहो मैं अभी छुरी भोंक लूँ !

सुले०—सच कहते हो मुहम्मद, इस रंजके लिए दिलासा है ही नहीं।

अगर बिल्कुल भुला सकते हो, अगर गुज़रे हुएको एकदम मिटा सकते हो, तो मिटा दो।

मुह०—क्या ऐसी कोई तरकीब नहीं है ? भाई साहब, क्या ऐसा कोई ज़हर नहीं है कि—

सुले०—वह देखो मुहम्मद,—सिपरको देखो।

[पुलके ऊपर सिपरका प्रवेश]

सुले०—वह देखो उस बच्चेको, मेरे छोटे भाई सिपरको देखो! देखो इस गूँगी बुत सूरतको! छातीके ऊपर दोनों हाथ बाँधे एकटक दूर सुनसान-की तरफ़ चुपचाप ताक रहा है! ऐसा खौफ़नाक और पुरदर्द नज़्ज़ारा कभी देखा है मुहम्मद ?—इसको देखकर भी क्या तुम अपने रंजका ख्याल कर सकते हो ?

मुह०—ओः कैसा खौफ़नाक है!—सच कहा! हमारा रंज मुँहसे कहा जा सकता है लेकिन यह रंज तो बयान ही नहीं किया जा सकता। बच्चा जब रोता है, तब पास ही अगर किसीके कराहनेका शोर उठे, तो डरसे बच्चेका रोना थम जाता है। वैसे ही हमारा रंज इस रंजके आगे खौफ़से चुप हो जाता है।

सुले०—उसे देखो, वह दोनों आँखें मूँदे दोनों हाथ मल रहा है। शायद सदमेसे चिल्लाना चाहता है, मगर आवाज़ नहीं निकलती! सिपर! सिपर! भाई!

(एक बार सुलेमानकी तरफ़ देखकर सिपरका प्रस्थान)

मुह०—भाई साहब!

सुले०—मुहम्मद!

मुह०—मुझे मुआफ़ करो।

सुले०—तुमसे क्या खता हुई है भाई ?

मुह०—नहीं भाई साहब, मुझे मुआफ़ करो। इतने गुनाहका बोझ अब्बा जान सँभाल नहीं सकेंगे। इसीसे आधा गुनाह मैं अपने सिर लेता हूँ। मैं बड़ा भारी गुनहगार हूँ। मुझे मुआफ़ करो। (घुटने टेक देता है)

सुले०—उठो भाई!—शरीफ़ नेक बहादुर। मैं तुम्हें मुआफ़ करूँगा? तुम जो सह रहे हो, वह अपनी खुशीसे ईमानके लिए। मैं ही सिर्फ़ बदनसीब हूँ।

मुह०—तो कहो कि मुझसे तुम्हें कुछ मलाल नहीं है और 'भाई' कह कर मुझे गलेसे लगा लो।

सुले०—मेरे भाई! (गले लगता है)

मुह०—वह देखो चाचा जानको (मुरादको) लोग कत्लके लिए लिये जा रहे हैं!

[सुलेमान उधर देखता है। पुलके ऊपर पहरेके साथ मुरादका प्रवेश]

मुराद—(ऊँचे स्वरमें) या अल्लाह! अपने गुनाहोंकी सज़ा मैं पा रहा हूँ, इसका मुझे रंज नहीं है। लेकिन औरंगज़ेब क्यों बच रहा है?

सुले०—यह किसकी आवाज़ है?

मुह०—मेरी बीबीकी।

नेपथ्य—उसको जो सज़ा मिलेगी, उसके आगे तुम्हारी यह सज़ा तो इनाम है।—कोई नहीं बचेगा।

मुराद—(उल्लासके साथ) उसे भी सज़ा मिलेगी? तो मुझे कत्ल-गाहमें ले चलो। मुझे अब कुछ रंज नहीं है। (पहरेके साथ मुरादका प्रस्थान)

सुले०—मुहम्मद, यह क्या! तुम एकटक उधर ही ताक रहे हो! क्या देखते हो?

मुह०—दोज़ख! इसके सिवा, और भी क्या कोई दोज़ख है? या खुदा, वह कैसा होगा!

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—औरंगज़ेबकी बाहरी बैठक

समय—आधी रात।

[अकेले औरंगज़ेब]

औरंग०—जो किया—दीनके लिए। अगर और किसी तरह मुमकिन होता!—(बाहरकी तरफ देखकर) ओः कैसा अंधेरा है!—कौन ज़िम्मेदार

है ? मैं ? फैसला है ! यह कैसी आवाज़ है ? —नहीं, हवाकी आहट है !-यह क्या ! किसी तरह इस खयालको दिलसे दूर ही नहीं कर सकता। रातको नींदकी खुमारीसे ढुलका पड़ता हूँ, मगर नींद नहीं आती ! (लम्बी साँस लेता है) ओः ! कैसा सन्नाटा है ! इतना सन्नाटा क्यों है ! (टहलता है, फिर एकाएक खड़े होकर) वह क्या है ! फिर वही दाराका कटा हुआ सिर !-- शुजाकी खूनसे तर लाश ! मुरादका धड़ !-जाओ सब ! मुझे यकीन नहीं। अरे ये फिर वे ही लोग मुझे घेरकर नाच रहे हैं---कौन हो तुम ? धुएँकी चमकदार चोटीकी तरह बीच बीचमें—जागते हुए भी सोतेकी-सी हालतमें मुझे देख पड़ते हो !—चले जाओ !—वह मुरादका धड़ मुझे पुकार रहा है। दाराका सिर मेरी तरफ़ एकटक ताक रहा है, शुजा हँस रहा है।—यह सब क्या है ! ओः—(आँख बन्द कर लेना, फिर खोलना) जाने दो ! गया ! ओः !—बदनमें तेज़ीके साथ खून चक्कर मार रहा है। सिरपर मानों किसी-ने पहाड़ लाद दिया है।

(दिलदारका प्रवेश)

औरंग०— (चौंककर) दिलदार ?

दिल०—जहाँपनाह !

औरंग०—यह सब मैंने क्या देखा ?—जानते हो ?

दिल०—इन्साफ़के पर्देके ऊपर गर्म पछतावेकी परछाहीं !—तो शुरू हो गया ?

औरंग०—क्या ?

दिल०—पछतावा। जानता था कि ज़रूर ही होगा। इतने बड़े कुद-रती कानूनके खिलाफ़ काम,—कायदेका इतना बड़ा उलट-फेर—कुदरत क्या बहुत दिनों तक सह सकती है ?—कभी नहीं।

औरंग—दिलदार, कायदेका उलट--फेर क्या ?

दिल०—यही बूढ़े बापको नज़रबन्द रखना ! जानते हैं जहाँपनाह, आपके अब्बा आज आपकी बेरहमी देखकर पागल हो गये हैं !—उसपर

एकके बाद एक भाइयोंका खून ! इतना बड़ा अज़ाब क्या यों ही चला जायगा ?

औरंग०—कौन कहता है मैंने भाइयोंका खून किया है ? यह काज़ियों का फ़ैसला है !

दिल०—हमेशा औरोंको धोखा देते रहनेसे क्या जहाँपनाहको यह भी यकीन हो गया है कि आप अपनेको भी धोखा दे सकते हैं ? यही सबसे बढ़कर मुश्किल है। आप भाइयोंको गला घोंटकर मार सकते हैं; लेकिन इन्साफ़को जल्दी गला घोंटकर न मार सकेंगे। हज़ार उसका गला घोंटिए, तब भी उसकी धीमी, गहरी, ढँकी हुई, टूटी-फूटी आवाज़—दिलके भीतर-से रह-रहकर सुनाई ही देगी। अब अपने ऐमालोंका नतीजा भोगिए।

औरंग०—जाओ तुम यहाँसे। कौन हो तुम दिलदार, जो औरंगज़ेब-को नसीहत देने आये हो ?

दिल०—मैं कौन हूँ औरंगज़ेब ? मैं हूँ मिर्ज़ा मुहम्मद नियामतखाँ हाजी।

औरंग०—नियामतखाँ हाजी ?—एशियाके सबसे बढ़कर मशहूर आक़िल दानिशमन्द नियामत खाँ ?

दिल०—हाँ औरंगज़ेब, मैं वही नियामत हूँ। सुनो, मैं शाही मामलों-की जानकारी हासिल करनेके लिए, इत्तिफ़ाक़िया इस घरेलू झगड़ेके चक्क-रमें आकर पड़ गया था। वही जानकारी हासिल करनेके लिए मैं नीच मसखरा बना, और एक बार एक मामूली चालाकीमें भी शरीक हुआ।—लेकिन जो जानकारी लेकर मैं आज यहाँसे जाता हूँ, जान पड़ता है, उसे न ले जाता तो अच्छा था !—औरंगज़ेब, क्या तुमने यह सोचा था कि मैं अब तक तुम्हारे रुपयोंके लिए तुम्हारी गुलामी कर रहा था ? इल्ममें इस वक्त भी वह शान है कि वह मग़रूर दौलतके सिरपर लात मार देता है। बादशाह सलामत, मैं जाता हूँ। (जाना चाहता है)

औरंग०—जनाब !

दिल०—ना, तुम मुझे न लौटा सकोगे। औरंगज़ेब, मैं जाता हूँ।

हाँ, एक बात कहे जाता हूँ। तुम सोचते हो, इस ज़िन्दगीकी बाज़ी तुमने जीत ली ?—नहीं, यह तुम्हारी जीत नहीं है औरंगज़ेब, यह तुम्हारी हार है। बड़े गुनाहकी बड़ी सज़ा होती है !—बर्बादी ! तनुज़्ज़ुली ! तुम जितनी तरक्की समझ रहे हो, सचमुच उतने ही नीचे गिरते जा रहे हो। उसके बाद, जब, यह ज़वानीका नशा उतर जायगा, जब धुँधली नजरसे देखोगे कि अपने और बहिश्तके बीचमें तुमने कैसा गढ़ा खोद रक्खा है, तब तुम उधर देखकर काँप उठोगे। याद रक्खो !

(औरंगज़ेब सिर झुकाए दूसरी तरफ़से जाता है)

छठा दृश्य

स्थान—आगरेका क़िला। शाही महलका बरामदा।

समय—तीसरा पहर

[जहानारा और जोहरत-उन्निसा बैठी बातें कर रही हैं]

जहा०—बेटी जोहरत-उन्निसा, औरंगज़ेब जैसा देखनेमें सीधा, हँस-मुख, मीठी छुरी, कमीना, आदमी तुमने और भी कहीं देखा है ?

जोहरत—ना। मुझे एक तरहका खौफ़ लगता है फूफी ! भीतर इतना बेरहम, बाहर इतना सीधा; भीतर इतना शहज़ोर, बाहर इतना बेचारा; भीतर इतना ज़हरीला और बाहर इतना मीठा !—यह भी मुमकिन है ? मुझे खौफ़ लगता है।

जहा०—लेकिन मेरे दिलमें उसके लिए एक तरहकी इज़्ज़तका ख्याल पैदा होता है। ताज़्ज़ुबसे सन्नाटेमें आ जाती हूँ कि आदमी इस तरह हँस सकता है, और साथ ही साथ खूनी शेरकी तरह लालचभरी निगाहसे देख भी सकता है,—ऐसी नर्मी और सहूलियतसे बातें कर सकता है जब कि साथ ही साथ उसके भीतर ही भीतर हसदकी आग सुलग रही है; खुदाके आगे इस तरह हाथ जोड़ सकता है जब कि साथ ही दिलमें कोई शैतनतका नया मन-सूबा गाँठ रहा होता है।—बलिहारी !

जोहरत— बाबा जानको इस तरह क़ैद कर रक्खा है, फिर भी सल्तनत-के कामोंमें उनकी राय माँग भेजता है ! उनके सामने ही एक एक करके उनके बेटोंका खून करता जाता है, फिर भी हर मर्तबा उनसे मुआफ़ी भी माँगा करता है ! जैसे बड़ी भारी शर्म, बड़ा भारी लिहाज़ है ! अज़ीब आदमी है ! वह लो, बाबा जान आ रहे हैं ।

[शाहजहाँका प्रवेश]

शाह०—देख, कैसा अपने आपको सजाया है मैंने । जहानारा, देख ! औरंगज़ेब कहीं इन जवाहरोंको चुरा न ले जाय, इसीसे मैं इन्हें पहने पहने घूमता हूँ । कैसा देख पड़ता हूँ ? (जोहरतसे) मुझसे शादी करनेका तेरा जी नहीं चाहता ?

जोहरत—फिर हवास जाता रहा । पागलपन बीच-बीचमें चाँदपर बादलकी तरह आ आकर चला जाता है ।

शाह०—(सहसा गंभीर होकर) लेकिन खबरदार, ब्याह न करना । (नीचे स्वरसे) लड़का होगा तो तुझे क़ैद रक्खेगा, तेरे ज़ेवर छीन लेगा । ब्याह न करना ।

जहा०—देखती हो बेटी, यह पागलपन नहीं है । इसके साथ होश-हवास भी है । यह गोया 'शायरीमें रोना' है ।

जोहरत—दुनियामें जितने पुरदर्द नज़्ज़ारे हैं, उनमें अक़्लमन्द पागलका ऐसा पुरदर्द नज़्ज़ारा शायद और नहीं है । एक खूबसूरत मूरत जैसे टूटकर बिखरी पड़ी हुई है ।—ओः बड़ा ही पुरदर्द है !

(आँखोंपर आँचल रखकर प्रस्थान)

शाह०—मैं पागल नहीं हुआ हूँ जहानारा, सँभालकर बातचीत कर सकता हूँ ।— कोशिश करनेसे अपना मतलब समझा सकता हूँ ।

जहा०—यह मैं जानती हूँ अब्बा जान !

शाह०—लेकिन मेरा दिल टूट गया है ! इतना बड़ा सदमा उठाकर भी जिन्दा हूँ, यही ताज्जुब है ! दारा, शुजा, मुराद, सबको मार डाला !—

और उनका कोई एक लड़का भी बदला लेनेके लिए नहीं रहा! सबको मार डाला।

[औरंगज़ेबका प्रवेश]

शाह०—यह कौन? (भय और विस्मयके भावसे) यह,—यह तो बादशाह है।

जहा०—(आश्चर्यसे) यह तो सचमुच ही औरंगज़ेब है!

औरंग०—अब्बा!

शाह०—मेरे हीरे-मोती लेने आया है? न दूँगा। अभी सबको लोहेकी मुँगरियोंसे चूर-चूर कर डालूँगा! (जाना चाहता है)

औरंग०—(सामने आकर) नहीं अब्बा, मैं हीरे-जवाहरात लेने नहीं आया।

जहा०—तो जान पड़ता है, बापको मारने आया है! अच्छा है, बापका खून ही क्यों बाक़ी रह जाय!—यह भी हो जाय।

शाह०—मारेगा—मेरा खून करेगा? कर औरंगजेब, मुझे क़त्ल कर! उसके बदलेमें ये सब जवाहरात मैं तुझे दूँगा;—और मरनेके वक्त तुझे इस मेहरबानीके लिए दुआ देकर मरूँगा। ले,—मेरी जान ले ले।

औरंग०—(एकाएक घुटने टेककर) मुझे इससे भी बढ़कर गुनहगार न बनाइए। अब्बा, मैं गुनहगार,—भारी गुनहगार हूँ। उसी गुनाहकी आगसे जलकर खाक हुआ जा रहा हूँ। देखिए अब्बा, यह ढीली देह, ये गढ़ोंमें धँसी हुई आँखें, ये सूखे ओठ, यह पीला और उतरा हुआ चेहरा; ये मेरी गवाही देंगे।

शाह०—दुबला हो गया है। सचमुच, दुबला हो गया है।

जहा०—औरंगज़ेब, दीबाचेकी (भूमिकाकी) ज़रूरत नहीं है! यहाँ एक ऐसा आदमी मौजूद है जो तुमको खूब जानता है। कहो, कौन-सा नया शैतनतका मनसूबा गाँठकर आये हो? कहो अब क्या चाहते हो?

औरंग—अब्बासे मुआफ़ी।

जहा०—मुआफ़ी! औरंगज़ेब, यह तो तुमने खूब नया ढँग, निकाला

औरंग०—मैं जानता हूँ, बहन, कि—

जहा०—चुप रहो।

शाह०—कहने दे, जहानारा। कहो, क्या कहना चाहते हो औरंगज़ेब?

औरंग०—और कुछ नहीं कहना चाहता, सिर्फ़ आपसे मुआफ़ी ाहता हूँ।—

जहानारा—(व्यंगकी हँसी हँसती है)

औरंग०—(एक बार जहानाराकी ओर देखकर शाहजहाँसे) अगर ारी इस इल्तिज़ाको जालसाजी समझें, तो अब्बाजान, आइए मेरे साथ, मैं ़सी दम महलका फाटक खोले देता हूँ और आपको आगरेके तख्तपर ाबके सामने बैठाकर बादशाह मानकर आपकी ताज़ीम करता हूँ। यह मैं ़पना ताज आपके पैरोंपर रक्खे देता हूँ।

(मुकुट उतारकर शाहजहाँके पैरोंपर रख देता है)

शाह०—मेरा दिल पसीजा जाता है।

औरंग०—मुझे मुआफ़ कीजिए अब्बा! (दोनों पैर पकड़ता है)

शाह०—बेटा! (औरंगज़ेबको उठाकर अपनी आँखें पोछता है)

जहा०—औरंगज़ेब, यह तुमने अच्छा तमाशा किया!

शाह०—बोल नहीं जहानारा,—मेरा बेटा मेरे पैर पकड़कर मुझसे ़ुआफ़ी माँग रहा है।—मैं क्या मुआफ़ी दिये बिना रह सकता हूँ? हायरे ापका कलेजा! इतनी देर तक तू क्या इसीके लिए आफ़त मचाये था! ाड़ी-भरमें सारा गुस्सा गलकर पानी हो गया!

औरंग०—आइए अब्बा, आपको फिर आगरेके तख्तपर बैठाऊँ और ़ुद मक्के शरीफ़ जाकर अपने गुनाहोंका कफ़्फ़ारा करनेकी कोशिश करूँ!

शाह०—ना, मैं अब फिर बादशाह होकर तख्तपर नहीं बैठना चाहता। ़रे दिन पूरे हो आये हैं।—इस सल्तनतको तुम भोगो बेटा;—हीरे, जवा-़ात और ताज तुम्हारे हैं—और मुआफ़ी!—औरंगज़ेब—औरंगज़ेब, नहीं ़न बातोंको इस वक्त याद न करूँगा। औरंगज़ेब, तेरे सब कुसूर मैंने मुआफ़

कर दिये। (आखें बन्द कर लेते हैं)

जहा०—अब्बा, दाराके खूनीको मुआफ़ी !

शाह०—चुप जहानारा ! इस वक्त मेरे आराममें खलल न डाल। उन्हें तो अब पा नहीं सकता—सात बरस सख्त तकलीफमें बिताये हैं, इतने दिनों तक भीतरी आगसे जलता रहा हूँ। रंजमें पागल हो गया हूँ। देखती तो है, एक दिन तो खुश हो लेने दे। तू भी औरंगज़ेबको मुआफ़ कर दे बेटी।—औरंगज़ेब जहानारासे मुआफ़ी माँगो।

औरंगज़ेब—मुझे मुआफ़ करो बहन !

जहा०—तुझमें मुआफ़ी माँगनेकी हिम्मत है ?,—अब्बाकी तरह मैं जईफ़ नहीं हुई। लुटेरोंके सरदार ! खूनी ! दगाबाज़ !

शाह०—जहानारा, यह भी तेरी ही तरह बे-माँका है,—तेरी ही तरह यतीम है ! मुआफ़ कर ! इसकी माँ अगर इस वक्त जिन्दा होती, तो वह क्या करती जहानारा ? अपनी औलादकी मुहब्बत इसकी माँ मेरे पास जमा कर गई है।—क्या जहानारा ! तू अब भी चुप है ? आँख उठाकर देख, शामके वक्त इस जमनाकी तरफ देख,—देख वह कैसी साफ़ है ! देख उस आसमानकी तरफ,—देख उसका रंग कैसा गहरा है ! देख इस चमनकी तरफ,—देख वह कैसा खूबसूरत है ! और देख यह पत्थर बने हुए मुहब्बतके आँसुओंका ढेर; यह जुदाईके सदमेकी हमेशा बनी रहनेवाली कहानी, यह खड़ा चुप, बेदाग, सफ़ेद महल। इस ताजमहलकी तरफ़ आँख उठाकर देख,—और यह सोचनेकी कोशिश कर कि तू इस दुनियाको जितना खराब समझती है वह उतनी खराब नहीं है,—जहानारा।

जहा०—औरंगज़ेब, यहाँ तुम्हारी पूरी तौरसे जीत हुई।—अपने इस जईफ और लबेज़ान बापके कहनेसे मैंने तुम्हें मुआफ़ कर दिया। (दोनों हाथों से मुँह ढक लेती है)

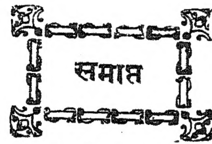
(बेगसे जोहरत उन्निसाका प्रवेश)

जोहरत—लेकिन मैंने मुआफ़ नहीं किया खूनी ! सारी दुनिया चाहे

तुझे मुआफ़ कर दे, पर मैं मुआफ़ नहीं करूँगी। मैं तुझे बद्दुआ देती हूँ,—गुस्सेसे भरी हुई नागिनकी तरह गर्म साँस लेकर मैं बद्दुआ देती हूँ। इस बद्दुआकी वहशतनाक परछाहीं जैसे एक खौफ़की तरह खाते-पीते सोते-जागते तेरे पीछे पीछे फिरे। सोतेमें उस बद्दुआका बोझ पहाड़की तरह तेरी छातीपर रक्खा रहे। उस बद्दुआकी खौफ़नाक आवाज़ तेरी खुशी और फतहयात्रीके बाजोंमें बेसुरी होकर गूँजती रहे। तूने मेरे बापका खून करके जो सल्तनत हासिल की है, मैं बद्दुआ देती हूँ कि तू बहुत दिनोंतक जी और सल्तनत कर।—वही सल्तनत तेरे लिए काल हो। वह तुझे एक गुनाह से दूसरे गहरे गुनाहके गढ़ेमें ढकलेती रहे। मरते वक्त तेरे इस जलते हुए सिरपर खुदाके रहमकी एक छींट न पड़े! (प्रस्थान)

(शाहजहाँ, औरंगज़ेब और जहानारा, तीनों सिर झुकाये चुप खड़े रहते हैं।)

[पर्दा गिरता है]



द्विजेन्द्रलालरायके नाटक

शाहजहाँ	(ऐतिहासिक)	१॥)
नूरजहाँ	”	१॥।)
चन्द्रगुप्त	”	१।)
मेवाड़-पतन	”	१=)
दुर्गादास	”	१॥)
भारत-रमणी	(सामाजिक)	१॥।)
सूमके घर धूम	”	।=)
सीता	(पौराणिक)	१।)

मिलनेका पता :—

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर
हीराबाग, बम्बई ४

